श्रीराम शर्मा 'राम'

उमेश प्रकाशन

प्रकाशक • उमेश प्रकाशन,
५, नाथ मार्केट, नई सड़क, दिल्ली

मुद्रक • राष्ट्रभाषा प्रिन्टर्स,
२७ शिवाश्रम, क्वीन्स रोड, दि

संस्करण • अक्तूबर १९६१

मेरा निवेदन

उपन्यास की रचना समाज और उसके व्यक्ति की कथा से होती है। रीति-नीति और मनोभावना को व्यक्त करना ही कथा-साहित्य का तात्पर्य और माध्यम है, जिसमे सामाजिक, नैतिक और मानसिक क्रान्ति का दिग्दर्शन सहज मे किया जा सकता है। इस प्रकार साहित्य के इस अंग का एक विशिष्ट महत्त्व है। यह लेखक के ज्ञान और अध्ययन पर निर्भर है कि वह अपनी कथा मे किस प्रकार के चरित्र-चित्रण उपस्थित करता है। निःसन्देह, कथा के पात्रों मे लेखक बोलता है, उसकी भावना बोलती है। यदि लेखक का हृदय उदार नही, उसका मानवीय पक्ष विस्तृत और अनुभूति-पूर्ण नही, समाज और सांस्कृतिक जीवन के प्रति भी उसकी आस्था नही, तो यह प्राय निश्चित है कि उस लेखक द्वारा लिखी गई कथा की आत्मा प्रेरणामयी और जीवनयापिनी नही होगी; उसमे कोई अदृश्य कला हो तो हो, जीवन की ज्योति नही होगी।

प्रस्तुत रचना इसी दृष्टिकोण पर आधारित है। कला की बारीकी और मानवीय भावनाओ का सूक्ष्मतर विवेचन, भले ही पाठक को इस रचना मे न दीख पड़े, परन्तु युग-युगो मे यह मानव जिस अभिव्यक्ति और चेतना मे पूरित बनकर, अपने इतिहास का निर्माण कर सका है, उसकी उन लीलाओ की पुनरावृत्ति इस उपन्यास मे अवश्य दिखाई देगी। इस धरती पर चलने वाला इन्सान जिस आस्था मे अपने को लगाता है, आदि-पुरुष के समान, समर्पण का भाव प्रदर्शित करता है, उन्ही सब मान्यताओं में से एक-दो का चित्रण इस उपन्यास की कथा में किया गया है। अपने जीवन मे लेखक ने जो कुछ समझा, देखा, उसीको लेकर हिन्दी पाठक के सम्मुख उपस्थित हो गया है। एक व्यक्ति के रूप म जसा कुछ जनता-जनार्दन से प्राप्त हुआ, वही उसके चरणो मे अर्पित कर दिया गया।

देर से, कदाचित् आदि काल से ही, मनुष्य के जीवन मे नारी का स्थान रहा है। वह आदमी का जीवन सवारती है, पखारती है,

प्रेरणा प्रदान करती है। परन्तु वही नारी जब स्वय अपने अस्तित्व को खो बैठे, तो तब, शून्य से अधिक वह कुछ नही रह जाती। यही प्रस्तुत कथा की परिणति है।

उमेश प्रकाशन के सयोजक मेरी इस पुस्तक को अपने पाठको के समक्ष रखने को प्रस्तुत हुए, इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

ए० १७१, किदवई नगर,
नई दिल्ली-३

श्रीराम शर्मा 'राम'

एक

शार्दूल के समान, दौडता हुआ जयन्त उस द्वार पर पहुँचा और सामने बिछी चारपाई को लक्ष्य कर, धीर भाव मे बोला, "मैं तुझे मरने नही दूंगा, अजना !"

अजना चारपाई पर पडी थी। उसने सिर से पाँव तक चादर ओढ रखी थी। नीचे धरती पर उसकी वृद्धा माँ और पिता बैठे थे। माँ धरती की ओर निहार रही थी और पिता का मुँह ऊपर आकाश की ओर उठा हुआ था। वह वृद्ध जैसे अपनी बूढी आँखो से नियति के उस विषम और रहस्य-भरे व्यापार को समझ लेना चाहता था कि जिसे वह अब तक अपनी बुद्धि के स्तर पर नही उतार पाया था। निस्सन्देह, वह अज्ञात पथिक के समान जीवन-पथ पर भटक गया था। किन्तु जब जयन्त वहाँ पहुँचा, उसका स्वर सुना, तो बलात् दोनो का मुँह उसकी ओर उठ गया। गाँव के पण्डित के लडके को समझ लेना उस क्षण उन्हे भी आवश्यक प्रतीत हुआ। किन्तु वृद्ध कुछ कहे, उससे पूर्व ही, अंजना ने अपना मुँह खोल दिया और पास आये जयन्त की ओर देखकर निरे आहत हुए स्वर मे कहा, "मेरा मरना अशुभ नही होगा, जयन्त बाबू ! धरती का बोझ हल्का होगा। मेरे माँ-बाप को भी "

जयन्त ने कहा, "नही, नही, मरना किसी का शुभ नही।" वह बोला, "सुनती हो, इस धरती पर जो भी प्राणी आता है, वह नियति का प्रसाद है, भगवान की भावना से पूर्ण। सो, ऐसी ही एक तू है ! सच, अजना ! तेरे मानस मे भी भगवान है, भावना है।"

अजना ने बात सुनी और ठण्डी साँस के साथ अपनी आँखे नीचे धरती पर बैठे अपने माता-पिता पर टिका दी। उसकी आँखो मे कातर याचना थी और उनका दु.खी जीवन मानो सम्मिश्रण की गगा-यमुना उस धरती पर आ टिकी हो।

कल इसका ब्याह भी करना है, पण्डितजी ! इसे दूसरे घर जाना है।"

उस समय जयन्त का मुँह ऊपर आकाश की ओर उठा हुआ था। चेता की बात सुनी तो उसने पूर्ववत् अवस्था मे साँस छोडकर कहा, "इस हीन भावना ने तुम्हे ऊपर नहीं उठने दिया। सदा कायर बनाये रखा।" वह झटका-सा खाकर चेता की ओर देखकर बोला, "चौधरी चेतराम, इस धरती पर अधिकार दिया नही जाता, लिया जाता है। तुम्हारे ऐसे विचार रहे, तो निश्चय ही, तुम्हे जीवन का सूर्य नही दिखाई देगा। मैने जब सुना कि तुम्हारी अजना एकाएक बीमार पडी है, बेहोश है तो दौडा आया। पर मेरे कारण तुम लोक-चर्चा का विषय बनो, यह मै भी पसन्द नही करूँगा। अब नही आऊँगा," यह कहते हुए जयन्त लौट पडा।

यह देख अजना ने एकाएक आतुर बनकर पुकारा, "जयन्तजी, जयन्त बाबू ·"

किन्तु जयन्त रुका नही, वह चला गया।

यह देख, जैसे मर्माहत बनकर अजना ने पिता की ओर देखकर कहा, "बापू, कुछ सोचकर तो बोला करो ! साधु-स्वभाव सरीखे जयन्त बाबू से तुम्हे ऐसे नही कहना था इतना कठोर नही "

चेता ने कहा, "बेटी, यह बात कहनी ही थी। आज की तरह वह कभी भी कटु लग सकती थी।"

माँ ने कहा, "बेटी, तू लडकी की जात है, जिस धरती पर चलती है उस पर अगारे बिछे है। देख-बूझकर ही जिन्दगी के दिन पूरे करने पडते है।"

अजना ने कहा, "माँ, मै ऐसा नही मानती। यह तो सभी के लिए है। इस धरती पर जो निर्धन, हीन और कायर है, वह सब यही समझते है। जयन्त बाबू ने मुझे एक दिन बताया था कि जाति की हीनता के कारण लोग स्वतः ही अन्धकार की ओर बढे जाते हैं।"

माँ ने कहा, "बेटी, तू अभी अज्ञान है। ये बडी कौम वाले कितने शैतान है, भला इसे तू ·"

चेता ने कहा, "मगलू की लड़की का छह मास तक पता नही चला था।

और जब सुराग मिला, तो उसका बाप लडकी की ठण्डी लाश ही पा सका था।"

अजना ने कहा, "बापू, पाप की बात मत सोचो। अन्धेरे की ओर मत देखो। प्रकाश को लक्ष्य करो। अपने को हीन मत मानो।"

चेता ने कहा, "बेटी, अब मै बूढा हूँ, दुर्बल हूँ।"

माँ ने कहा, "अजना, अब हमारा साथ ही कितने दिन का है! तुझे अपने पैरो पर ही जिन्दगी का रास्ता पार करना है।"

अजना ने बात सुनी तो अपनी राय जाहिर नही की। उसके मन मे केवल एक बात थी कि वह अवसर पाये, तो जयन्त बाबू के पैरो मे जा पडे और क्षमा माँगकर कहे, मेरे बापू ने जो कुछ कहा उसका ध्यान न करना। किन्तु इतना करने मे भी वह अशक्त थी। उसका दिल पहिले से अधिक धडकने लगा था। उसकी आँखे स्वत ही अन्धेरे से आच्छन्न हो गई थी।

गाँव के पण्डित ज्ञाननाथजी का जयन्तकुमार इकलौता पुत्र था। जिसको योग्य बनाने के लिए पण्डितजी ने शक्ति से अधिक पैसा व्यय किया। वह कुलीन परिवार का सम्भ्रान्त व्यक्ति बने, यही उनका ध्येय था। डाक्टरी परीक्षा का अन्तिम चरण पूरा करके जयन्त घर आ गया था। परीक्षा-फल अभी नही निकला था। उसे भरोसा था कि वह पास हो जाएगा। फलस्वरूप, गाँव मे आते ही उसने दो कार्य आरम्भ किये, एक वयस्कों को पढाना और दूसरा लोगो का रोगोपचार करना। गाँव मे ही जयन्त ने एक छोटा-सा दवाखाना खोल लिया था जहाँ प्रायः सभी को नि शुल्क दवा दी जाती। अवस्था यह थी कि वह बीमार को दवा तो नि शुल्क देता ही, यदि व्यय के लिए रोगी के पास पैसा न होता, तो वह भी देने का प्रयत्न करता था। इस बात पर पिता-पुत्र मे मतभेद था। जयन्त के पिता पण्डित

ज्ञाननाथ पुत्र की इस परम्परा को देख प्राय झल्लाते और पत्नी तथा पुत्र को सुनाते, पुत्र यदि ऐसा दानी रहा, तो घर मे कुछ नही रहेगा रोटियो का भी अभाव हो जाएगा...

अनेक बार जयन्त की माँ कल्याणी पुत्र को समझाती। वह पुत्र के मन की उस परम्परा को रोकने का प्रयत्न करती। लेकिन उसी समय, उस परिवार के विवाद का प्रमुख विषय बन गई, वह अजना! वह गाव के चेता चमार की लडकी थी। कुछ वयस्क लडकियो के साथ जब वह प्रथम दिन जयन्त के पास किताब के पहले शब्दो का पाठ लेने आई, तो तभी, जयन्त ने उसका नाम जानना चाहा। अजना ने बताया, अगूरी, जिसे सुन जयन्त ने तुरन्त कहा, नही नही तुम्हारा नाम अजना है और कुछ नही। लेकिन, उस प्रथम साक्षात्कार मे, जयन्त को उस अजना मे जो अलौकिक प्रतिभा और माधुर्य की छाया दिखाई दी, नि.सदेह वह उसे अन्यत्र नही दिखाई दी। यद्यपि वह अभी तक किसी युवती के सम्पर्क मे नही आया था, परन्तु नगर के जीवन मे रहते हुए उसने अनेक वर्ष कालेज के पठन-पाठन मे बिताये, तो वहाँ की छात्राओ को देख, वह सहज ही इस बात की तुलना करने मे समर्थ था कि यह अजना उन सभी मे श्रेष्ठ है, सरल है, मन की साफ और भावनामयी है। उस प्रथम मिलन मे, अजना के बदन पर अच्छे और साफ वस्त्र नही थे, परन्तु उसके कौमार्य की वह अपूर्व शोभा, यौवन का तेज, निश्चय ही यह कहने मे समर्थ था कि मेरा भी अस्तित्व है, एक महत्व है। किन्तु घूरे पर पड़े मोती के समान जब वह किसी की भी दृष्टि मे नही आया, तो जैसे वह अपने-आप ही मलिन बनता जा रहा था। अंजना का मन स्वत. ही अपनी गरीबी और हीनता के कारण अस्तित्व-हीन होने लगा था। उसमे उत्साह नही था। जैसे जीवन के प्रति अनुराग ही न हो। उसने बरबस ही अपने को पत्थर मान लिया था।

लेकिन उस दिन जब जयन्त दिन के खुले प्रकाश मे अजना के घर जाकर लौटा, तो अभी वह घर आकर अपने कमरे मे चारपाई पर पडा ही था कि माँ उसके पास आई और बोली, "तू कहाँ गया था, जयन्त! क्या उस चमार की लडकी अजना के घर?"

बात सुनी तो चकित भाव मे जयन्त ने माँ की ओर देखा। उसी

अवस्था मे उसने कहा, "हाँ, गया तो था माँ !" उसे यह अच्छा नही लगा कि माँ ने उस अजना को 'चमार की लडकी' से क्यो सम्बोधित किया।

किन्तु माँ अपने पुत्र से ऐसा साफ और रूखा उत्तर सुनने के लिए तत्पर नही थी। उसे ऐसी आशा भी नही थी। उसके मन मे बात थी कि शायद यह जयन्त उससे अजना के पास जाने की बात छुपा लेगा। लेकिन जब उसने ऐसा नही किया तो माँ ने तुरन्त ही कहा, "बेटा, तू अपने घर की प्रतिष्ठा नही देखता। अभी एक आदमी आया और तेरे पिताजी को बता गया कि तू उस चमार के घर गया था। बोल तो, क्या यह तेरे लिए शोभनीय था?"

बात सुनते ही जयन्त झल्ला उठा, "तो इसमे हुआ क्या, माँ ! मैंने कौन सा पाप किया है ! अजना अब मेरे लिए अपरिचित नही है, पढने आती है। सामाजिक रूप से वह मुझसे आत्मीय सम्बन्ध बना चुकी है। सुना कि वह खेत पर काम करते हुए बेहोश हो गई, उसे उल्टी भी आई, सो, मुझे जाना ही था।"

फिर भी उस नारी ने अपने मन का रोष प्रगट नही किया। क्योकि जवान लडका था, नये युग का प्रतीक, इसलिए उसने नीतियुक्त बनकर कहा, "बेटा, गाँव मे सौ दोस्त है, सौ दुश्मन। अब तू पढकर गाँव मे आ गया है तो लोग जलते है, कुढते है। लोग चर्चा करते है कि पण्डितजी का लडका उस चमार की लडकी · "

एकाएक चारपाई से खडे होते हुए जैसे चीखकर जयन्त बोला, "माँ, गाँव के आदमी मूर्ख है, बेहूदे हैं !"

किन्तु माँ ने अपने उस उद्धत बने और क्रोध मे आये पुत्र की बात पर ध्यान नही दिया। उसने जयन्त की अन्तिम बात लेकर स्वय रोष प्रगट किया, "तू चार अक्षर पढ गया है न, तो ऐसा सोचता है। और यह नही जानता कि गाँव के लोग भी आदमी की भलाई-बुराई की बात समझते हैं। यहाँ के लोग पत्थर नही है, पाप-पुण्य को मानते है। तू समझता है, शहरो मे ही बुद्धिमान रहते हैं। यह न भूल, गाँवो से ही शहराती रोटी पाते हैं···तन का कपडा "

लेकिन जयन्त माँ की बात सुनने के लिए वहाँ खडा नही रहा। वह

बाहर चल दिया। सचमुच, उसके मन मे रोष था, प्राणो मे कम्पन। मकान के दूसरे पार्श्व मे उसका दवाखाना था, वह वही पहुँच गया। उस समय दिन ढल रहा था। धूप तेज थी। धरती गरम तवे के समान जल रही थी। उन दिनो देर से किसान आशामयी दृष्टि से आसमान की ओर ताक रहे थे, किन्तु वर्षा के आसार नही दीख रहे थे। कभी-कभी बादल आते भी तो चले जाते। जब जयन्त अपने दवाखाने मे आकर बैठा तो वह चाहता था कि वहाँ अकेला रहे। वह समाज और व्यक्ति की हीनता पर खुले दिमाग से सोचना चाहता था। परन्तु उसी समय पडोसी मलखान वहाँ आया और जयन्त को कुर्सी पर बैठा देख ऊपर आसमान को लक्ष्य करता हुआ एकाएक बोला, "बाबू, आज लगता है कि पानी आयेगा। वह देखो, दूर पश्चिम मे एक काली बदरिया उठी है, वह बढती आ रही है। आज गर्मी तेज है। हवा भी बन्द है।"

जयन्त ने बात सुनी तो मौन बना रहा। वह अपनी राय नही दे सका। मानो आसमान से उसका कोई सम्बन्ध नही। वह धरती का है, उसीसे सम्बन्ध है। और धरती का आदमी त्रस्त है, दु खी है, इसलिए कि आदमी ही आदमी का शत्रु हाँ, कितने हथियारो से आदमी की हत्या की जाती है·· जाति का हथियार धर्म और पैसे का हथियार वह बेचारा चेता, वह उसकी बेटी अजना ··

किन्तु वह जवान, अल्हड और विनोदी स्वभाव का मलखान जयन्त को मौन और गम्भीर देख, फिर बोला, "क्यो, कोई बात है, मन में ?" उसने हाथ मे ली हुई लाठी का कोदा धरती पर मारा और कहने लगा, "ज़रूर तुम्हारे मन मे भी वही बात है, जो मेरे मन मे है। चौपाल मे चली हुई बात तुम्हारे तक न आई हो, भला क्या बात। पर कहे देता हूँ ऐसे लोग कीडे है, सड़े हुए नाबदान के! कोई भला काम करे, तो लोग उसमे भी बदबू पाते हैं निरे पाप के पुतले!"

किन्तु आश्चर्य, जयन्त तब भी चुपचाप बैठा रहा। वह बाहर खुले आकाश मे उठते हुए रुई के समान आते-जाते बादलो को देखने लगा।

मलखान बोला, "भैया जयन्त, तुम ठीक कहते हो, यह मनुष्य दूसरों का पाप ही देखना चाहता है, पुण्य नही। सचमुच, सडाँद मे पडा कीडा

दुर्गन्ध ही अनुभव करता है।"

एकाएक जयन्त ने कहा, "तो बात क्या इसमे आश्चर्य का विषय क्या रे, मलखान ! कुत्ते भौकते है और हाथी चला जाता है। हमारे समाज की यही परम्परा है।"

मलखान ने कहा, "हमारे गाँव के लोग नासमझ हे। ईर्षालु है। चार आदमी जहाँ बैठे तो दूसरे की बुराई करते है। पर गाँव के आदमी तुम्हे भी कुछ कहेगे, मैं ऐसा नही समझता था। अब तो देखता हूँ कि तुम्हारे चरित्र पर भी "

आतुर स्वर मे जयन्त ने कहा, "यह स्वाभाविक है, समाज समझता है कि अमुक व्यक्ति उसकी जमात का है। उस पर अपना अधिकार मानता है। व्यक्ति-विशेष को अपना कहने का अधिकार रखता है। गाँव का आदमी मुझे कुछ कहे तो मैं आपत्ति नही करता, लेकिन लोग जिस क्षुद्रता का प्रदर्शन करते है, उसे देखकर तो "

मलखान ने कहा, "यही दुर्गुण है, भैया ! हमारे जीवन का यही पाप है।"

जयन्त ने बात सुनी तो तीखे भाव से मुस्करा दिया। वह प्रस्तुत बात-चीत से छूटना चाहता था। क्योकि जो क्षोभ उसके मानस में था, वह बाहर न आये, यही उसे रुचिकर था। लेकिन मलखान जैसे बहुत कुछ कहने और सुनने आया था, इसलिए जयन्त की ओर ध्यान न देकर बोला, "भैया, हमारा समाज पगडी उछालता है। इसी बात पर तो आज जगधर मेहतो से मेरा झगडा हो जाता। उसने दस आदमियो के बीच मे कहा कि पण्डित का लडका जयन्त उस चमार की लडकी अजना से "

मानो चचल बनकर जयन्त ने उसकी बात रोक दी और कहा, "हाँ, हाँ, यह कोई नई बात नही रे, मलखान ! ऐसा भी कहा जाता है, सुना जाता है, देखा जाता है, बस !"

लेकिन इतनी देर मे तो मलखान के चेहरे पर रोष झलक आया। वह क्षुब्ध बनकर बोला, "नही, नही, यह सब झूठ है, किसी और की बात हो तो मान ली जाए पर तुम्हारी नही। बोलो, मैंने क्या तुम्हे समझा-बूझा नही ?"

सहज भाव से जयन्त ने कहा, "सभी के समान, तुम्हारा भी भ्रम हो सकता है।"

अपने स्वर पर जोर देकर मलखान ने कहा, "मै उस जगधर मेहतो को पहचानता हूँ। वह बडा ईर्षालु है। गाँव की धरती मे विष के बीज बोता है। अब समझता है न कि पण्डितजी का लडका सब ओर प्रतिष्ठा पाता है, गाँव के लडको मे सबसे अधिक पढा-लिखा है, तो यही ·"

जयन्त बोला, "नही मलखान, जगधर मेहतो भी अच्छा आदमी है। उसने बात सुनी, तो कह दी। ऐसे ही कहा जाता हे। इस समाज ने यही सीखा है।"

मलखान बोला, "ऐसे तो गाँव मे कोई भी सुधार का काम नही होगा। जब आज तक लोगो की बुद्धि पर पर्दा पडा रहा तो आगे भी पडा रहेगा।"

सुनकर जयन्त ने साँस भरी और अपना मुँह फिर आकाश की ओर उठा दिया।

उसी समय मलखान कहने लगा, "जयन्त भैया, मै अनपढ तो हूँ परन्तु इस ससार मे क्या कुछ होता है, उसे समझ पाता हूँ। उस दिन जब मै खेत पर पानी दे रहा था, तो तभी, चीख सुनी तो दूर पर देखा कि एक साँप मेढक को मुँह मे दबाये हुए था। मेढक चीख रहा था। उस समय मेरे मन मे तो आया कि हाथ मे लिया हुआ फावडा उस साँप पर दे मारूँ, पर तभी मन में बात आई, इस धरती पर सभी साँप हैं, काटते है, फुँफकारते हैं।"

जयन्त ने कहा, "मलखान भाई, मनुष्य इसी प्रकार अपनी बुद्धि का उपयोग करता है। कही साँप बनता है, और कही देवता।"

मलखान बोला, "नही, साँप ही बनता है, यह आदमी!"

जयन्त सूखे भाव से मुस्करा दिया, "हाँ, शायद ऐसा ही है!"

मलखान ने कहा, "चेता चमार अपनी बिरादरी मे गरीब जरूर है परन्तु सभी का सम्मान पाता है। ईमानदार समझा जाता है।"

जयन्त ने कहा, "सदा के समान आज भी ताँबे और सोने में अन्तर करना ही होगा। सत्य क्या छिप सकेगा?"

मलखान बोला, "अनपढ और गँवार आदमी वह चेतराम ऊँची बात

करता है । भक्ति के भजन गाता है । नीतियाँ बताता है ।"

उसी समय जयन्त के मन मे बात आई कि रात-दिन वह चेता को नग्न-प्राय देख एक दिन उसे चादर देने लगा था, किन्तु उसने नही ली थी और कह दिया था कि किसी ओर को दे देना, मेरा गुजारा होता है, जिन्दगी का रास्ता कटता है। तभी जयन्त ने सहज ही अनुभव किया कि यह चेतराम जो ऊपर से निर्धन और दीन दिखाई देता है, मन से अमीर है, यह कोई अभाव अनुभव नही करता । यह सुखी है । अतएव, जब मलखान ने अपनी बात कही तो वह बोला, "निस्सन्देह, उस वृद्ध चेतराम मे कुछ अलौकिक गुण है । वे अभूतपूर्व है । वह ऊपर से गरीब भले ही हो, पर मन से अमीर है ।"

मलखान बोला, "एक दिन चेतराम ने मुझसे कहा था कि इस ससार मे जो दुःख हे, पीडा है, वह अपने मन से उपजती है, बाहर से नही । मनुष्य का शत्रु उसका मन हे, कोई और नही ।"

जयन्त ने कहा, "बूढा ज्ञानवान है । उसका अन्तर्मन प्रकाश से आलोकित है । धैर्य और शीलता चेतराम के प्रधान गुण है ।"

उसी समय एक बालिका दौडी हुई वहाँ आई और बोली, "मेरी माँ को तेज बुखार है । कराह रही है ।"

जयन्त उस बालिका को नही जानता था । किन्तु मलखान ने बताया कि यह तो जगधर मेहतो की लडकी है । उसने जयन्त की ओर देखकर कहा, "तो जाओगे, उसके घर ?"

जयन्त खडा हो गया और बोला, "हाँ, हाँ, क्यो नही ! जब मै रोग का उपचार करता हूं तो मुझे रोगी के पास जाना ही चाहिए ।"

मलखान ने कहा, "किन्तु वह जगधर तो "

जयन्त ने बीच मे मलखान की बात रोक दी और कहा, "न, न, ऐसी बात मत कहो, मलखानसिह !" उसने लडकी से पूछा, "तेरी माँ को उल्टी तो नही हुई ?"

लडकी ने कहा, "उल्टी हुई है ।"

जयन्त बोला, "रात की बासी रोटी खाई होगी, धूप मे गई होगी, नादान !"

मलखान बोला, "भैया, रात की बासी रोटी भी मिल जाये तो गनीमत है। मै जानता हूँ, मेहतो की हालत अच्छी नही है।"

जयन्त ने कुछ दवा जेब मे डाल ली और बोला, "सभी की यही अवस्था है। यह कगाल देश है। इस धरती का इन्सान दुर्बल है, पीडित है। इसे दया चाहिए, इन्सान की ममता।"

मलखान ने कहा, "पर यह कोई नही मानता। साँप के समान उसे दूध दो, तो बदले मे काटता है। हाँ, भैया, इन्सान जहरीला है, जानवर है।"

जयन्त ने बात सुनी तो कडवेभाव से मुस्कराया। वह लडकी के साथ चल दिया। मलखान भी अपने घर को मुड गया। जाते-जाते उसने कहा, "भैया जयन्त, मुझे तुम्हारी यही बात अच्छी लगती है। तुम्हारा दुश्मन भी मित्र है।"

जयन्त ने बात सुनी तो हँसकर आगे बढ गया। कुछ देर मे वह जगधर मेहतो के घर पहुँच गया। देखा कि जगधर बीमार पत्नी के पास बैठा है। वह उदास है। उसकी बडी लडकी और लडका भी माँ के पास खडे है।

तभी बीमार की नब्ज और छाती देखकर जयन्त ने उसके ऊपर पडा कपडा हटवा दिया और कहा, "बुखार की गर्मी मे इतने कपडे की जरूरत नही। उसने दवाई दी और कहा, बुखार तेज है, चिन्ता की कोई बात नही, शाम तक उतर जायेगा।"

किन्तु जगधर तब भी सिर झुकाये बैठा था। वह जसे मन में कुछ लिए था। यह देख जयन्त बोला, "मेहतो, तुम उदास हो। उठो, जाओ बाहर बैठो। यह दवा लो। शाम को बताना। मैं फिर आऊँगा।"

जगधर ने कहा, "भैया, इस दवा का पैसा ?"

"ओह, तुम भी अजीब आदमी हो, जगधर मेहतो! मै गाँव का हूँ, तुम्हारी भी गोद मे खेला हूँ, तो क्या दवा के पैसे लेकर मै शोभा पाऊँगा। और जानते हो कि मैं किसी से कुछ नही लेता।"

उसी समय कराहकर जगधर की पत्नी ने कहा, "बेटा, तेरा राम भला करेगा।"

जयन्त ने कहा, "हाँ, ताई। मुझे तुम्हारा आशीष चाहिए। मेरे लिए

यही सबसे बडा धन है। मुझे जगधर मेहतो का आशीर्वाद चाहिए। वह मेरे ताऊ है, बुजुर्ग है। तुम्हारी सेवा करना मेरा धर्म है।"

मेहतो ने कहा, "जयन्त भैया, मै गँवार हूँ, जानवर हूँ। मैं भला किस योग्य हूँ।"

कठिन स्वर से जयन्त बोला, "नही, नही, तुम समर्थ हो। तुम्हारे हृदय मे भी भगवान बोलता है। वह पाप-पुण्य को समझता है।" यह कहते हुए जयन्त ने मेहतो की बडी लडकी को देखा और कहा, "अच्छा, यह पारो, अरे, अब तो यह बडी हो गई। बुजुर्ग बन गई। कभी हम दोनो साथ खेलते थे। आपस मे लडते थे।"

पारो ने कहा, "हाँ, जयन्त भैया, हम साथ खेलते थे। तालाब पर मिट्टी के घरोदे बनाते थे।"

मेहतो ने कहा, "जयन्त भैया, यह पारो अगर बच्ची होती, तो ठीक था। या भगवान ही इसे उठा लेता, तो शुभ था। इसने औरत की ज़िन्दगी क्या पाई, इसका सभी कुछ नष्ट हो गया। वर्ष भर हुआ कि यह विधवा · "

"अरे, ऐसा हो गया, इस पारो के साथ ! राम-राम।" तभी जयन्त ने देखा कि उस पारो के हाथ सूने है। उनमे काँच की चूडियाँ नही है।

मेहतो ने कहा, "भैया, यह पारो जिन्दगी की भरी दोपहरी मे तो लुटी ही, इसके ससुराल वाले भी इसे डायन समझने लगे। वह कहते है, पारो शुभ नही है। इसी ने हमारा लडका डस लिया है। अब वह इसे अपने घर रखने के लिए भी तैयार नही है।"

उसी समय पारो की माँ ने कहा, "मुझे पानी दो। यह पसीना "

जयन्त ने कहा, "पसीना पोछ दो। अब बुखार उतर जायेगा।" उसने साँस भरी और कहा, "भगवान ने इस पारो के साथ अच्छा नही किया। इसका तो जीवन बिगड गया।"

मेहतो ने कहा, "जाने किस जन्म का फल भोग रही है, यह पारो।"

जयन्त लौट पडा। उस मकान से निकल वह तेज़ी के साथ चलने लगा और जब वह अपने स्थान पर पहुँचा, तो देखा, वहाँ देर से अजना का पिता चेतराम बैठा हुआ था। वह उदास और उनमन बना हुआ था। उसे देखते ही जयन्त उसकी ओर बढ गया।

तीन

पण्डित ज्ञाननाथ और उसकी पत्नी कल्याणी के समक्ष उन दिनो केवल एक ही समस्या थी जो कि उन्हे रात-दिन परेशान करती। वह पुत्र का विवाह करना चाहते थे। यद्यपि पण्डितजी विवाह के विषय मे अपना अलग मत रखते थे। वह विवाह को गौण मानते थे। परन्तु कल्याणी का विचार था कि लडका जवान हो गया है, अब पढ-लिख भी गया है, इसलिए विवाह होना चाहिए। इस विषय मे उसका एक निजी स्वार्थ भी था। वह अब वृद्ध हो चली थी। पुत्र की बहू आये, घर सम्भाले यही उसकी आकाक्षा थी। पडोस मे नन्दी की माँ जब अपने पोते को लेकर कल्याणी के पास आकर बैठती तो उस फूल सरीखे खिलते बच्चे को देख, बरबस ही, उसके मन मे बात पैदा होती कि क्या ही अच्छा होता कि वह भी अपना पोता खिलाती। उसे गोद मे लेकर बैठती और अपना मन बहलाती।

किन्तु समस्या यह थी कि लडकीवाले आते, पण्डित ज्ञाननाथ से बात करते और लौट जाते। कदाचित् इसका एक कारण तो यह था कि पण्डितजी अपने पुत्र का सम्बन्ध जिस प्रकार के घर मे करना चाहते थे वह नही मिल रहा था। उनकी आकाक्षा थी कि जब उन्होने अपने जीवन-भर की कमाई पुत्र को पढाने और योग्य बनाने मे लगा दी है, तो वह राशि पुत्र के विवाह मे प्राप्त होनी चाहिए। उनके विचार मे जयन्त की बहू सुशील, सुशिक्षित और सुन्दर तो हो ही, किसी बडे घर की भी होनी चाहिए। किन्तु इन गुणो के साथ पण्डितजी को पैसा भी चाहिए और दहेज भी चाहिए। लेकिन ऐसा सयोग मिल नही रहा था। फलस्वरूप, सर्वगुणसम्पन्न बहू को प्राप्त करना सुगम नही हो रहा था।

लेकिन उस दिन जब गाँव के चेता चमार के घर जयन्त के जाने की बात गाँव मे फैली, वह चर्चा पण्डितजी और कल्याणी के कानो मे भी पडी, तो तब निश्चय ही, पण्डितजी का मन चिन्ता से व्यग्र हो उठा कि लडके का विवाह कर ही देना चाहिए। सदा की भाँति यह बात उस दिन भी स्वय कल्याणी ने उठाई। उसने कहा, "तुम जिस रुपये-पैसे और दहेज की बात लेते

हो, वह तुम्हे नही मिलेगा। पैसेवाला कगाल, भिखारी के घर मे अपनी लडकी नही देगा। उसने पण्डितजी के मर्मस्थल पर चोट की, "अपनी आदत के अनुसार यहाँ भी लालच करोगे, तो घर बिगड जाएगा। पुरखो की प्रतिष्ठा जाएगी यह पाला-पोसा लडका"

बात पण्डितजी को चुभ गई। जैसे उनके सम्मान पर चोट की गई हो। तुरन्त ही उनकी भवे तन गई, माथे मे बल पड गये। तभी उन्होने अपनी बात कही, "कल्याणी, इस जयन्त को योग्य बनाने के लिए मैंने सभी-कुछ किया है। भगवान से भी यही प्रार्थना की। इस पर भी लडका कुमार्गी बने तो मै कुछ नही कर सकूंगा। मैं उसे त्याग दूंगा। मैं ब्राह्मण हूं, लडके के लिए चमार से सम्बन्ध नही करूँगा।" वह बोले, "मै यह भी समझता हूँ कि गरीब घर की लडकी योग्य नही होगी और न सुशिक्षित ही।"

कल्याणी बोली, "घर के लिए बहू चाहिए, किसी दफ्तर मे जाकर क्लर्की करने वाली नही।"

इतनी बात सुनी तो पण्डित ज्ञाननाथ चिढ गये। वह बोले, "तुम्हे इतनी समझ नही। पढी-लिखी होती तो जानती कि आज के युग मे इसकी क्या विशेषता है। और तो और, तुम्हारा लडका भी ऐसी लडकी पसन्द नही करेगा। उसे भी योग्य पत्नी चाहिए, घर मे घूंघट काढकर बैठने वाली गुडिया नही।"

कल्याणी ने कहा, "मैं अपने जयन्त को जानती हूँ। मैंने उसे पैदा किया है, उसे समझती हूँ।"

इतनी बात सुनकर पण्डित ज्ञाननाथ सूखे भाव से हँस दिये। बोल नही पाये। यह स्पष्ट था कि वह पत्नी की बात से सहमत नही हुए।

किन्तु कल्याणी ने फिर तीर छोडा, "मैं जानती हूँ, तुम्हे पैसा चाहिए।"

रुक्षभाव से पण्डितजी ने कहा, "यह आकाक्षा निरर्थक नही है, सारवान है। जयन्त को अब डाक्टरी की दुकान करनी है। जितनी बडी और सजी हुई दुकान होगी, वैसे ही ग्राहक आकर्षित होगे। और इसके लिए पैसा चाहिए, इस दुनिया मे जीवन बिताने और प्रतिष्ठा के हेतु धनरूपी सम्बल चाहिए, कल्याणी!"

इतना सुन-पाकर कल्याणी बरबस चिढ गई। वह बोली, "तो तुमने लड़के को इसीलिए पढाया कि दूसरे के लिए बोझ बने ! दूसरे के पैसे पर अपनी जिन्दगी चलाये ' राम-राम ! यही पढा है तुमने अपनी धर्म-पुस्तको मे ! इस पण्डिताई मे यही समझा है ! सुनो, मैं कहे देती हूँ, लडका अपने पैरो पर चला है और चलेगा। किसी बडे घर की बेटी से विवाह करके उसका दास नही बनेगा। डाक्टरी करे या फकीरगीरी, सब-कुछ अपनी शक्ति पर कर सकेगा। मेरा लडका किसी पैसे वाले की लडकी का गुलाम नही बनेगा।"

बात सुनते ही पण्डित ज्ञाननाथ ने निर्मम और कठोर भाव से पत्नी की ओर देखा। जैसे उन्होने सहज ही समझ लिया कि यह कल्याणी माँ तो बन गई परन्तु उसके योग्य नहीं। और वही उनको मूर्ख बताती है, उनके विचार और जीवन को व्यर्थ कहती है। इतना समझ उन्होने चाहा कि कल्याणी से कह दे कि तुम मॉ तो बनी पर उसकी वास्तविक स्थिति नहीं पहचानी। मॉ के जीवन की दार्शनिकता नही समझी। बच्चा किस प्रकार योग्य बने, ऐसी समझ नही आई। और मैने पिता बनकर उस उत्तरदायित्व को निभाया है। इस घर और पुत्र के लिए मुझे और क्या करना है, यह समझना मेरा काम है, तुम्हारा नही। किन्तु पण्डितजी ने मन मे आई बात कल्याणी से नही कही। उन्होने नया विवाद खडा करना पसन्द नही किया। क्योंकि जो समस्या उनके मन मे थी वह भी कम घिनौनी और हल्की नही थी। उस दिन गाँव के कई व्यक्तियो ने उनके मुँह पर कह दिया था, पण्डितजी, चेत जाओ तो अच्छा है नही तो आप जानते हैं, जवानी मे आदमी सभी कुछ कर गुजरता है। वह चेता की लडकी अजना भी जवान है, सुन्दर है। हाँ, आग-फूँस का मेल होगा तो घर ही फुँकेगा, सभी कुछ भस्म हो जाएगा। उसमे तुम्हारे पूजा-पोथी के पन्ने भी जल जाएँगे।

निस्सन्देह, पण्डित ज्ञानमाथ के मन-प्रदेश मे लोगो से सुनी बात आँधी की तरह उठ रही थी। वह उन्हे अशान्त बना रही थी। कल्याणी जो कुछ कह रही थी वह बात भी सत्य से दूर नही थी क्योकि विवाह और धन एक परिभाषा मे नही आते। यदि पुत्र के लिए सुन्दर और चतुर पत्नी चाहिए तो फिर यह आवश्यक नही कि धन उसकी पूर्ति करेगा। यह भी हो सकता

है कि धन आ जाए और पत्नी कुरूप, कुलक्षिणी हो। इसलिए कल्याणी से मन को चुभनेवाली बात सुनकर भी उन्होने इस तर्क को सर्वथा मान्य समझा कि पुत्र का विवाह होना चाहिए। फलस्वरूप, उन्होने कल्याणी से कहा, "हाँ, हाँ, इस वर्ष मे अब विवाह कर देना है। मुझे चिन्ता है।"

कल्याणी बोली, "अब जो भी ब्राह्मण आये उससे बात कर लो। लडकी देख लो।"

पण्डित ज्ञाननाथ ने कहा, "जयन्त भी तो पसन्द करेगा। उसी की इच्छा पर तो विवाह का मण्डप सज सकेगा।" इतना कहा और सूखे भाव से उन्होने कल्याणी की ओर अपना मुँह कर दिया।

कल्याणी बोली, "जयन्त क्या पसन्द करेगा? वह क्या देखेगा? केवल लडकी की सूरत ही तो देख सकेगा। पर यह समझना तो तुम्हे पडेगा कि खानदान कैसा है, माँ-बाप का समाज मे कैसा स्थान है? सम्बन्ध करते समय यही तो देखा जाएगा।"

पण्डित ज्ञाननाथ ने साँस भरकर कहा, "कल्याणी, आजकल कुछ नही देखा जाता। ऐसे समझा भी नही जा सकता। आज तो जिसके पास चार पैसे हो गये वही समाज मे श्रेष्ठ बन गया। चाहे वह चोर हो, डाकू हो या खूनी।"

कल्याणी ने कहा, "ऐसा सभी के लिए है। मुँह के उजले और पेट के काले प्राय दीखते है। मै पूछती हूँ, एक तुम्ही "

क्षुब्ध बनकर ज्ञाननाथ ने कहा, "कल्याणी "

किन्तु कल्याणी की आँखो मे हँसी थी और होठो पर मुस्कान। तुरन्त बोली, "हाँ, ऐसे ही तो कोई अपनी बुराई नही सुन सकता। जब अपने पर बात आई तो तुम्हारे मन पर कैसी चोट लगी! ऐसी ही सबकी बात है। सभी ओट मे शिकार खेलते है। कहने को पण्डितजी हो तुम, धर्म के ग्रन्थ पढते हो पर किसी को चार पैसे देकर कैसा कसकर सूद लेते हो? कोई सौ रुपये की चीज गिरवी रखने जाता है तो उसके हाथ पर पूरे पचास भी नही रखते। तुम भी लोगो की विवशता का लाभ उठाते हो। बताओ तो क्या यह पाप नही? आज तुम्हारा लडका पढ लिख गया है तो उसे सुदर्शनी हुण्डी समझते हो। किसी बडी दुकान पर भुनाना पसन्द

करते हो। मै कहती हूँ, यही सबसे बडा अधर्म है। इन्सानियत का खून!" कहते हुए कल्याणी का स्वर गम्भीर पड गया।

इतना देख-सुन, पण्डित ज्ञाननाथजी खडे हो गये और साँस भरकर वहाँ से जाते हुए बोले, "तुम नही समझोगी, नही जान सकोगी, और न ही इस जिन्दगी का मर्म समझ सकोगी। औरत हो न तुम! निरी मूर्ख।"

कल्याणी ने अत्यन्त कातर और निर्मम भाव मे जाते हुए पति को देखा और उसी की पीठ पर अपनी आँखो को पसार दिया। उसी समय उसने ऊपर आसमान की ओर देखा और जैसे एक बार फिर जीवन मे यह समझना चाहा कि उस आसमान के ऊपर भी कुछ है—कोई भगवान—अथवा मनुष्य के समान यह आसमान भी केवल खोल है, खोखला है।

उसी समय जयन्त घर मे आया। देखते ही कल्याणी बोली, "अरे अब तू कैसा हो गया है, जयन्त? देख तो, दिन ढल गया और तूने निराहार रहकर ही इतना समय काट दिया। बोल तो, आज कहाँ गया था?"

जयन्त थका हुआ था, उसके पैरो मे धूल भरी थी। पसीने से लथपथ, चारपाई पर बैठते ही वह पड गया। यह देख कल्याणी पखा उठा लाई और हवा करने लगी। तभी ठडी हवा का झोका खाकर जयन्त बोला, "माँ, मैं वही कार्य सम्पादित करने गया था जिसके लिए तूने मुझे पैदा किया। बोल तो, कभी कहा था न तूने कि एक बालक पाने के लिए तुमने शिव की आराधना की थी। उसीने वरदान रूप मे तुझे यह जयन्त दिया।"

कल्याणी बोली, "हाँ-हाँ, मैंने वरदान तो पाया। तू मिला। पर बेटा, ऐसा भी क्या कि तुम्हे न खाने की और न सोने की सुध है। बोल तो, आज कहाँ गया था?'

जयन्त बोला, "माँ, भगवान् ने मुझे ऐसे ही रास्ते पर डाल दिया है। यह डॉक्टर का पेशा बडा कठोर है। वह हमीरपुर गाँव है न, मुझे आज वही जाना पडा। वहाँ आने-जाने में मेरे शरीर को कष्ट तो हुआ पर मन को जो सुख मिला वह भी अभूतपूर्व रहा। एक जवान लड़के को हैजा हो गया था, हर्ष है कि मेरी दवा से वह बच गया। पता है वह जिस माँ का लडका था वह विधवा है? बेचारी, अपने हाथो मे पडे चाँदी के कडे बेचकर पाँच रुपये लाई और मुझे देने लगी। पर मैंने तो उसका आशीष पाया,

रुपया नही।"

कल्याणी ने साँस भरकर कहा, "तूने ठीक किया बेटा, सच ! गरीब विधवा का वही एक लडका सहारा होगा। उसके मन ने जरूर तुझे आशीष दिया होगा।"

जयन्त उठकर बैठ गया और बोला, "माँ, वह आशीष गहरा था, सच्चे हृदय से निकला था।"

कल्याणी ने कहा, "चल, अब हाथ-मुँह धोकर रोटी खाले।" वह बोली, "बेटा, शरीर का भी ध्यान रख। खाने-पीने की सुध न छोड।"

जयन्त ने मुस्करा दिया और लोटे मे से पानी लेकर मुँह-हाथ धोने लगा। जब वह रोटी खाने बैठा, तो तभी कल्याणी के मन मे बात आई कि कितना बडा अन्तर है इन दोनो मे। पिता पण्डित है, दान लेता है, सूद पर रुपया चलाता है और बेटा उपकारी बना है। दीन, दुखियो की पीडा मे अपने को खपा देना चाहता है।

उसी समय जयन्त बोला, "सच माँ, इस मनुष्य मे बडी पीडा है, कसक है, टीस है, जिसे देखो वही अभाव से भरा है।"

कल्याणी ने साँस भरकर कहा, "हाँ, बेटा ! यही अवस्था है। अभावो के जीवन मे फँसा इन्सान क्या सुख पाता है ? सब ओर जहरीला धुआँ घुटा है। आदमी तडप रहा है।"

जयन्त ने कहा, "माँ, मेरा निश्चय है कि अपनी डॉक्टरी का पेशा गाँवो मे चलाऊँगा, शहरो मे नही। शहरो मे तो बहुत डॉक्टर है।"

माँ ने कहा, "पर बेटा, यहाँ पैसा कहाँ है ? तेरे पिता तो चाहते है कि तू किसी शहर मे "

जयन्त बीच मे बोल पडा, "माँ, पिताजी माया के चक्कर में है। उसी का चिन्तन करते है। मुझे तो लगता है कि पिताजी व्यर्थ ही पूजा-पाठ का प्रपच रचते है, माला फेरते है। उनके मन मे तो धन की लालसा है। रात-दिन उसी की कामना करते है।"

पुत्र से सुनी बात कल्याणी को अच्छी ही लगी क्योकि वह बात उसके मन की थी परन्तु उस समय केवल यह ही बोली, "बेटा, तेरे पिता भी जो कुछ चाहते है वह अपने लिए नही बल्कि तेरे ही लिए। वह तो कहते है

कि तू बडा आदमी बने, सुख की जिन्दगी बिताये।"

जयन्त ने कहा, "माँ, सुख वह है जो अनुभूति से पूर्ण हो। यह जरूरी नही कि धन पाकर ही सुख प्राप्त हो।" अब तक वह खाना खा चुका था और जाने के लिए खडा हो गया था।

कल्याणी ने कहा, "अरे, बस! कुछ भी नही खाया!"

जयन्त बोला, "मुझे उस बीमार की माँ ने दूध पिला दिया था, मा! बेचारी बडी स्नेहमयी थी, तुम्हारी सरीखी थी।"

जयन्त चारपाई पर पड गया। कल्याणी ने स्वय खाना आरम्भ किया। वह भी भूखी थी। जयन्त के कारण नही खा सकी थी। तभी चारपाई पर पडे हुए जयन्त बोला, "माँ, जब मै पढता था तो मेरे मन मे भी यह बात थी कि डॉक्टरी से खूब रुपया कमाऊँगा, एक के चार बनाऊँगा। बँगला, मोटर, नौकर··"

माँ ने हँसकर कहा, "तो बेटा, अभी क्या हुआ?"

जयन्त ने कहा, "न, माँ! मेरा वह अरमान अब नही रहा। अब तो मुझे लगता है कि मेरा कर्तव्य प्राणो मे कोलाहल पैदा करता है, मुझे बार-बार सम्बोधित करता है। माँ, इस धरती पर कितनी पीडा है, मानव-समाज मे कितना अभाव है। इसका मुझे अभी ही पता चला है। लगता है कि मैने सफर का आरम्भ ही अब किया है।"

कल्याणी बोली, "वह भी अभी पूरी तरह नही, बेटा। विवाह बाकी है। जब बहू आ जाएगी जीवन तो तब आरम्भ होगा तेरा!"

इतनी बात सुनी तो जयन्त फिर उठकर बैठ गया और बोला, "माँ, इस विवाह की बात को महत्व मत दो। अभी मुझे चलने दो; रास्ते पर आगे बढने दो।"

कल्याणी बोली, "बेटा, मै बूढी हो गई हूँ। कभी भी इस घर से जा सकती हूँ। मै चाहती हूँ कि मेरे जीते-जी तेरी शादी हो जाए और वह इस घर को सम्भाल ले तो मै इस भार से मुक्ति पा जाऊँ।"

जयन्त हँसा, "माँ, घर तो बनते और बिगडते है। ज़िन्दगी के साधन कभी भी जुटाये जा सकते हैं। जानती तो हो कि जब तेज़ आँधी चलती है तो सैकडो घर उसमे उड जाते है। उनकी परम्पराएँ नष्ट हो जाती है।

जातियाँ और देश मिट जाते है, माँ ! फिर इसका मोह क्यो !"

कल्याणी ने कहा, "अरे, तू अधिक पढ़ गया है न सो ऐसी बात करता है। पर मे इतना कहाँ जानती हूँ। मै तो इस गॉव के बाहर भी नही देख पायी।"

जयन्त बोला, "माँ, नियति का चक्र जब चलता है तो कुछ भी शेष नही रहता।" उसने कहा, "उस दिन मुबारिकपुर गॉव मे मै जिस बीमार को देखने गया था उसका विवाह कुछ दिन पूर्व ही हुआ था। पर वह ऐसा बीमार पडा कि बच नही सका। वह मर गया। उस घर मे वह एक ही लडका था। उसकी पत्नी को मैने देखा तो लगा कि अभी विवाह की हल्दी भी उसकी नही उतरी थी। लडका भी सुन्दर था।" उसने साँस भरी और बोला, "किसी का कुछ पता नही, माँ! आज जब आया, तो रास्ते मे एक गॉव के बाहर दो चिताएँ जल रही थी। वहाँ स्त्री-पुरुष एकत्र थे। उनमे कुछ रो रहे थे। तो मैंने सोचा यही है इस ससार का स्वरूप। और उसी गाँव मे से मुझे अग्रेजी बाजे का स्वर सुनाई दिया। किसी के घर बारात आई होगी; विवाह की रौनक हो रही होगी।"

कल्याणी चौके से उठकर जयन्त के पास आ गई। वह बोली, "हाँ, बेटा! यही सब है इस दुनिया मे! देख तो, फिर भी आदमी जीवित है। चेतना से भरा है। मौत अपना काम करती है तो इन्सान अपना। दोनो का काम चलता रहता है।"

जयन्त ने कहा, "माँ, अजीब विषम और कठोर व्यापार है यह! देखता हूँ तो आश्चर्य होता है, साँस रुकता है।

कल्याणी ज़ोर से हँसी, "असल मे तू अभी इस दुनिया की रीति से दूर रहा है। अब सभी कुछ देखेगा और अनुभव करेगा।"

जयन्त ने सुनकर करवट बदलली और सोने का प्रयत्न करने लगा।

चार

अजना जब बीमार पडी तो सुगमता से उठ नही सकी। उसके उपचार मे जयन्त को अधिक परिश्रम करना पडा। समीप के नगर से एक और डाक्टर की सहायता उपलब्ध की गई। मानो वह जयन्त का परीक्षाकाल था। स्थिति यह बन गई कि कहने वाले कह रहे थे, विविध प्रकार के आक्षेप कर रहे थे, परन्तु जयन्त अपने रास्ते पर चला जा रहा था। उसके पिता पण्डित ज्ञाननाथ ने भी इस बात का विरोध किया कि वह चेता चमार की लडकी के पास न जाए, उसका उपचार न करे। परन्तु जयन्त एक दिन भी नही रुका, वह इस प्रकार की किसी बात मे बल नही पा सका। मानो समाज का कथन जर्जर था, विषैला था। इसका फल यह हुआ, कि वह अपेक्षाकृत गम्भीर और चिन्तनशील बन गया। जयन्त घर मे तभी जाता जबकि उसे भोजन करना होता अथवा रात मे सोने के समय आता। वह प्राय अपने दवाखाने मे रहता या जगल के किसी सुनसान स्थान मे चला जाता। उन्ही दिनो जयन्त को समाचार मिला कि वह अपनी परीक्षा मे पास हो गया है।

जब यह समाचार उसने अजना को जाकर सुनाया तो उस अशक्त बनी सुन्दर बाला ने अपना दुर्बल और गरम हाथ जयन्त के हाथ पर रख दिया और कहा, "जयन्त बाबू, तुमने डाक्टरी परीक्षा तो पास कर ली परन्तु यह समाज के विरोध की परीक्षा भी पास कर लोगे तो जानूंगी। इस अग्नि-पथ को भी तुम पार कर सके तो तुम्हे देवता से भी ऊपर मानूंगी।"

अपनी उस लम्बी बीमारी मे अजना ने उस दिन ही, प्रथम बार समाज के विरोध की बात कही थी। यद्यपि जयन्त ने चेता और उसकी पत्नी से कह दिया था कि अजना को गाँव की चर्चा का कोई ब्यौरा न दिया जाए परन्तु जब उसे सभी-कुछ ज्ञात हो गया तो उस समय जयन्त को लगा, सचमुच, समाज का यह अग्नि-कुण्ड जाने कितने निरीह और बेबस प्राणियो को भस्म कर चुका है। युग बदल गया है पर इस गाँव की धरती का इन्सान अभी ज्यो-का-त्यो बना है।

इसलिए जब उसने अजना की बात सुनी तो वह मौन रह गया, जैसे कठोर हो गया हो। किन्तु अजना ने अपने दुर्बल हाथ से फिर उसका हाथ कसकर पकडा और कहा, "मै जो कुछ नही जानती थी, कहना और समझना नही चाहती थी, वह सब तुमने मुझे बता दिया। मुझे आज सुबह ही माँ ने बताया कि तुम मेरे रोग के डाक्टर तो बने ही, मुझ रोगी के सेवक भी बने। माँ कहती थी कि मेरा मल-मूत्र "

उसी क्षण जयन्त ने कहा, "छोडो, छोडो! यह बताओ अब कैसी तबीयत है?"

किन्तु अजना के मुँह मे जो बात आ गई थी, वह कहनी ही थी अतएव, बोली, "माँ ने मुझे सभी-कुछ बता दिया है। तुम्हारे माता-पिता का विरोध ·गाँव का···"

जयन्त ने कहा, "अजना, जीवन मे यह सभी-कुछ चलता है, सुनना पडता है लेकिन चलने वाला चले ही जाता है।"

तभी अजना ने ठण्डी साँस ली और कहा, "यह मेरा दुर्भाग्य है, जयन्त बाबू! बदनसीबी है। सचमुच, यह मेरी ढिठाई है। आसमान के चाँद को पकडने की जुर्रत भला मुझ सरीखी चमार की लडकी ·"

"ओह, मूर्ख अजना! चुप रह! कम बोल!" यह कहते हुए जयन्त गम्भीर हो गया। तभी उसे लगा कि जैसे उस यौवनमयी बाला की ओर से उसे निमन्त्रण का खुला आवाहन था। अपनी भाषा मे उस दुर्बल अजना ने एक चैलेज भी दे दिया था।

किन्तु अजना ने फिर कहा, "मैं कितना कहती हूँ कि मेरे कारण अपने समाज को नाराज करना उचित नही। तुम्हे उसी घर मे रहना है, उसी समाज मे।"

लेकिन जयन्त बोला, "अच्छा, अच्छा, सुनली तेरी बात। समझनी तो है कि यह मेरी निजी बात है। सभी के समान मैं भी अपना नफा-नुकसान समझता हूँ।"

यह बात जैसे अजना को रुचिकर नही लगी। वह तुरन्त बोली, "तो मेरा क्या कोई अधिकार नही? मेरी बात की कोई महत्ता ही नही?" यह कहते हुए वह उदास बन गई।

"ओह, नादान लडकी !" जयन्त तुरन्त बोला, "मै कहता हूँ यह परेशानी मुझे स्वय उठानी है, तुझे नही । यह कर्तव्य की बात है, मेरे चिन्तन की बात है !"

अजना बोली, "मेरा बापू कहता था कि लोग तुम्हे यहाँ आने से रोकते हैं, तुम्हारे पिता भी ! तब क्यो आते हो ? यह तो देखते ही हो कि यह अजना अछूत है ।"

जयन्त बोला, "अजना, अब तेरा रोग चला गया है । इसी से लडती है, ऐसी इच्छा व्यक्त करती है, बडी चालाक है तू !"

अंजना सहज भाव से मुस्कराई, "यह अधिकार भी मुझे तुमसे मिला है जयन्त बाबू ! आखिर मेरा है कौन इस दुनिया मे कि जिससे लड सकूँ, अपने मन की कुछ कह सकूँ । पर सुनते हो, मैं यह कभी पसन्द नही करूँगी कि मेरे कारण तुम्हे कष्ट मिले, लोक-चर्चा का पात्र बनना पडे ।"

जयन्त खडा हो गया और बोला, "अच्छा, अब चलूँगा । ये बाते फुरसत मे सुनने की है, फिर आऊँगा ।" यह कहते हुए वह चल दिया । अभी वह चमारो के उस पुरवे से बाहर नही निकल सका था कि तभी तीन-चार चमारो ने उसे रोक लिया । एक ने कहा, "डाक्टर जी, अब कैसी है अजना !"

जयन्त ने सीधे स्वभाव से कह दिया, "अब ठीक है ।"

किन्तु उसी समय एक दूसरा व्यक्ति बोला, "नकली बीमारी गई अब असली बीमारी है ।" इतना कहा और वह स्वत. ही-ही-ही करके हँस दिया ।

इतनी बात सुनकर जयन्त ने उसकी ओर देखा और क्षुब्ध बनकर बोला, "क्या बात ?" वह उसकी ओर बढ गया ।

वह व्यक्ति बोला, "हाँ, पण्डितजी, जवान लडकी का रोग क्या जल्दी जाता है ? वह सरसाम बन जाता है, त्रिदोष हो जाता है, वात, पित्त और कफ…" वह हँस दिया ।

जयन्त का दिमाग झनझना उठा । तैंड से उस व्यक्ति के मुँह पर तमाचा मारकर बोला, "बद शऊर बेशर्म " वह वहाँ से चल दिया ।

तमाचा जोर का पड गया था । अत वह व्यक्ति तिलमिला गया । डर भी गया । उसके साथी ने कहा, "मूर्ख, ऐसे कहा जाता है ? यो

एकदम· ''

उस व्यक्ति ने कहा, "मै इस पण्डित के बच्चे को तमाचा मारने का मजा चखाऊँगा।"

दूसरे ने कहा, "हाँ, नही तो, चोरी और सीनाजोरी।"

तीसरा बोला, "हम गरीब है न तभी ये बडी जाति वाले हमारे घरो मे ही सेंध लगाते है हमारी बहन-बेटी ''

जिसके तमाचा लगा था वह बोला, "मैने इस पण्डित की बीच गाँव मे पगडी न उछाली तो मेरा नाम चेतू नही।" और वह तभी एक ओर को बढ गया।

यह घटना प्रातः के समय घटी थी और दोपहर तक गाँव भर मे फैल गई। पण्डित ज्ञाननाथ और कल्याणी के कानो मे भी यह बात पहुँच गई। उस दिन जयन्त को गाँव से बाहर जाना था इसलिए उसका दवाखाना बन्द था। किन्तु सचाई यह थी कि जयन्त बाहर जिस काम से जा रहा था, नही जा सका। वह अपने मकान के ऊपरी पार्श्व मे जाकर बिस्तर पर जाकर जो पडा, तो पडा ही रहा। एक बार कल्याणी ने जाकर भी देखा, तो वह सो रहा था।

लेकिन जब दोपहर बीता और दिन उतर चला तो कल्याणी फिर जयन्त के पास पहुँची, जाकर देखा कि वह जाग रहा था। उसे देखते ही कल्याणी ने कहा, "आज क्या बात है, बेटा! रोटी नही खायेगा क्या ?"

जयन्त ने कहा, "नही, माँ! आज सिर दुःख रहा है।"

कल्याणी बोली, "सिर तो दुःखेगा ही! छोटी कौम को मुँह लगाना कभी अच्छा नही होता। आज गाँव भर मे चर्चा है कि तेरा उन चमारो से ''

जयन्त बोला, "माँ! यह सभी बकवास है। मेरी निगाह मे कोई छोटा नही, आदमी स्वय छोटा है। ये बडी जाति वाले सबसे अधिक निकम्मे है, धूर्त्त है और कमीने है।"

कल्याणी बोली, "तेरे पिताजी कहते थे कि तुझसे किसी ने कुछ कहा था।"

जयन्त झल्ला पडा, "नही, माँ! मुझसे कुछ नही कहा गया। जिसने कहा, उसे सबक मिल गया।"

"हाँ, यही तो। तूने चैतू चमार के मुँह पर थप्पड मारा था। और जानता नही कि वह बदमाश है, कई बार का सजायाफ्ता है।"

"तो हुआ क्या!" जयन्त ने कहा, "बदमाश तभी तक बदमाशी दिखाता है जब तक उसका अस्तित्व स्वीकार किया जाए। वह चैतू क्या है, मुझे पता है।"

कल्याणी ने साँस भरी और कहा, "बेटा, अपने दुश्मन बनाना बुरा है।"

जयन्त तेज स्वर मे बोला, "इस दुनिया मे सभी कुछ चलता है, माँ! लोग जब आग मे स्वय कूदना चाहे तो कौन रोक सकता है।"

कल्याणी वापस चली गई और नीचे जाकर घर के कामो मे लग गई। उसी समय जयन्त उठा और स्वय भी नीचे चला गया। मुँह धोया। शीशे के सामने जाकर सिर के बाल ठीक किये। जब वह बाहर जाने लगा तो कल्याणी ने फिर टकोरा, "अरे, कुछ खायेगा नही?"

जयन्त ने कहा, "इस समय नही, माँ!" वह चला गया। अभी वह अपने मुहल्ले से बाहर निकला ही था कि सामने से आता हुआ मलखान नजदीक आ गया। वह पास आते ही बोला, "आज कहाँ गये थे, जयन्त भैया? मैं कई बार आया और लौट गया।"

जयन्त ने कहा, "तबीयत खराब थी, घर मे सो रहा था।"

मलखान बोला, "राम-राम! मैंने तो समझा था कि तुम शहर गये हो। अब कहाँ चले?"

जयन्त ने कहा, "जगल मे।" वह बोला, "हरे-हरे खेत देखूँगा, ठण्डी हवा लूँगा। दिमाग स्वस्थ करूँगा।"

मलखान ने कहा, "मैंने सुना है कि⋯"

जयन्त तुरन्त उसका अभिप्राय समझ गया। बीच ही मे बोला, "सब झूठ है। तिल का ताड है।"

"नही भैया!" मलखान बोला, "मैंने कइयो के मुँह से सुना है। चमारो के पुरवे मे गया, तो वहाँ भी⋯"

जयन्त ने सहज भाव से कह दिया, "कुछ बात होती है, कुछ बनाई जाती है।" यह कहते हुए वह आगे बढ गया। उसने मुडकर कहा, "शाम को मिलना मलखान। दवाखाने मे आना।"

मलखान ने कहा, "अच्छा।" और वह स्वय भी आगे बढ गया।

किन्तु वहाँ से जयन्त जगल मे नही गया, वह सीधा चमारो के पुरवे मे पहुँच गया। अवसर की बात थी कि जब वह उस जाति की चौपाल के पास पहुँचा तो देखा वहाँ कुछ आदमी बैठे थे। उनमे चैतू भी था। जयन्त सीधा उस चौपाल पर चढ गया। उसे देखते ही सभी व्यक्ति खडे हो गये। उनमे से एक वृद्ध ने कहा, "आओ, पण्डितजी, पायलागन! विराजो!"

जयन्त चारपाई पर बैठ गया। तभी उसने चैतू की ओर देखकर कहा, "हाँ, भाई चैतू, अब बताओ सुबह तुम्हारे मन मे क्या था? तुम यही चाहते हो न कि मै तुम्हारे मुहल्ले मे न आया करूँ?"

उसी समय वृद्ध ने कहा, "पण्डितजी, हम शर्मिन्दा है। सुबह चैतू ने जो कुछ कहा वह हमारे लिए सबसे अधिक दु ख का विषय है। आप हमारे सिरताज है। हमारा दु ख-दर्द समझने वाले है।"

जयन्त ने कहा, "देखो भाई, मैं आज समाज का लाछन अपने ऊपर ले रहा हूँ। एक शब्द मे कहूँ, तो जहर का घूँट पी रहा हूँ। पर मै यह नही समझ सकता था कि जिनके लिए मैं अपने माँ-बाप, बिरादरी की प्रतारणा पाऊँ, उन्ही से मुझे ऐसा सुनना पडे।"

उसी समय चैतू आगे आया और जयन्त के पैर पकडकर बोला, "बाबू, मैं क्षमा माँगता हूँ।"

जयन्त ने कहा, "नही-नही, तुम्हे अपनी बात कहने का अधिकार है। परन्तु अफसोस यह है कि जिस प्रकार बडी जातियाँ तुम्हे समझती है उसी तरह तुम भी" निस्सदेह, तुम मुझे अपना समझते तो बैठकर बात करते, वस्तुस्थिति से अवगत होते। तुम्हारा शायद खयाल है कि मैं उस चेता की बेटी अजना का प्रेमी बनकर यहाँ आता हूँ।"

एक व्यक्ति बोला, ""राम-राम भजो, बाबूजी! हम यह नही मानते पर बडी कौम वाले यही कहते है, प्रचार करते है। वे ही तुम्हारे शत्रु है।"

जयन्त ने कहा, "मैं उनके मन की भावना को पहचानता हूँ। पर जब तुम्हारे निकट आया हूँ तो देखता हूँ कि तुम भी उसी हीन भावना के दास हो, उसी कीचड़ मे फँसे हो।"

चैतू ने कहा, "गाँव मे यही चर्चा है, जगल के खेतो मे भी यही बात

चलती है ।"

जयन्त ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "मुझे पता है लेकिन इसका इलाज क्या है ? बोलो, मै गॉव छोड़ दूँ ? लोगो की इस चर्चा से डर जाऊँ ?"

उन सभी व्यक्तियो की एक स्वर से आवाज उठी, "नही-नही, आप गॉव के हैं, गॉव मे रहेगे। ऐसे भले और पुण्य का काम करने वाले के लिए डर की कोई बात नही।"

चैतू ने कहा, "बाबू, आज आपने जो मेरे मुँह पर तमाचा मारा, शायद ऐसा तमाचा मैने थानेदार से भी नही लगवाया था। पर देखता हूँ कि आप पुण्य का काम करते है। मैंने सुबह नासमझी मे जो बात कही उसका मुझे अब भी पछतावा है।"

वृद्ध ने कहा, "बाबू, यह चैतू बुरा तो है पर इसमे अच्छाइयाँ भी है। चेताभगत की लडकी को यह भी अपनी बहन मानता है। उस बहन ने भी इसे आज बहुत-कुछ कहा है।"

जयन्त बोला, "अजीब समस्या है। आदमी स्वय ही करुणा और दीनता का दास बना है। ऐसे क्या समाज जीवित रह सकता है ?"

एक जवान लडके ने कहा, "बाबू, बडी जाति वाले हमे आदमी नही समझते। वह माटी का ढेला समझते है।"

जयन्त ने क्षुब्ध बनकर कहा, "वे बडी जाति वाले अपने को भी आदमी नही मानते। वे ईर्षालु है, भटके हुए पथिक है।"

वृद्ध ने कहा, "हम सभी राम-कृष्ण के उपासक ."

जयन्त बोला, "मैं नही देखता कि गाँव मे कोई राम का उपासक है। यह आत्म-प्रवञ्चना है। मैं अपने पिता को भी पण्डित नही मानता, धर्म-गुरु भी नही।"

एक व्यक्ति ने हँसकर कहा, "पण्डितजी तो सूद से पैसा देते है। कितने निर्मम है ?"

जयन्त चिल्ला पडा, "बेशक, वे निर्मम है। वे क्रूर व्यापार करते है। धर्म का पाठ पढने वाला सदाशय होना चाहिए। पर मेरे पिता ऐसे नही है। इसका मुझे दु ख है।"

उसी समय लाठी के सहारे एक और वृद्ध वहाँ आया। वह उस जाति

का चौधरी था। आते ही बोला, 'अच्छा, आप छोटे पण्डितजी।"

जयन्त ने कहा, "भगतजी, राम-राम!"

भगतजी ने कहा, "अभी पता चला है कि आप आये हुए है। मै खुद सोच रहा था कि जाऊँ और इस चैतू की ओर से माफी माग लू"

जयन्त ने कहा, "माफी, गैर से माफी माँगी जाती है। यदि चैंतूभाई ने कोई कसूर किया है तो मैने उससे भी बडा अपराध किया है। मैं आज दिन भर सोचता रहा कि मैंने नासमझी का काम किया, निरा विवेकहीन कर्म किया"

वृद्ध भगत ने कहा, "नही, पण्डितजी! आपने ठीक किया। चैतू को सजा दी, मुझे यह सुनकर अच्छा लगा।"

जयन्त बोला, "बाबा, समाज मे ऐसे नही रहा जाता। थप्पड का जवाब थप्पड से देना अब पुराना रिवाज पड गया है। अब तो कोई और उपाय किया जाना चाहिए। अच्छा होता कि चैतू मेरे मुँह पर थप्पड मारता और मैं इसके हाथो को चूम लेता और दूसरा गाल कर देता। मैं बढा हूँ न तो मेरी जिम्मेदारी अधिक थी। परन्तु मैने अविवेकी कर्म सम्पादित किया। चैतू ने कोई बात कही तो मैंने थप्पड मार दिया। इसके आगे यह भी हो सकता था कि बन्दूक हाथ मे होती तो गोली और यदि चैतू अपनी जेब मे पडे चाकू से मेरा पेट फाड देता तो हाँ, भाई! यह सब गलत परम्परा है। दूषित प्रथा है, पुरानी है, जगलीपन से भरी है। देखता हूं, चैतू बेपढा भले ही हो पर मुझसे अधिक समझदार है।"

एक व्यक्ति बोला, "बाबू, यह सब तुम्हारी सज्जनता है। चेतराम की लडकी तुम्हारे कारण बच गई इसके लिए हम सभी तुम्हारे ऋणी है। हम तुम्हारे दास है।"

एक वृद्ध बोला, "बाबू, तुम्हारे पसीने की जगह हमारा खून दिया जा सकेगा। हम सब तुम्हारे है।"

जयन्त हँस दिया, "मुझे भरोसा है।" कहते हुए वहाँ से चल दिया और सीधा घर पहुँच गया। उस समय सन्ध्या हो चली थी। कल्याणी घर के आँगन मे खडी थी। जयन्त ने जाते ही उसके दोनो कन्धे पकड लिए और हर्ष से भरकर बोला, "माँ, बहुत जोर की भूख लगी है।"

माँ ने कहा, "कुछ ठहर जा! ताजा खाना तथा साग बन रहा है। तू

जिस साग को पसन्द करता है, वही बनाया है। मैं क्या यह न जानती थी कि आज दिन भर से तुमने कुछ नही खाया तो अब शाम को ''

जयन्त ने माँ के कन्धे पर अपना मुँह रख दिया और कहा, "माँ, आज दिन-भर मन उदास रहा। मैं खिन्न बना रहा। पर अब सभी कुछ भूल गया हूँ। दिन मे तो मन मे बात आई थी कि मैं शहर मे रहूँगा, इस गाँव मे नही। पर अब मन मे बात बैठ गई है कि नही, मैं गाँव मे ही रहूँगा। गाँव के लोगो की सेवा करूँगा।"

कल्याणी ने कहा, "इस समय तू कहाँ गया हुआ था ? कई लोग आये और लौट गये। तेरे पिता भी कई बार पूछ गये है।"

जयन्त बोला, "माँ, चमारो के पुरवे मे चला गया था। दिन मे जिस आदमी के मुँह पर मैंने तमाचा मारा था, अब वही आदमी मेरे पैरो मे आ गिरा। मैने उसे उठा लिया। तुम उसे बदमाश समझती हो पर मुझे तो लगा कि वह निरा सरल और साफ आदमी था। वहाँ और भी बहुत से व्यक्ति थे। सभी बेचारे भले थे। गरीब आदमी कितना नेक होता है, यह मुझे आज फिर देखने का अवसर मिला, माँ।"

कल्याणी ने साँस भरकर कहा, "तू ठीक कहता है, बेटा। गरीब निस्पृह और सरल होता है।"

उसी समय बाहर एक आदमी ने आवाज दी और जयन्त माँ को छोड उधर ही चल दिया। वह प्रसन्न और सुखी था। उस क्षण वह उत्साह और उमग से भरा हुआ था।

पाँच

चेतराम इस बात के लिए देर से चेष्टित था कि वह अजना का विवाह कही कर दे। जब उसके समक्ष उसकी लडकी को लेकर गाँव के व्यक्तियो द्वारा जयन्त पर भद्दे आक्षेप और उसका अमगल करने की आशका प्रगट हुई

तो वह इस बात के लिए और अधिक चेष्टित और चिन्तित हो उठा कि लडकी जितनी जल्दी दूसरे घर जाए उतना ही अच्छा है। अतएव, अजना के विवाह के लिए उसने एक स्थान पर लडका देख भी लिया। वह बात पक्की करने लगा। उसने बेटी की सगाई का दिन भी निश्चित कर दिया।

सयोग की बात थी कि उस समय जयन्त घर से बाहर था। जब वह लौटा, तो उसी दिन एक व्यक्ति उसके पास आया और अन्य बाते करने के साथ उसने बताया कि चेताभगत अपनी लडकी का विवाह कर रहा है। उसने लडका देख लिया है। यह कहने के साथ वह जानना चाहता था कि जयन्त पर उस बात की कैसी प्रतिक्रिया होती है।

जयन्त ने बात सुनी तो एकाएक बोला, "क्या अंजना का विवाह किसके साथ ?"

व्यक्ति ने कहा, "यही किसी पास के गॉव मे लडका देखा है, वह किसान के यहॉ काम करता है, खेत जोतता है।

जयन्त ने कहा, "राम-राम ! इससे तो चेताभगत अपनी लडकी का जीवन बिगाड देगा। उसे अन्धेरे मे फेक देगा।"

जैसे चकित बनकर वह व्यक्ति बोला, "क्यो, क्या उसे अपनी बेटी का विवाह नही करना चाहिए ? आखिर लडकी सियानी है। विवाह के योग्य हो गई है। चेता खुद तो बूढा और अशक्त। पर तुम्हारा मतलब यह है कि "

जयन्त ने जैसे झुँझलाकर कहा, "मेरा यह अभिप्राय नही कि वह लडकी को अविवाहित ही रखे पर ऐसे तो लडकी की प्रतिभा ही समाप्त हो जाएगी। वह जहॉ है, वही पडी रहेगी। निश्चय ही अब उसे विकास करने का अवसर नही मिलेगा। उसके मानस में जो भाव भरा है वह मर जाएगा।" यह कहते हुए जयन्त कुर्सी से खडा हो गया। वह विचारो मे सलग्न अपनी मेज के आसपास ही घूमने लगा।

उसी समय वह व्यक्ति उठ गया और वहाँ से चला गया। कदाचित् उसका अभिप्राय ही यह था कि देखे जयन्त के ऊपर इस समाचार का क्या प्रभाव पडता है। सो, उसने देख ही लिया। वह व्यक्ति वहाँ से सीधा गाँव की चौपाल पर पहुँच गया। वहाँ कुछ और व्यक्ति भी बैठे हुए थे। उनमे से एक उसको प्रसन्न बना देख बलात् पूछ बैठा, "क्यो हरदेवा, कैसे खुश

नजर आता है ! तूने क्या पा लिया है !"

हरदेवा ने कहा, "मै आज उस सत्य को देख पाया हूँ कि जिसे अब तक झूठ मानता था ।"

"वह क्या ?"

हरदेवा उस व्यक्ति के कान के पास मुँह ले गया और धीरे से कुछ कहकर खुले स्वर मे बोला, "इस बात पर मै आज तक यकीन नही करता था पर अब समझ गया हूँ ।"

जिस आदमी ने प्रश्न किया उसका नाम गनपत था । वह हरदेवा की बात सुनकर बोला, "मुझे तो काफी दिनो से पता था । मै तो शुरू से ही इसे सत्य मानता था ।"

हरदेवा बोला, "मेरा खयाल था कि गाँव के लोग ईर्षावश जयन्त को बदनाम करते है ।"

तभी उन व्यक्तियो मे से एक अन्य व्यक्ति बोला, "अरे, क्या बात है, हरदेवा ! कोई नई बात है क्या ?"

हरदेवा ने कहा, "जब दुनिया मे रोज नई बात होती है तो फिर इस गाँव मे क्यो न हो । यहाँ भी आदमी बसते है । राग-वैराग्य के गीत गाये जाते है ।" और वह खोलकर बात बताने लगा, "बात थी पण्डित के लडके डाक्टर जयन्त की, उस चमार की लडकी अजना की । देखो तो, जयन्त ने उसका नाम भी कैसा बढिया रख दिया । घूरे पर पडे पत्थर को हीरा बना दिया ।"

वहाँ पर बैठा एक युवक मुस्कराया, "जैसा रूप, वैसा नाम ।"

हरदेवा तुनक गया, "जी हाँ, जैसा रूप "

किन्तु जिस समय चौपाल पर यह बात चली उस समय अजना घर से निकल खेत पर जा रही थी । अवसर की बात कि तभी जयन्त अशान्तमन उस सन्ध्या के प्रहर मे जगल की ओर चल दिया था । वह एक खेत पर बढा जा रहा था कि तभी उसने चकित बनकर देखा कि अजना उसके पीछे तेज चाल से चली आ रही है । पास आते ही तीव्र साँस लेते हुए उसने कहा, "इतनी आवाजे दी कि बस "

जयन्त ने कहा, "मैं सुन नही सका ।" मैं मन मे उठते विचारो मे ही खोया रहा ।

अजना ने मुँह का पसीना पोछा और क्षुब्ध स्वर मे कहा, "जब जमाना मेरी नही सुनता, तो तुम्ही क्यो मै भाग्य की मारी "

वस्तुत उस समय जयन्त गम्भीर था। वह दूर छिपते हुए सूर्य की ओर देख रहा था। उसी ओर देखते हुए उसने कहा, "अजनादेवी, भ्रम मे मत रहो, कोई किसी की बात नही सुनता। जमाना निर्मम है। जो कुछ हमारे मन मे है, उसे केवल सुनाया जा सकता है, अवसर मिले, तो उसके लिए कुछ बल भी प्राप्त किया जा सकता है।"

किन्तु अजना ने साँस भरकर कहा, "मै कैसे बल प्राप्त करूँ? मै दुर्बल हूँ।"

जयन्त ने फिर भी उसकी ओर नही देखा। उसने कहा, "लो यही तुम्हारा पाप है। ऐसी अवस्था मे किसी को तुम्हारे प्रति सहानुभूति होना भी कठिन है।" उसने अजना की ओर देखा, वह कुछ और उसके समीप हो गया और नितान्त आकुल बनकर फिर बोला, "मै मानता हूँ कि रोना इस बात का प्रमाण है कि तुम्हारे मन मे पीडा है। पर इससे मिला क्या। यह तो कायरता है। वही तुम दिखाती हो। भला रोती क्यो हो। इस जीवन-पथ पर चलने वाला अशक्त बनकर भी चलता है, लक्ष्य प्राप्त करना चाहता है। बोलो, तुम्हारे मन मे क्या है?"

अजना ने अपनी भरी आँखे आँचल मे छुपा ली और कहा, "जयन्त-बाबू, मै निरावलम्ब हूँ। मै जानती हूँ कि तुम क्यो मुझसे दूर हो रहे हो। मैं गाँव की बात सुन चुकी हूँ। मेरे माँ-बाप भी मुझे कचौटते है, पापिनी बताते है। पर मै नही जानती कि मेरा पाप क्या है!"

जयन्त ने कहा, "नही अजना, तुम्हारा कोई पाप नही। तुम सरल हो, साफ हो! तुम गगा के जल के समान पवित्र हो!"

"फिर भी", अजना ने जैसे प्रताडित बनकर कहा, "जयन्तजी, मैं इतनी दुर्बल हूँ, इतनी गरीब हूं कि रोने के अतिरिक्त और कुछ नही जानती। पर सोचा था कि तुम्हारा सहारा पाकर मै उस रास्ते पर पहुँच जाऊँगी कि जहाँ प्रकाश है। जीवन की चेतना है।"

जयन्त ने कहा, "वह पथ तुम्हे अब भी मिल सकता है। अच्छा हो, तो विवाह रोक दो। माँ-बाप से साफ कह दो। तुम पढो। मैं शहर मे तम्हारे

लिए बात कर आया हूँ। तुम्हे भोजन व्यय मिलेगा। पढाया जाएगा और नर्स का कार्य ''

एकाएक जैसे आतुर बनकर अजना बोली, "मै तैयार हूँ। मैं हर मुसीबत का सामना करने के लिए तैयार हूँ, जयन्त बाबू !"

जयन्त ने कहा, "तो बस, अब तुम जाओ ! तुम्हारा पिता सहमत हो तो सुबह भेज देना। वह मुझसे बात कर लेगा।"

अजना ने कहा, "मेरा बापू नही समझेगा।"

जयन्त ने कहा, "मैं समझाऊँगा। घर पर भेजना। मेरी स्वतः इच्छा है कि तुम गाँव की एक योग्य नारी बनो। तुम कीचड मे पडे हुए कमल के समान अपने को प्रकट करो। आवश्यकता साहस की है। जो मुसीबत आए उसका सामना करने की क्षमता अपने मे पैदा करो। यो रोकर अपनी दुर्बलता का प्रदर्शन मत करो।" यह कहते हुए जयन्त चल दिया। अजना जहाँ खडी थी वही खडी रही। क्षण-भर वह सामने जाते हुए जयन्त को देखती रही। उसे लगा कि सदा के समान, वह, उस समय भी उसके लिए अलभ्य था, न समझ पाने की वस्तु था। किन्तु वह जिस प्रकार उसकी आत्मा मे प्रकाश का सचार कर गया, चुटकी भरकर उसे जगा गया, वह मानो उस अजना के लिए अपूर्व देन थी, जीवन का परम आशीष। यह सोचते ही अजना लौट पडी। वह जिस काम से घर से निकली थी अपने खेत मे जाकर उसमे लग गई।

किन्तु उसी समय, जयन्त सीधा नहर के किनारे पहुँच गया। किसान घरो की ओर लौट रहे थे। जानवर भी अपने-अपने घर पहुँच गये थे। अँधेरा बढ चला था। जयन्त नहर के किनारे एक ऐसे स्थान पर जा बैठा जहाँ गहरा पानी था। उसकी आँखो के सामने साँय-साँय करता हुआ पानी बहा जा रहा था। उस नहर की गहराई को देख जयन्त ने अपने-आप कहा, 'इस पानी के समान जीव-जगत की भी अवस्था है। लोग जहाँ एक-दूसरे को जीवन देते है वहाँ उसके प्राण भी ले लेते हैं। यह नहर का गहरा जल 'इसके अन्तराल मे छिपी किलकिलाती हुई मौत ...'

उसी समय एक आदमी वहाँ आया और वह जयन्त को उस सुनसान स्थान पर बैठा देख, विस्मय के साथ रुक गया। उसने सिर पर रखा बोझ

नहर की पटरी पर पटक दिया और पास आकर बोला, "तुम भी खूब हो, जयन्त भाई ! कभी यहाँ, कभी वहाँ !"

जयन्त ने देखा कि रूपा नाम का उसका पडौसी उसकी ओर देखकर आँखो से हँस पडा है। वह मुस्करा रहा है। यह देख, जयन्त बोला, "क्यों, बात क्या है, रूपराम ?"

रूपराम और पास आ गया और बोला, "अभी कुछ देर पहले मैने तुम्हे देखा था, उस अजना के साथ · और अब "

जयन्त ने कहा, "हाँ, अजना से मेरी भेंट हुई थी। वह परेशान थी, रूपराम।"

रूपराम ने पूछा, "क्यो ? अब तो उसका विवाह है।"

जयन्त ने कहा, "यही तो रे ! वह उस विवाह से सहमत नही है।"

सुनकर रूपराम मौन रह गया। वह धरती पर पडा एक ढेला उठा नहर के गहरे पानी मे फेकता हुआ बोला, "यही तो ·हाँ, जयन्त भैया !"

जयन्त ने अचरज और जिज्ञासा के साथ उस रूपराम की ओर देखा, वह जैसे उसके मन मे आई बात को समझने लगा। किन्तु रूपराम ने स्वय ही कहा, "भैया, अब तुम कहो या नही, वह अजना तुम "

जयन्त ने बीच मे ही उसकी बात रोक दी और कहा, "रे, मूर्ख ! वह अंजना अब इतनी नादान और नासमझ नही है कि जो अपनी और मेरी स्थिति न पहचानती हो। वह इस बात को समझती है कि उसका और मेरा समाज मे क्या स्थान है।

किन्तु रूपराम के मन मे जो बात एक बार आ गई वह उसीको लेकर बोला, "भैया, यह तो समझते ही हो कि जवानी दीवानी होती है।

जयन्त ने नहर के गहरे पानी को घूरते हुए कहा, "यह समझ ले, मैं अन्धा नही हूँ। मुझे अपनी अवस्था का ज्ञान है।"

रूपराम मौन हो गया। वह कुछ नही बोल सका।

तभी जयन्त ने फिर कहा, "हाँ, रूपराम, मै तुझे इस सन्ध्या के समय अपने मन की यह बात बताना कोई पाप नही मानता कि मैं यह जरूर चाहता हूँ कि अजना, जो अगूरी से अब नये नाम द्वारा पुकारी जाती है, क्यो न समाज की विशिष्ट नारी बने। उसमे वह भावना है, करुणा है,

इच्छा है । आवश्यकता केवल इस बात की है कि कोई उसे प्रोत्साहन दे, मदद दे। सो, वही मै उस अजना का देना चाहता हूँ। मै इस बात को नही मानता कि कोई छोटी जाति के घर मै पैदा होकर समाज का विशिष्ट अग नही बन सकता, अथवा वह अपनी उपयोगिता नही समझ सकता ।"

रूपराम ने कहा, "यह मै भी मानता हूँ। जाति कर्म से बनती है, जन्म से नही। उस अजना मे ऐसी बात जरूर है जिससे वह अपूर्व लगती है ।"

जयन्त ने कहा, "उस अजना के सस्कार अच्छे है, निर्मल है । वह अत्यन्त भावनामयी है ।"

तभी रूपराम ने पूछा, "तो अब क्या होगा, भैया !"

जयन्त ने कहा, "वह अजना इसीलिए मेरे पीछे दौडी आई थी । अब मैं उसके यहाँ नही जाता। वह भी पढने नही आती। जबसे वह बीमार पडी तबसे उसने परम्परा बदल दी है । मै समझता हूँ यह उसकी बुद्धिमत्ता थी। लोक-चर्चा से बचने की भी आवश्यकता थी ।"

रूपराम बोला, "चेताभगत लड़की का विवाह कर देगा ।"

जयन्त ने कहा, "यह नही होगा। अजना अभी पढेगी । वह नगर मे जाएगी ।"

रूपराम ने कहा, "यह तुम कहते हो, या अजना ?"

जयन्त उठ खडा हुआ और बोला, "अरे, बुद्धू ! मे कहूँ तो, वह कहे तो, बात एक ही है। मुझे भरोसा है कि मै जो कुछ कहूँगा, अजना वही मानेगी ।"

रूपराम भी खडा हो गया। उसने अपना बोझ फिर सिर पर उठा लिया। वे दोनो चल दिये । तभी रास्ते मे जयन्त ने फिर कहा, "रूपराम भाई, गाॅव के लोग दूर तक नही देखना चाहते, नजदीक देखते है । यह भी किसी सयोग या सस्कार की बात है कि अजना से मेरा परिचय हो गया। मुझे भी जीवन मे यह पहली बार पता चल गया कि कीचड का कमल अधिक निर्मल और पवित्र होता है । यह अजना वही है ।"

रूपराम ने कहा, "लडकी असाधारण है ।"

जयन्त ने साँस भरी और वह सिर के ऊपर से उडते हुए एक पछी को दूर जाता हुआ देखने लगा ।

तभी रूपराम ने कहा, "और भैया, यह भी सुना है कि तुम्हारा सम्बन्ध एक बडे घर की लडकी से हो रहा है। लड़की अग्रेजी और कई भाषाएँ पढी है। दहेज मे भी बहुत-कुछ मिलेगा।"

जयन्त ने जैसे चौककर कहा, "हॉ, मैने भी सुना है। मुझसे मॉ ने कहा है।"

"तब ? तुमने क्या निश्चय किया ?"

जयन्त बोला, "रूपराम भाई, मैं विवाह को महत्व नही देता। होगा, हो जाएगा। अच्छा होता कि अभी न होता। मै कुछ समाज का काम करता। अपने को योग्य बनाने का प्रयत्न करता। पर देखता हूँ कि लोग "

रूपराम बोला, "जयन्त भाई, इस अजना ने तुम्हे बदनाम कर दिया है।"

जयन्त ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "गॉव के आदमी नासमझ हैं। वह औरत और आदमी मे केवल एक ही बात देखते है वासना की बात प्रेम और प्रणय की बात···राम-राम! क्या यही सकल्प रह गया है इस आदमी के लिए, इस औरत के लिए!"

रूपराम बोला, "अभी तो यही सोचा जाता है, भैया! सच, आज यही।"

जयन्त ने कहा, "यही अर्से से चला आया है। आदमी इसी प्रकार एक दूसरे को सदेह और ईर्षा की दृष्टि से देखता आया हे। इसी हथियार से समाज नारी की हत्या करने का प्रयत्न करता है।"

रूपराम ने कहा, "हत्या नारी की मौत!"

जयन्त ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "हाँ, यही! गाँव के लोगों ने बेचारी अंजना के साथ पाप किया है 'अन्याय!" और यह कहते ही, वह गाँव मे पहुँच, अपने घर की ओर बढ गया।

छह

उस छोटे-से गाँव के समाज मे, भले ही, ऊपर से ऐसा कुछ न दीख पडता हो कि वह नवयुग का प्रतिनिधि है, परन्तु दिल और दिमाग से वहाँ का समाज भी बदल रहा था। वहाँ किसी बडी क्राति का विस्फोट तो नही हुआ किन्तु उसका रूप दृष्टिगोचर होने लगा था। गाँव के पुरुष समाज मे जहाँ पण्डित ज्ञाननाथ का विशिष्ट स्थान था वहाँ उनकी पत्नी कल्याणी का नारी-वर्ग मे सम्मान किया जाता था। किन्तु स्थिति दोनों की विपरीत थी। कल्याणी जहाँ उदार और सदाशय की प्रतिमूर्ति थी वहाँ पण्डित ज्ञाननाथ अनुदारता के प्रतीक थे। दोनो मे जमीन आसमान का अन्तर था। कल्याणी किसी अभाव-ग्रस्त को यदि कुछ दे पाती तो पण्डितजी सदा लेने के इच्छुक रहते। कदाचित् यही कारण था कि उस समाज के अधिकाश व्यक्तियो का यह एक निश्चित मत था कि जयन्त अपनी माँ पर गया है, पिता पर नही। क्योकि जयन्त भी उस समाज की दृष्टि में उदार था।

लेकिन गाँव की राजनीति और धर्म के प्रति मान्यताएँ जिस प्रकार की थी, वे भी, ऊपर से देखने मे भले ही हल्की हो, परन्तु उनकी जड़े पाताल तक पहुँची थी। यही कारण था कि लोग एक-दूसरे को कटुता मे जहाँ मार-पिटाई और हत्या करने तक की क्रियाएँ सम्पादित करते, वहाँ अपने कार्यों मे पाप-पुण्य का भी योग रखते। यद्यपि एक-दूसरे की आलोचना करना वहाँ के समाज का प्रमुख स्वभाव था, परन्तु हँसते को देखकर कुढना और रोते को देखकर सहानुभूति से भर जाना, विश्व के समान, वहाँ का भी चिर-पुरातन से जीवन का अग बना हुआ था।

श्रीधर उस गाँव का गरीब ब्राह्मण था। उसकी लडकी युवा थी किन्तु वह ब्राह्मण ऐसा सुयोग नही पा रहा था कि लडकी का विवाह कर दे। सयोग से उसी समय उसे एक लडका मिला। श्रीधर के पास एक बैल था, जिसे वह खेत जोतने के काम मे लेता था, वही उसका आधार था। किन्तु जब उसे ऐसा अवसर मिला कि लडकी का विवाह कर दे तो प्रश्न

उठा, पैसा कहाँ से लाये। इसी उद्देश्य से वह गाँव के लाला के पास गया किन्तु वहाँ से साफ जवाब मिल गया। फिर वह आया पण्डित ज्ञाननाथ के पास। उसे पता था कि पण्डितजी भी बिना कुछ धरोहर रखे रुपया नही देते। अतएव, लडका उसके हाथ से न निकल जाए, वह अपना सर्वस्व बेच देने के लिए तैयार हो गया। उसने पण्डित ज्ञाननाथ से बात की और पाँच सौ रुपये मे खेत और बैल उनके हाथो सौप देना स्वीकार कर लिया। पण्डित जी के लिए वह सौदा लाभ का था। उन्हे पता था कि श्रीधर धरोहर को वापस नही ले सकता। दो-तीन हजार का माल उन्हे सस्ते मे मिल रहा था। ऐसा अवसर उन्हे काफी समय से नही मिला था। जितना रुपया देना उन्होने स्वीकार किया, दो-तीन वर्ष मे उसका सूद ही इतना होता था जो कि मूल के बराबर पहुँच जाता।

जिस दिन श्रीधर की पण्डित ज्ञाननाथ से यह बात हुई, कागज लिख देने की चर्चा भी हो गई, तभी, यह चर्चा गाँव के कुछ व्यक्तियो के कानो मे भी पहुँची। वह जयन्त के सुनने मे भी आई। जिस व्यक्ति ने उससे यह बात कही, उसीने बताया कि श्रीधर भूखा मर जाएगा। अब उसके पास जीवन-यापन का कोई आधार बच नही रहेगा। कहने वाला एक युवक था जो प्राय जयन्त के पास आता-जाता था। वह जाति का ठाकुर था।

जब जयन्त ने बात सुनी तो वह गम्भीर बन गया। उसने तत्क्षण ही इस बात को अनुभव किया कि सचमुच, यह अन्याय है, पाप है, उसके पिता का।

युवक का नाम जयपाल था, वह बोला, "जयन्तजी, हो सके तो उस ब्राह्मण की मदद करो, उसे सहारा दो।"

जयन्त ने कहा, "हाँ, हाँ, यह काम करना होगा। मैं श्रीधर से मिलूँगा।"

जयपाल बोला, "वह श्रीधर बडा अभागा है। उसका एक लडका था, वह मर गया। लडकी उसकी देवी है। वह नाले के पार रहता है न, इससे उसका गाँव से भी बहुत कम सम्बन्ध रहता है। लडकी भी गाँव मे कम आती-जाती है।"

जयन्त ने कहा, "मै श्रीधर पण्डित से कभी नही मिला। अब मिलूँगा।"

जयपाल ने कहा, "तुम जाओगे उसके घर तो देखोगे कि उसकी लडकी तुम्हारा स्वागत करेगी। वह बोलेगी, तो लगेगा कि जैसे फूल झरते हो। वह लक्ष्मी है।" यह कहते हुए जयपाल उठ खडा हुआ, और वहा से चल दिया।

किन्तु जयन्त जब अकेला रह गया तो वह जैसे और अधिक जड बन गया। उसे लगा कि मानो उसके जीवन का यह सबसे बडा पाप है कि वह ऐसे पिता की सन्तान है कि जो सूदखोर है, लालची है, इन्सान की इन्सानियत का शोषण करता है। वह धन पाता है और मनुष्यता को मारता है। यद्यपि, ऐसा विचार पहले भी अनेक बार जयन्त के मानस मे पैदा हुआ, परन्तु इस समय यह अधिक कठोर और तीव्र बनकर आया। उसे लगा कि उसके पिता के समान, समूचा समाज ही ऐसा है, विश्व ही ऐसा है। तभी उसने कहा, फिर यह विश्व-बन्धुत्व का नारा क्यो? किसलिए? यह आदमी धार्मिक क्यो? यह तो पाखण्डी है, धूर्त है, कमीना है! ये मस्जिद, मन्दिर और गिरजे इन्सान को कुछ नही देते। ये सब पाखण्ड के घर है। इन्हे गिरा दिया जाए।

उसी समय जयन्त की माँ वहाँ आई और बोली, "अरे जयन्त, आज नाश्ता नही करेगा? चल, दूध पी! थोडा-सा हलुवा "

जयन्त जैसे वेदना के साथ फूट पडा, "माँ, तुम, मेरे नाश्ते की बात करती हो, लोगो को एक वक्त भोजन भी "

माँ ने सरल भाव से अपने दाँत निपोर दिये और कहा, "अरे, तो क्या तूने दुनिया का ठेका लिया है? जिसके भाग्य मे जैसा है, वैसा उसे मिलता है। कोई राज-महल मे, तो कोई झोपडी मे है।"

भरी पीडा से जयन्त चीख पडा, "माँ, इन राज-महल वालो ने ही उन झोपडीवासियो को अन्धेरे मे फेंक दिया है। उन्होंने मनुष्यता का खून किया है।"

चकित बनकर कल्याणी बोली, "अरे, तू कर्मलेख की रीत नहीं समझता, बेटा! इस धरती पर सभी को अपने भाग्य के अनुसार मिलता है।"

जयन्त झुँझला पडा, "नही, माँ! यह तो धोखा है, छल है। भाग्य का इस धरती की सम्पदा से कोई सम्बन्ध नही। यहाँ तो जिसमे जितना बल है, वह प्राप्त करता है। कोई छुरी से कत्ल करता है, कोई बन्दूक की

गोली से आदमी का अन्त करता है। देखती नही, चोर-डाकुओ का समूह दिन-दूना बढ रहा है। स्वार्थपरक मनुष्य अन्धा बन गया है। भाग्य का तो बहाना है।

"धर्म भी लोगो की आँखो मे धूल झोकता है, मूर्ख बनाता है। त्रस्त इन्सान को इसने और अधिक जड बना दिया गया है।"

माँ ने कहा, "अरे, तेरे मन मे क्या है ?"

जयन्त बोला, "माँ, मेरे पिता भी अच्छे आदमी नही। सच, उदार नही।"

कल्याणी जैसे आसमान से धरती पर गिर पडी। वह स्तब्ध रह गई। उसका पुत्र अपने पिता के प्रति ऐसी भावना रखता है, यह उसे अच्छा नही लगा। उसे दीखा कि जैसे वह युवा जयन्त पागल हो गया है। कुछ वर्ष शहर मे क्या पढ आया, अपना दिमाग बिगाड लाया है। धर्म को भी बेकार मानता है।

किन्तु जयन्त ने फिर कठोर बनकर कहा, "मै ऐसे आदमी को कसाई मानता हूँ, इन्सान का खूनी।"

"जयन्त, मूर्ख कही का !" कल्याणी चीख पडी, "तू अपने बाप को ऐसा कहता है। तू पितृ-द्रोही है, इस कुल का कलक है।"

किन्तु जयन्त तो स्वय क्रोध मे था। वह युवक था। उसकी नसो मे नया खून था। माँ की बात सुनते ही वह मेज पर हाथ मारकर बोला, "हाँ, मैं ऐसी अवस्था मे द्रोही बनूँगा। मेरे पिता पाप का पैसा कमाते हैं न, वह इन्सान के खून से भरी दौलत घर मे लाते है, तो इतना देखकर तुम भी तुम औरत बनकर भी "

कल्याणी इतनी दृढ नही थी कि पुत्र की उस भारी बात को सहार लेती। वह दरवाजे पर खडी थी, उसी का सहारा लेकर ऊपर नीले आसमान की ओर देखने लगी। क्रोध और घृणा से उसकी आँखे भर आई।

तभी जयन्त फिर बोला, "वह ठाकुर का लडका जयपाल मुझे अभी बहुत कुछ बता गया है। वह कह गया है कि मेरे पिता जी "

कल्याणी ने कहा, "अरे, ये ठाकुर सभी ईर्षा करते हैं। ये समझते है कि यह ब्राह्मण का घर "

जयन्त बात को काटते हुए बोला, "नही माँ, कुछ लोग वास्तविकता भी समझते है। जयपाल भला आदमी है।"

कल्याणी ने कहा, "लोग दूसरे के घर मे आग लगी देखकर प्रसन्न होते है।"

जयन्त खिन्न भाव से मुस्कराया, सूखे भाव से, घृणा के साथ, तनिक हँस भी दिया। उसने कहा, "माँ, तुम भी वास्तविकता से दूर हो, अपना दोष छिपाती हो। तुम अपने घर को ही सर्वश्रेष्ठ मानती हो। अपने पति को देवता।"

यह सुनकर कल्याणी, मन से पीडित बनकर भी, जैसे बनावटीपन से हँस दी, "अरे, अब तू कैसा होता जा रहा है, जयन्त! कोई अपना घर बनाता है और तू बने हुए को बिगाडना चाहता है।"

जयन्त बोला, "माँ, मत भूलो कि तुमने मुझे पैदा किया है। मेरे मन मे जो कुछ डोलता है, आता जाता है, वह सब तुम्हारी देन है। बता तो, तुम्हे कसाई बेटा अधिक पसन्द आता है? और मै यह नही बनूँगा। मै अपने स्वार्थ के लिए दूसरे का वध नही करूंगा।"

कल्याणी ने इतनी बात सुनी तो जैसे उसकी छाती फूल गई। वह गद्गद् हो उठी। किन्तु उसका जयन्त जिस बात पर टिका था वह तब भी उसके लिए शोभनीय नही थी। क्योकि यदि उसने पुत्र को पाल-पोसकर बडा किया है तो उसका पिता भी यह चाहता है कि उसका पुत्र समाज मे सर्वश्रेष्ठ रहे, सम्पन्न रहे। पडित ज्ञाननाथ जो कुछ कर रहे थे वह सब पुत्र के लिए ही तो था। अतएव, अपने मन मे आई इस बात को लेकर ही कल्याणी बोली, "बेटा, तेरे पिता भी जो कुछ करते है वह तेरे लिए ही है। यह पैसा भी तेरे लिए है।"

यह सुनते ही जयन्त फिर जोर से बोल पडा, "माँ, यह पैसा अशुभ है। गाँव की लाश बनाकर यदि मेरे पिता उस पर सोने का महल खडा करे तो उसमे मुझ सरीखा इन्सान नही रह सकेगा, कोई भूत-प्रेत ही रहेगा। गाँव का अभिशाप पाकर न मैं फल-फूल सकूँगा, न मेरा घर। हम सभी का अन्त हो जाएगा। हमे आशीष चाहिए, लोगो का स्नेह चाहिए।" जयन्त बोला।

"मनुष्य धन पाकर भी कगाल है, फकीर है। उसे भी इन्सान

की सदाशयता चाहिए। इस जगत मे सभी की झोली फैली है; एक-दूसरे से सभी की याचना है।"

माँ ने कहा, "पर यहाँ कुछ नही मिलेगी। इस गाँव मे जंगली बसते हैं। तुझे पता नही, गाँव के लोग तेरे पिता से कुढते है, तेरे पिता की।" मौत चाहते है

मानो आतुर बनकर, संयत भाव मे जयन्त बोला, "लोग ठीक चाहते है, माँ!" उसने कहा, "तनिक सोचो तो, दूसरो की विवशता से लाभ उठाने वाला सूदखोर क्या समाज की सदाशयता का पात्र बनेगा? यह जयन्त जब तुमने पैदा किया है, तुम्हारे विचारो से बना है, तो यही तुम्हारा गुरु बनने लगे, तुम्हे ठगने लगे, तुम्हारी विवशता का लाभ उठाने लगे, तो क्या तुम्हे अच्छा लगेगा! माँ, इस समार की यही रीत है। 'लो और दो' का व्यापार इस समाज मे चलता है। तुम गेद जितने जोर से दीवार मे मारोगी वह उतने ही वेग से वापस आएगी। व्यक्ति भी जब समाज को लूटेगा, उसका शोषण करेगा, इन्सान के प्रति क्रूरता का प्रदर्शन करने पर सन्नद्ध होगा, तो समाज भी उसे नही बख्शेगा। वह उसकी कब्र खोद देगा। तिरस्कार करेगा, लाँछना देगा। धार्मिक और विचारक गाँव के पडित मेरे पिताजी भी आज यही पा रहे है। आशीष के स्थान पर वे अभिशाप का सग्रह कर रहे है। याद रखो, पिता का पाप पुत्र को भोगना पडेगा!"

जैसे झल्लाकर माँ ने कहा, "तू पागल हो गया है। वास्तविकता से दूर जा रहा है।"

जयन्त चुप हो गया, क्योकि उसने समझा कि इस माँ से कुछ कहना बेकार है। उसका मुँह भी सूख गया था। वह बहुत-कुछ कह चुका था। अतएव, वह खडा हो गया। बाहर जाने लगा।

कल्याणी ने कहा, "अब कहाँ चला रे!"

जयन्त ने कहा, "मरीज देखने।"

"दूध नही पियेगा?" कल्याणी ने उसे फिर टकोरा।

किन्तु जयन्त नही बोला, वह चला गया। उसे दूसरे गाँव जाना था। सूर्य चढ गया था। माँ ने उसे देर कर दी थी, धूप तेज पड रही थी। जब वह रास्ते मे एक पेड के समीप पहुँचा, तो देखता है, पेड की डाल पर बने

घोसले मे उडता हुआ एक बडा पछी आया और उस घोसले मे रखे पक्षी के अण्डे को मुँह मे दबाकर उड गया है। यह देख, पास बैठा पक्षी तडप गया। कुछ और पक्षी भी वहाँ एकत्र हो गए। वे सभी चीत्कार करने लगे। उस करुण दृश्य को देखकर, सहमा हुआ जयन्त उस पेड के पास रुक गया। उसकी आँखो मे अँधेरा छा गया। उसे लगा कि इस सृष्टि-तल पर इस क्रूर व्यापार के अतिरिक्त और कुछ नही है। और फिर भी लोग ईश्वर का नाम लेते है। उसे पुकारते है। उसकी गोद मे ही आश्रय पाना चाहते है।

उसने देखा कि पल-भर मे बहुत-सी चिडियाँ वहाँ आ गई। वे सभी ची-ची करती हुई उस पेड के चारो ओर उडने लगी। तभी जयन्त ने अनुभव किया कि आदमी से अधिक इन पक्षियो मे सामाजिकता है, अपनत्व की भावना है। ये अपने साथी का दर्द पहचानते है। उसकी पीडा मे डूब जाना चाहते है।

जयन्त फिर आगे बढा। वह जिस रास्ते पर जा रहा था, उसके समीप ही, दूसरे गाँव का श्मशान था। वहाँ से जब वह निकला, तो देखा, पेड के साये मे एक व्यक्ति बैठा था। वह उदास था। एकटक उस ओर देख रहा था जहाँ एक चिता की ठण्डी राख पडी थी। उस व्यक्ति को देख, पहचानते ही, जयन्त उसकी ओर बढ गया और बोला, "रामदास भाई, आप · "

जयन्त को देख वह रामदास खडा हो गया और बोला, "हाँ, पण्डितजी मै हूँ।"

"यहाँ कैसे भाई! इस स्थान पर?"

रामदास ने दूर पर ठण्डी बनी चिता की राख को लक्ष्य करके कहा, "वह मेरे अरमानो की चिता है जो कल सुलगी थी आज ठण्डी हो गई है।"

सुनते ही जयन्त बोला, "तो क्या, रामदासजी ··"

रामदास ने कहा, "वह मेरी पत्नी की चिता है जिसने जीवन के दस वर्ष मेरे साथ बिताये। मेरी मुसीबतो मे साथ दिया। अब उसीके कारण "

"ओह, तुम पर ऐसा वज्रपात हुआ, रामदास भाई !"

रामदास ने कहा, "वैसे तो मै प्रायः यहाँ आकर बैठता हूँ। यही मेरी माँ सोई है, पिता सो चुके है, मेरा एक लडका भी, पर पत्नी भी यहाँ आकर सो गई, तो मुझे लगने लगा है कि दुनिया मे यही जमीन का छोटा सा टुकडा सर्वश्रेष्ठ है। यहाँ बैठकर मुझे शान्ति मिलती है।"

जयन्त ने कहा, "यह तुम्हारे साथ बडा अन्याय हुआ। मुझे पता है कि तुम्हारी पत्नी ने ही तुम्हे डूबते से उबारा था। यह मुझसे किसीने कहा था।"

रामदास बोला, "हाँ, पण्डितजी, यह औरत मेरे जीवन मे ऐसी आई, इतनी ममता लेकर मेरे जीवन मे प्रविष्ठ हुई कि मुझे अँधेरे से प्रकाश मे खीच लिया। सभी तो जानते है कि मै विवाह से पहले चोर था, पक्का बदमाश था।"

जयन्त ने कहा, "तुम्हारी पत्नी देवि थी, सच्ची नारी।"

रामदास बोला, "पर जिसने मुझे जीवन दिया, मेरा चोला बदल दिया अब देखता हूँ कि वह भी सो गई। मुझसे दूर हो गई। गगा की एक लहर मेरे पास तक आई और मुझे पखारकर फिर उसी गहराई मे मिल गई।"

जयन्त ने साँस भरी और अपनी दृष्टि पेड की एक शाखा पर ले जाकर देखने की चेष्टा की जैसे वही रामदास की पत्नी हो, जो तब भी मुस्करा रही है और अपने पति की उदासी देख रही है।

रामदास बोला, "पण्डितजी, इस औरत ने मेरी बुरी आदत छुडाने के लिए भूखा रहना पसन्द किया, परन्तु चोरी मे लाया मेरा पैसा या ज़ेवर स्वीकार नही किया। यह जीती, मैं हार गया। जब मेरा लडका मरा था, इसने रोते हुए कहा था कि तुम्हारे पाप के कारण ही मेरा लडका मर गया। और सच, पण्डितजी, तभी मैंने अनुभव किया कि चोरी जीवन का सबसे बडा अपराध है। मैंने अनेको निर्धनो को लूटा, निराधार विधवा नारी को। अपने द्वारा की गई अनेक चोरियो मे, मैने सहज ही अनुभव किया कि मेरे द्वारा जो कुछ चुराया गया, वह जिसका था उसका सर्वस्व ही था, उसका प्राण! एक विधवा जिसके यहाँ मैंने चोरी की वह अपनी पुत्री का विवाह करने के लिए पूरे दस वर्ष से मज़दूरी कर रही थी।

विवाह से एक मास पूर्व ही मैंने उसके घर चोरी की। इसका प्रहार उस नारी की छाती पर ऐसा पडा कि वह तिलमिला गई। परिणामस्वरूप, लडकी का विवाह तो वह नही कर सकी परन्तु उस पीडा से भरी वह स्वय मर गई।"

एकाएक जयन्त ने कहा, "राम-राम! बडा पाप किया तुमने!"

रामदास ने कहा, "और आज मै उन्ही पापो का फल पा रहा हूँ। इस श्मशान मे जब आकर बैठता हूँ तो मेरे प्राण छटपटाते है, रोते है।"

जयन्त ने कहा, "बेशक!" उसने देखा कि रामदास रो पडा है। जैसे उसके प्राणो का रोदन उसकी आँखो मे उतर आया है।

रामदास बोला, "मेरा गुरु चला गया और मै रह गया।"

जयन्त ने कहा, "तुम भी जाओगे, भाई। यहाँ कोई नही रहेगा। जो आता है, वह जाता ही है।" वह बोला, "तुम्हारी पत्नी एक बहुत बडी स्मृति सौप गई है, उसकी रक्षा करना। वह तुम्हे आदमी बना गई है, सच्चा इन्सान!"

रामदास ने कहा, "हाँ, पण्डितजी! वह मुझे इन्सान बनने का उपदेश दे गई है। मैं उसकी रक्षा करूंगा।"

जयन्त ने पूछा, "और कोई सन्तान है?"

रामदास बोला, "एक लडकी है, बच्ची!"

जयन्त ने कहा, "तुम उसी को योग्य बनाने का प्रयत्न करो। उसी के रूप मे अपनी पत्नी के दर्शन करो, रामदास भाई! वह स्मृति है। तुम्हारी पत्नी की धरोहर सम्पत्ति!" यह कहते हुए जयन्त ने विदा ली और आगे बढ गया। उसी समय उसके मन मे बात आई, एक मेरे पिता है, दम्भी, नितान्त क्रूर। वह चोरी नही करते, तो डाका डालते है। समाज की दुर्बलता का लाभ उठाते है। और मेरी माँ भी नही समझती कि उसका पति समाज का आशीष नही पाता, अभिशाप पाता है। वह नर नही, नर-पशु बना है।

अपने मन मे भरे इन्ही विचारो को लिये जयन्त उस गांव मे प्रविष्ट हुआ। वह एक घर के द्वार पर पहुँचा। उसे देखते ही घर की वृद्धा ने एकाएक उल्लास से भरकर कहा, "तुम आ गये बेटा, जीते रहो। भगवान तुम्हारा मगल करे!"

सात

नगर मे मेडिकल कालेज के एक अध्यापक सूफी मत के थे। अध्ययन काल मे जयन्त उनके पास आता-जाता था। एक बार उसी प्रोफेसर ने जयन्त को बताया था, "जीवन तो आता और जाता है परन्तु इस भोगवाद की दौड मे कोई इसे समझ नही पाता।" किन्तु एक बार जब जयन्त उस अध्यापक के साथ पहाड पर गया, तो वहाँ, प्रोफेसर के निकट रहकर, उसने देखा कि वह प्रोफेसर रात के अँधियारे मे जबकि ससार सोता है अपने एकान्त मे बैठा जाने क्या सोचा करता है। अनेक बार जयन्त ने पाया कि उस अवस्था मे वह प्रोफेसर रोया हुआ भी देखा गया है। वैसे वह प्रोफेसर बडा सैलानी था। यद्यपि वह आयु से प्रौढ था, परन्तु शरीर की चुस्ती मे किसी भी नौजवान से कम नही था। वन-पर्वतो मे घूमना उसे अधिक प्रिय था। सुबह से निकलता तो डेरे पर शाम को लौटता। अपूर्व साहसी। एक बार जब वह जयन्त को साथ लेकर एक पहाड की चोटी पर चढा तो सयोग की बात थी कि वही पर उनका एक भालू से सामना हो गया। जयन्त उस हिंस्र पशु को देखते ही डर गया। वह चिल्ला पडा, "प्रोफेसर साहब भालू "

किन्तु प्रोफेसर ने निरे शान्त और स्थिर स्वर मे कहा, "चिन्ता न करो। डरो नही।"

और भालू उन दोनो की तरफ दौडा आ रहा था। उस अवस्था मे उनके लिए कही भागने का भी रास्ता नही था। अतएव जयन्त ने कहा, "यह खूँखार जानवर "

"अरे, हाँ भाई! यह जानवर भी एक जीव है! मुझे खाना चाहेगा तो खा लेगा।"

और तभी जयन्त ने देखा कि वह भालू उस शान्त खडे प्रोफेसर से कुछ फासले पर खडा हुआ फुनफुनाया और अपनी लाल-लाल आँखो से देखता हुआ दूसरी ओर को मुड गया।

उसी समय प्रोफेसर मुस्करा दिया और बोला, "देखा जयन्त, इस भालू ने मुझे अपना खाद्य नही समझा। मुझे छोड गया।"

जयन्त ने साँस भरकर कहा, "परन्तु प्रोफेसर साहब, यह आपका साहस भी अपूर्व है।"

प्रोफेसर हँसा, "जयन्त जी, यह साहस की बात नही, विश्वास की बात है। यहाँ से कुछ और आगे बढो तो तुम्हे हाथी मिलेगे, लडाकू, खूनी। वही पर दहाडते हुए शेर भी।"

जयन्त ने पूछा, "तो आप यहाँ पहले आ चुके है ?"

प्रोफेसर ने कहा, "इस बार का आना पाँचवा है। मै यही अपनी छुट्टियाँ बिताता हूँ। जब पत्नी और पुत्री थी तो वे भी आते थे। अब वह नही तो अकेला ही यहाँ आकर शान्ति पाता हूँ। आओ चलो, देखते हो न वह गाँव, हमे आज वही जाना है। उस गाँव के निकट एक झरना है, बडा शीतल और मधुर पानी है उस झरने का। गाँव छोटा है, लेकिन वहा के निवासी गरीब होते हुए भी मिलनसार है, अपने अतिथि की सेवा करते हैं। मेरे कई परिवार परिचित है।"

उस दिन प्रोफेसर के हाथ मे जो झोला था उसमे कुछ फल, मिठाई और खिलौने थे। मिठाई और फल की बात तो जयन्त सोच सकता था परन्तु खिलौने किसलिए थे, यह विषय उसके लिए जिज्ञासा का था। अत-एव, उसने पूछा, "प्रोफेसर साहब, ये खिलौने ?"

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ, भाई। उस गाँव मे मेरे कुछ आत्मीय है, सखा हैं। वहाँ उनके बच्चे होगे। मैं जाऊँगा, तो वे बच्चे जरूर मेरा परिचय पाएँगे। उन्हे कुछ देते मुझे अच्छा लगेगा।"

जयन्त ने कहा, "इस दुनिया की यह रीत भी है।"

प्रोफेसर बोला, "हाँ, हाँ, यही रीत है। किसी को अपना बनाना हो तो पहिले स्वय हाथ बढाओ। बच्चे अपनत्वता को अधिक समझते है।" प्रोफेसर ने कहा, "दो वर्ष पूर्व जब मै यहाँ आया था तो एक परिवार की बच्ची मुझे बडी भली लगी थी। अब कुछ बढ गई होगी। जाऊँगा तो पहचान भी नही पाएगी। और तब तो मेरी गोद में खेलती थी। मुझे पापा कहने लगी थी। समझते हो न ! आज तो मैं जाऊँगा और लौट आऊँगा। परन्तु पहले मैं कई-कई दिन उस गाँव मे रहता था। मै इस प्रकार पहाड के अन्य गाँवो मे भी जाता था।"

उस समय जयन्त मौन था। वह हिम-शृंग को देख रहा था। उसे लग रहा था कि चारो ओर जैसे प्रकृति अपना शृंगार करके नवोढा बनी खडी है। वह अपने समीप अपने किसी भी पुरुष का स्वागत करने के लिए प्रस्तुत है। अहा! कितना भव्य और अलौकिक दृश्य था, वह!

तभी प्रोफेसर बोला, "जयन्त भाई, इस जगत मे सभी अपने है। आवश्यकता इस बात की है कि पहले यह समझ लिया जाए कि हम जिस जगत मे रहते है, वहाँ कोई गैर नही है, हमारा किसी से दुराव नही, किसी से छिपाव नही।"

जयन्त बोला, "प्रोफेसर साहब, ऐसा बनना भी कठिन है।"

तुरन्त ही प्रोफेसर ने कहा, "हाँ-हाँ, यही तो! लोग अपना अधिकार, धन, बुद्धि सभी सुरक्षित रखना चाहते है। और कहते यह है कि हम सामाजिक है, हम धार्मिक है, हम सदाशयता से पूर्ण अरे, नही, नही, सभी अपूर्ण है, सभी अकेले है, सभी भय और विपत्तियो से भरपूर बने दीखते है। समझते हो न, मै तुमसे छिपाव करता हूँ, तुम मुझसे। इसलिए समीप रहकर भी हम दूर है, एकाकी है, अशान्त है, बर्बर है, अपने-आप मे आत्महीन है।"

जयन्त ने कहा, "प्रोफेसर साहब, यह कैसे हो? सभी की अवस्था तो अलग है।"

प्रोफेसर बोला, "नही, नही, यह दुराव इसलिए है कि मैं जीवन की दौड मे तुमसे आगे निकलना चाहता हूँ, मै जीवन का ऐश्वर्य और भोग तुमसे अधिक पाना पसन्द करता हूँ। लोग जिस समाजवाद की कल्पना करते है, वह कही नही है परन्तु तुम चलकर देखो यह उस गाँव मे है। वहाँ किसी का छिपाव नही, किसी का भेदभाव नही।"

जयन्त गम्भीर बना था। बोला, "वे लोग सुख मे है। सन्तोषी है।"

"किन्तु ये शहराती लोग उनके उस सुख मे भी व्याघात करते है।" प्रोफेसर ने कहा, "एक बार कोई शहराती उस गाँव मे जा पहुँचा था और वहाँ की एक युवा लडकी को"

जयन्त बोला, "शहर वाले इन पहाडो मे आकर ऐसे ही जहरीले कीडे फैलाते है।"

"पाप करते है, ये लोग ।" प्रोफेसर ने कहा, "इसीसे ये गाँववासी अब शहरवालो से डरते है । अपने यहाँ ठहराने मे कतराते है । पता है, जब मैं प्रथम बार उस गाँव मे पहुँचा तो मुझे भी लोगो ने सदेह की दृष्टि से देखा था । कोई पास आते भी कतराता था, किन्तु मै तो धीरे-धीरे उनका सखा बन गया ।"

उसी समय वे दोनो गाँव के समीप पहुंच गये। जब वे एक खेत के पास से निकले, तो उस खेत मे काम करते हुए किसान को देख, प्रोफेसर रुका और उसने उस व्यक्ति को पास बुलाया । शायद उसने प्रोफेसर का नही पहचाना था । इसलिए प्रोफेसर ने स्वय ही कहा, "अच्छे हो, खुश हो ।"

आवाज पहचानी तो वह किसान प्रोफेसर की ओर झुक गया । उसने कहा, 'मै आपको पहचान नही सका था ।"

प्रोफेसर हँसा, "हाँ, अब मैने दाढी बढा ली है और मेरे सिर पर टोप है"।

किसान ने हँसकर कहा, "हाँ-हाँ, इसीलिए ।"

प्रोफेसर ने पूछा, "और लोग गाँव मे सब ठीक तो हैं ?"

"जी, कृपा है, आप भी चलिए । मै अभी आया ।"

प्रोफेसर बोला, "तुम अपना काम करो ।" यह कहते हुए वह चल दिया । तभी प्रोफेसर ने जयन्त को बताया कि यदि किसी को अपना बनाना हो तो सर्वप्रथम उस जैसे बनो । वह बोला, "मै इस गाँव मे इन किसानो के साथ खेतो मे काम कर चुका हूँ । उसमे मुझे आनन्द आया है, इनको भी ।"

जयन्त ने कहा, "मनुष्य की यह परम्परा पुरानी है । पर अब मनुष्य बदल चुका है । अपने को श्रेष्ठ मानता है ।"

कठिन भाव मे हँसकर प्रोफेसर ने कहा, 'हाँ, भाई, ठीक है !" वह बोला, "यदि मैंने चार अक्षर पढ लिए तो इसके यह अर्थ नही कि मैं समाज का गुरु बन गया । यदि मेरे पास पैसा है तो उससे भी मैं विशेष नही बना । पर आज यही देखा जाता है । मनुष्य इसी दम्भ मे डूब गया है । जानते हो, इससे आदमी ने बहुत कुछ खोया है, पाया कुछ नही । मनुष्य अपने जीवन की समूची सम्पदा खो चुका है । आज हम जिन भौतिक पदार्थों को पाकर सुखी है, वह केवल ठीक ऐसा है कि जैसे परेशान व्यक्ति नशा कर ले और कुछ क्षणो के लिए अपनी वास्तविकता भूल जाए ।

सब जानते है कि ये पदार्थ हमारी मौत को निमन्त्रण देते है, जीवन का आवाहन नही करते।"

दोनो गॉव मे प्रविष्ट हो गये। जब वे एक मकान के द्वार पर जाकर रुके तो प्रोफेसर ने घर के मालिक को आवाज दी। उत्तर मे एक लड़की बाहर आई जिसे देख प्रोफेसर ने जयन्त से कहा, "यही है वह लडकी। पर अब पहचानती नही है।" उसने लडकी से पूछा, "तेरा चाचा है?"

लडकी ने कहा, "नही, खेत पर है।"

"और माँ ?

"वह है। तुम कौन हो ?"

"जाओ, अपनी माॅ से कहना शहर से मास्टरजी आये है।"

सुनकर लडकी मुड गई। कुछ ही देर मे लड़की के साथ एक स्त्री आई और उल्लास तथा चकित बनकर बोली, "अरे, तुम मास्टरजी !"

"हाॅ, मैं हूॅ नर्वदा की माॅ! कहाँ है, मलखू ?"

"वह खेत पर है। आते होगे, बैठो। अन्दर आ जाओ।"

प्रोफेसर ने कहा, "अब अन्दर कैसे आएँ, यह नर्वदा तो बडी हो गई। पहचानती नही। हमे तो यही बाहर चारपाई डाल दो।"

उस नारी ने तभी नर्वदा से कहा, "इन्हे राम-राम कर! ये मास्टरजी हैं। तुझे खिलौने और मिठाई देते रहे है। तुझे गोद मे "

किन्तु नर्वदा लजा गई, बोल नही सकी। उसके गोरे गालो पर भी लाली दौड गई।

चारपाई डाल दी गई और वे दोनो बाहर बैठ गये। उसी समय एक-एक करके और कई व्यक्ति आ गए। मलखू भी आ गया। बाते चली। प्रोफेसर ने सभी के घर की बात सुनी, अपनी भी कही। उसने बता दिया कि इस बीच मे उसकी पत्नी गई, पुत्री भी चली गई। अब वह अकेला है। इसी प्रकार जब उसने गॉव के कई व्यक्तियो के विषय मे जानना चाहा तो पता चला कि दीना मर गया, पल्टू भी, रामसुक्खा बीमार है और चेतू गाँव छोडकर शहर चला गया है। इस प्रकार प्रोफेसर ने सहज ही समझ लिया कि केवल उसी की परिस्थिति मे परिवर्तन नही हुआ, इस छोटे से गॉव मे भी बहुत-कुछ बदल गया है। कुछ पुरानापन गया है, कुछ नयापन आया है। विश्व

के समान, यहाँ भी पीडा है, अभाव है। दुर्बल इन्सान अपनी डगर पर चले जा रहा है, चलता ही जा रहा है।

जब एक-एक कर सभी व्यक्ति वहा से उठ चले, तो तभी प्रोफेसर ने जयन्त को सुनाया कि ये लोग जो तुम्हे ऊपर से नगे और दीन दिखाई देते हैं, वास्तव मे भगवान के प्रति किसी भी विद्वान् और स्थितप्रज्ञ व्यक्ति से कम इनके प्राणो मे आस्था नही है ये। भी धर्म, देश और जाति को मानते है। वह बोला, "यह मलखू महायुद्ध की लडाई मे भाग ले चुका है। इसके पिता को अग्रेजो ने फाँसी पर चढा दिया था, क्योकि उसने एक अग्रेज अफसर के साथ आए पूरे पचास गोरो को मौत के घाट उतार दिया था।

एकाएक जयन्त ने कहा, "ओह! वह बहादुर था।"

प्रोफेसर बोला, "ये लोग शेर से नही डरते। विपत्ति का वरण करते है। प्रकृति की गोद मे पले ये इन्सान अपना सर्वस्व भगवान के चरणो मे समर्पित किये रहते है। ये अटूट विश्वासी है। स्वय देवता है तो दूसरो को भी देवता मानते है। यह मलखू पेशन पाता है। खेत जोतता है। लडाई पर इसे कई तमगे मिले थे। उनको लगाकर कभी-कभी शहर जाता है। अधिकारियो द्वारा इसका सम्मान किया जाता है।"

उसी समय मलखू एक रकाबी मे कुछ फल लाया, साथ मे चाय भी थी।

देखकर प्रोफेसर ने कहा, "मलखू भाई, तू बैठ जा। बात कर। कुछ अपनी सुना, कुछ हमारी सुन। देखता हूँ अब तू बूढा हो गया है। और सुना है, वह शारदा माँ अभी जीवित है ?"

मलखू ने कहा, "जी हाँ, अभी है, परेशान है। अब चारपाई पर पडी रहती है। चल-फिर कम पाती है।"

प्रोफेसर ने कहा, "वह भली औरत है।" यह कहते हुए उसने झोले मे से कुछ मिठाई निकाली और खिलौने भी। वे सब मलखू के हाथ पर रखकर बोला, "किसी के घर मे बच्चा हो तो ये खिलौने दे देना। अब तेरी शारदा तो "

मलखू ने कहा, "जी हाँ, अब बडी हो गई।"

प्रोफेसर ने कहा, "उसने मुझे नही पहचाना। मेरा रूप भी बदल गया। जब मेरा घर बदला तो मैं भी बदल गया।"

मलखू ने कहा, "बाबू, भगवान की मर्जी है। आपकी लडकी तो बड़ी भली थी।"

"अरे, हाँ, वह प्रमदा मुझे अब भी याद आती है।" प्रोफेसर ने कहा, "भैया, इन्ही विविध अवस्थाओ मे आदमी बँटा है, बँधा है। इस इन्सान का मन अनेक झरोखो से अपना मुँह निकालता है, जीवन देखता है। बोल, तू नर्वदा का विवाह कब करेगा? मुझे खबर देना। मै आऊँगा। इस बहाने भी इधर घूम जाऊँगा।"

मलखू ने कहा, "बाबू, इसी की चिन्ता है। लडका देख रहा हूँ। अगले साल कर देना है।"

प्रोफेसर खडा हो गया और बोला, "मैं शारदा माँ के पास जाऊँगा। एक बार उसके पैर छुऊँगा।"

जयन्त को साथ लेकर प्रोफेसर चल दिया। मलखू ने कहा, "खाना बन रहा है, देर न कीजिएगा।"

प्रोफेसर ने कहा, "अच्छा!" रास्ते मे उसने जयन्त को बताया कि हम जहाँ चल रहे हैं, वह एक वृद्धा का घर है। उसका नाम शारदा माँ है। एक प्रकार से वह समूचे गाँव की माँ है। सभी की ममतामयी है, दूसरे के दु ख को उसने सदा अपना समझा है। जैसे दूसरे की आँखो के आँसू उसकी अपनी आँखो के हो।"

जयन्त बोला, "वह अपूर्व है, पूजनीय है।"

प्रोफेसर बोला, "समूचा गाँव उसके चरणो मे सिर झुकाता है। उसका अपना कोई नही है, लेकिन अब सारा गाँव ही उसका है। यह है, उस शरदा माँ का घर! आओ, अन्दर चले। देखे।"

अन्दर जाते ही एक चारपाई को लक्ष्य कर प्रोफेसर ने पुकारा, "शारदा माँ!"

क्षीण स्वर मे शारदा माँ ने कहा, "कौन है, बेटा!"

"मै हूँ मास्टर अतुल!" और पास जाते ही प्रोफेसर अतुल ने अपना सिर उस वृद्धा के चरणो मे झुका दिया।

आठ

प्रोफेसर अतुल ने शारदा माँ के चरणो मे अभिवादन किया और उसके समीप धरती पर बैठ गया। वही जयन्त को बैठाया। प्रोफेसर शारदा माँ से बात कर रहा था और जयन्त देख रहा था कि उस घर मे ऐसा कोई सामान नही था कि जिसे देखकर यह समझा जाए कि वह किसी का घर था। जब प्रोफेसर वहाँ से चला तो उसने कुछ रुपये शारदा माँ के हाथ पर रखे और कहा, "माँ जानता हूँ, इनका तुम्हारी दृष्टि मे कोई मूल्य नही, लगाव नही, पर अपनी आदत के अनुरूप ये रुपये तुम किसी को दो तो मुझे भी सन्तोष होगा।"

इतना सुना तो शारदा माँ ने तनिक मुस्कराया और अपनी बूढी आँखो से हँस दिया।

प्रोफेसर ने कहा, "तुमने बहुत ज़माना देखा है, शारदा माँ!"

शारदा माँ ने कहा, "मुझे लगता है कि सब-कुछ अभी-अभी बीता है। कल ही मै इस धरती पर आई और आज बुढापा मिल गया। समय जाते पता नही चलता।"

"हाँ, हाँ, जो बीत गया वह छोटा लगता है।" प्रोफेसर ने फिर शारदा माँ के पैर छूए और चल दिया।

जब वह बाहर आया तो जयन्त से बोला, "कुछ समय की बात है कि एक बार यहाँ कुछ गोरे आ गये थे। वे एक लडकी को उठाकर ले जाना चाहते थे। पर इस शारदा माँ ने इतनी बहादुरी दिखाई कि वे सब नि शक्त बनकर लौट गये। तब यह शारदा माँ जवान थी। एक गोरे की बन्दूक छीनकर उनसे लडने लगी थी। एक सिपाही की गोली इसके भी लगी थी, किन्तु इसने हिम्मत न हारी। मरना स्वीकार किया, पर गोरो को अपने घर में नही घुसने दिया। वह लडकी भागकर इस शारदा माँ की शरण मे आ गई थी।"

जयन्त ने साँस भरकर कहा, "इस धरती पर कुछ ऐसे प्राणी भी आते हैं जो बरबस दूसरो का उपकार करने मे सफल बनते है।"

प्रोफेसर बोला, "यह सस्कारो की बात है। इस शारदा माँ का पति

और पुत्र देश के काम आ गये। परन्तु यह कभी बोली नही, सदा दूसरों के लिए समर्पित रही। परिणामस्वरूप, गाँव के प्रत्येक घर की माँ बन गई।"

वे दोनो लौटे तो देखा मलखू उनकी प्रतीक्षा मे था। उसने दोनो को भोजन कराने के लिए बैठाया। रोटी के साथ केवल साग था परन्तु उन्हे खाते समय जयन्त को लगा कि जैसे उस भोजन मे स्वर्गीय आनन्द मिल रहा है। दिन ढल गया था। दोनो को लौटना था। अतएव, जब उन्होने मलखू से विदा ली तो उस समय पडौसी भी आ गये, उनमे बच्चे भी थे। प्रोफेसर ने उन बच्चो को पैसे दिये और वह उन सबसे विदा लेकर, जयन्त के साथ फिर अपने रास्ते पर चल पडा। सूर्य पहाड की ओट मे जा रहा था, इसलिए उन्हे रास्ता जल्दी पार करना था। किन्तु रास्ते मे वे दोनो जिस प्रकार का प्रसग उठाये हुए थे, वह उनका रास्ता बढा रहा था। आश्चर्य की बात कि उनका ध्यान भी उस ओर नही था। प्रोफेसर कह रहा था, "उस शारदा माँ को देखकर कोई ऐसी कल्पना भी नही कर सकता कि उसके एक छोटे-से जीवन का इतना बडा इतिहास बन सकेगा। तुमने देखा कि उसके पास कुछ नही था। मानो उसकी कोई इच्छा नही। और जीवन उसका भी कट रहा है। वह जीवन-गगा की धारा के समान सभी को कुछ-न-कुछ देने मे समर्थ है।"

जयन्त ने साँस भरी और कहा, "प्रोफेसर साहब, ऐसे ही प्राणी पुण्य हैं।"

तुरन्त ही प्रोफेसर बोला, "मैं यहाँ यही पाने आता हूँ। इस शारदा माँ को देख मैं अपने को तुच्छ मानता हूँ। इसका दर्शन करके पुण्य का संचय करता हूँ।

जयन्त ने कहा, "यह सत्य है। शारदा माँ पुण्य-तीर्थ है।"

प्रोफेसर ने कहा, "हम दम्भी हैं, भोगवादी है, निरे अवसरवादी। बोलो, समाज से लेने के अतिरिक्त हमसे दिया क्या जाता है?"

अब तक सूर्य पहाड की ओट मे जा चुका था। वे दोनो जिस मकान मे ठहरे थे वह अभी दूर था; परन्तु दिखाई देने लगा था।

प्रोफेसर और जयन्त उस समय मौन हो गये। ठण्ड बढ गई थी। प्रोफेसर

ने कन्धे पर पडा कोट पहन लिया था। वह चलता जाता था और हाथ मे ली हुई पहाडी बेत को रास्ते मे पडे हुए पत्थरो पर मारता जाता था। इसमे स्पष्ट था कि वह प्रोफेसर अपने मस्तिष्क मे कुछ लिए था। किसी भारी बात से उलझ गया था। उन दोनो ने पहाड की एक चोटी को पार कर लिया, परन्तु किसी ने कुछ नही कहा। आपस मे बोले नही। उसी समय उनका मकान समीप आ गया।

तभी एक बडी चट्टान के पास रुककर प्रोफेसर ने अपने से बढते हुए जयन्त को आवाज दी और कहा, "सुनो, जयन्तजी! अभी घर मे बैठकर क्या करोगे, यहाँ बैठो, इस पत्थर पर! मै इस पर अनेक बार बैठा हूँ। यह विशाल पत्थर भी मेरी बहुत-सी स्मृतियो का केन्द्र है, गवाह है। यहाँ जब कभी मै अकेले मे बैठा हूँ तो अनायास रोया हूँ और जब कभी पत्नी के साथ बैठा, तो हँसा भी हूँ। प्रकृति के इस विराट रूप के दर्शन करके मै सचमुच, जीवन का अलौकिक आनन्द पाने मे समर्थ हुआ हूँ, जयन्त भाई!" यह कहते हुए प्रोफेसर उस पथरीली शिला पर बैठ गया, वही जयन्त भी बैठ गया।

जयन्त ने कहा, "प्रोफेसर साहब, आपका जीवन भी बदल गया। आपकी वह स्नेहमयी पत्नी वह पुत्री "

प्रोफेसर ने कहा, "रे, भैया! मै उन्हे याद करके रोता नही बल्कि आनन्द पाता हूँ। मै यह समझकर सुख पाता हूँ कि पत्नी और पुत्री के रूप मे मैंने नारी के दो रूप देखे। एक मे गम्भीरता देखी, दूसरे मे अल्हड भाव।"

जयन्त ने कहा, "फिर भी आपके जीवन मे सूनापन आ गया है।"

प्रोफेसर विरक्त भाव से मुस्कराया, "यह तो आना ही था, किसी दिन पत्नी को जाना ही था, या पहले "

जयन्त बोला, "देखिए, वहाँ कोई जानवर है। उसकी लाल-लाल आँखें हमे देख रही है।"

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ, मुझे भी दीखता है। लेकिन यह हमारे पास नही आएगा। जानवर भी डरता है। इस ससार की यही परम्परा है।"

जयन्त ने कहा, "सभी एक-दूसरे से डरते हैं।"

प्रोफेसर ने कहा, "एक बार जब मै पत्नी और पुत्री के साथ इस पथ-

रीली शिला पर बैठा था तो तभी इस पत्थर के नीचे से एक साँप निकला और हमारे देखते-देखते भाग गया था। साँप काफी बडा था। वह नितान्त काला था।"

जयन्त बोला, "पहले से शायद बैठा होगा।"

"हाँ, भाई! वह बैठा था। हमारी आवाज सुनी तो डरकर भाग निकला।" प्रोफेसर ने कहा, "उसे देखते ही पत्नी चीख पडी, पुत्री भी सकपकाई, पर मैं तो तब ठहाका मारकर हँस पडा था। मेरे मन मे उस समय एक ही बात आई कि यह जगत् मिथ्या धारणाओ और आशकाओं का पुञ्ज है, और कुछ नही।"

उसी समय जयन्त के मन मे पीछे छूटे हुए गाँव की बात आई। उसकी आँखो के समक्ष एकाएक मलखू की लडकी आ खडी हुई, बडी स्नेह-मयी, सरल और सुन्दर आकृति की। उसे देख, जयन्त के मन मे विचार उठा कि वन-पर्वतो की जो सौन्दर्य-सुषमा है वह लडकी उसी का प्रतिरूप होगी। उसी ने जयन्त और प्रोफेसर को खाना खिलाया था। वह देख नही पाती थी, लजाती ही रही थी। इस बात के मन मे आते ही जयन्त ने कहा, "आपका चिर-परिचित मलखू और उसका परिवार भी मुझे सलोना लगा। उसकी लडकी सचमुच देवी-सदृश थी।"

प्रोफेसर ने कहा, "लडकी अपनी माँ पर गई है। उसकी माँ भी सुन्दर है, पतिव्रता है।"

जयन्त ने बात सुनी तो मौन रह गया। वह उस 'पतिव्रता' शब्द पर अटक गया।

किन्तु प्रोफेसर ने स्वत ही कहा, "जिस समाज का व्यक्ति चरित्रवान् नही तो वहाँ की नारी भी नही। यह परस्पराश्रित बात है।"

जयन्त को जैसे अवसर मिला, वह बोला, "पुरुष मदान्ध है, वह केवल नारी से आशा करता है कि वह चरित्रवती हो।"

अपने स्वर पर ज़ोर देकर प्रोफेसर ने कहा, "यह नही हो सकता, मेरे भाई! जो वैभव से भरे घर है उनमे यही होता है। धन का दुरुपयोग आदमी अपने जीवन के प्रत्येक अग मे करता है। उसका अभिशाप आदमी को भोगना पड़ता है।"

जयन्त ने कहा, "निर्धन का चरित्र ऊँचा होता है। उसे ठगा जाता है। मूर्ख बनाया जाता है।"

"हाँ, भाई! नगर के गन्दे आदमी इन पहाडो मे आते है और पैसे की चमक दिखाकर यहाँ के लोगो को ठगते है। अब तो अवस्था यह है कि यहाँ के लोग ही दलाली करते है, अपने पडौसियो की बहू-बेटी का क्रय-विक्रय करते-कराते है।"

"राम-राम!" छूटते ही जयन्त बोला, "आदमी सचमुच ही निर्मम है, कृतघ्न है।"

प्रोफेसर ने कहा, "आदमी पथ-भ्रष्ट है। जन्मजात निकम्मा है।" कहते हुए प्रोफेसर खडा हो गया। वह जयन्त के कन्धो पर हाथ रख, अपने मकान की ओर चल दिया। जब वे दोनो मकान के एक कमरे का ताला खोलकर अपने-अपने बिस्तरो पर बैठे तो प्रोफेसर ने कहा, "इस सुन्दर प्रकृति की गोद मे आकर लोग सुन्दर अनुभूति का सृजन नही करते, दुर्गन्ध फैलाते है, शराब के दरिया मे डूबते है।"

जयन्त ने कहा, "यह परम्परा देर से है। पैसे की देन है।"

प्रोफेसर ने अपना कोट उतार दिया और उसे खूँटी पर टाँग दिया। जब वह अपने बिस्तर पर बैठा, तो जयन्त की बात सुन एकाएक तिल-मिला गया। उसके मानस मे जहरीला धुआँ घुट गया। वह उसी अवस्था मे बोला, "रे, जयन्त! यह जघन्य लीला हमारे पुरखो ने ईजाद की है। राजमहलो मे इसका जन्म हुआ है। हम नारी को देवी कहते है, लक्ष्मी की सज्ञा से विभूषित करते है। पर सच यह है कि हमारा मन सदा नारी के अगों को लूटने के लिए सक्रिय रहा है। पुरुष ने अपनी बुद्धि का अधिकाश उपयोग इसी दुर्गन्धमयी अवस्था मे किया है।"

जयन्त कमरे के बाहर फैले अन्धकार मे दृष्टि फैलाता हुआ बोला, "यही आदमी का मनोरजन है, आस्था है।"

प्रोफेसर ने लाल बनकर कहा, "यह भ्रष्ट है, गलत परम्परा है।"

जयन्त अब और कुछ कहने की स्थिति मे नही था, प्रस्तुत विषय उसकी दृष्टि मे काफी विवादग्रस्त था। इस विषय मे उसका अनुभव भी कुछ नहीं के बराबर था। और उसकी सबसे बडी कमजोरी यह थी कि जिस व्यक्ति

से वह बात सुन रहा था वह उसका कालेज का प्रोफेसर था, जिसके प्रति उसमे आदरभाव भी अधिक था।

किन्तु तभी प्रोफेसर ने फिर कहा, "जयैन्त भाई, यह आदमी दुर्बल प्राणी है। नारी भी ऐसी है। इनके शरीर की भूख जब अपना मुँह खोलती है तो दोनो को मूर्ख बना देती है। और मेरा मत यह है कि ऐसी अवस्था उन्ही लोगो की होती है कि जिनके समक्ष जीवन की कोई समस्या नही, लक्ष्य नही।"

एकाएक जयन्त ने कहा, 'यह अवस्था सभी को पथ-भ्रष्ट करती है। यह शरीर की भूख "

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ, हाँ, यही बात है।"

उसी समय, पास के होटल का आदमी आया और बोला, "बाबूजी खाना लाऊँ ?"

प्रोफेसर ने कहा, "ले आओ।" और वह मुँह-हाथ धोने के लिए दूसरी ओर चल दिया।

तभी जयन्त ने भी दिन के कपडे उतार दिये, रात के लिए पाजामा और कमीज पहन ली। जब प्रोफेसर तौलिये से मुँह पोछता हुआ लौटा तो वह भी उसी ओर बढ गया। गुसलखाने मे मुँह-हाथ धोते हुए जयन्त के मन मे बरबस ही बात आई और सोचने लगा, "यह प्रोफेसर भी खूब है, असाधारण है! जाने यह आदमी किन तत्वो से बना है। यह जो कुछ बाहर है, वही अन्दर है। निरा निर्मल और साफ दिखाई देता है।

जब वह फिर कमरे मे पहुँचा तो उसे देखते ही प्रोफेसर ने कहा, "मैं कालेज से छूटूँगा, तो इसी गाँव मे आऊँगा।"

जयन्त ने कहा, "आप क्या यहाँ रह सकेंगे ?"

प्रोफेसर बोला, "मुझे इसमे सुख मिलेगा। मेरे सभी परिचित है, मैं उनमे और अधिक घुल-मिल जाऊँगा।"

जयन्त ने कहा, "यह सत्य है, जीवन को चलाने के लिए अधिक झझट नही चाहिए और न ही अधिक फैलाव।"

प्रोफेसर बोला, "लोग समाज मे फैलना चाहते है, जीवन का विस्तार करना पसन्द करते है, पर मेरा खयाल है कि जितने झरोखो से आप

झाँकोगे उतना ही उलझाव अपनी दृष्टि मे और मन मे पाओगे। आज विज्ञान का युग है, तो दुनिया फैल गई है सजीली बन गई है। चकाचौध मे खो गई है। पर मेरा खयाल है कि आदमी की यही विपत्ति है, भूल है। जिन्दगी जितनी फैलती है उतनी ही कमजोर होती है। इच्छाएँ इतनी बढ जाती है कि आदमी की मौत "

एकाएक खुले स्वर मे जयन्त ने कहा, "यह सत्य है। यह परम्परा कठोर और निर्मम है।"

उसी समय होटल का आदमी दो थालो मे खाना ले आया। दोनो खाने बैठ गए।

खाना खाते हुए प्रोफेसर ने कहा, "जयन्त जी, जीवन मे यदि सुख पाना हो, सन्तोष देखना हो तो एक गुरु-मत्र स्वीकार करो कि उपकार की वृत्ति तुम्हारी प्रबल हो। स्वार्थ सचय की भावना कम-से-कम हो। ऐसा आदमी निर्भय रहेगा, मन और मस्तिष्क से शान्त रहेगा। यही जीवन का मूल-मत्र है!"

जयन्त बोला, "निस्सदेह!"

प्रोफेसर ने कहा, "हम गाँव मे अधिक समय नही रहे। तुम साथ थे इसलिए मै आज ही लौट आया। अकेला होता, तो रहता। मै वहाँ युवा स्त्रियो के मध्य भी बैठ चुका हूँ। उनसे हँसा हूँ, बोला हूँ। पर मुझे कभी भी ऐसा आभास नही मिला कि वे नारियाँ मुझे देखकर हँसी या मुस्कराई हो। वह इसलिए कि मै उनकी शारीरिक भूख मिटाने के लिए सन्नद्ध था। भाई, मुझे कभी भी किसी नारी मे ऐसा भाव नही दिखाई दिया। और यह सत्य है, यह दुर्गन्ध पहले अपने मन मे पैदा होती है, वह फैलती है, सडाँद पैदा करती है। कल प्रात उठोगे तो तुम्हे एक ऐसे स्थान पर ले चलूँगा कि जहाँ पहुँचकर तुम सहज ही समझोगे कि पुरुष दम्भी है, तो निर्मम भी है। मै तुम्हे एक ऐसी नारी को दिखाऊँगा कि इस पहाड पर आये एक राजा के आदमियो ने न केवल उस नारी के आदमी को मार दिया, अपितु उस नारी के अगो को भी काट देने का प्रयत्न किया और उसका एक हाथ कटा है, एक पाँव भी, परन्तु उसने उन क्रूर व्यक्तियों की मदान्ध इच्छा के समक्ष आत्म-समर्पण नही किया। वह अब एक हाथ से ही मजदूरी करती

है और अपना जीवन चलाती है। मुझे आज ही उसके पास जाना था पर अब कल अवश्य जाऊँगा। मै उस नारी के चरणो मे भी एक बार और अपना सिर झुकाऊँगा।"

नौ

कमरे मे अँधेरा था और द्वार बन्द, किन्तु किसी आहट से एकाएक ही जयन्त की आँख खुली तो उसने बिजली का स्विच दबा दिया। कमरे मे प्रकाश हो गया। तभी उसने देखा कि प्रोफेसर का बिस्तर खाली है। यह देख उसको विस्मय हुआ। उसने यह देखा कि कमरे के दरवाज़े मे जो कुण्डा अन्दर से बन्द था वह भी खुला है। इतना देखकर ही जयन्त ने समझ लिया कि प्रोफेसर कही गया हुआ है। उसकी छडी और चेस्टर भी वहाँ नही थे। किन्तु वह कहाँ गया है, यह बात बार बार जयन्त के मन मे आती और उसे कुरेदती। यह सत्य था कि पहले ही से जयन्त के मन मे यह बात जमी थी कि यह प्रोफेसर निरा अनोखा आदमी है। उस पर्यटन मे विशेष रूप से उसकी यह धारणा स्थिर हो गई थी। अतएव, जयन्त स्वय उठ बैठा। उसने गरम कोट पहन लिया, हाथ मे बेत ले ली और वह कमरे के बाहर निकल दूर तक फैले अन्धकार मे देखने का प्रयत्न करने लगा। किन्तु उस समय तो सामने का पर्वत भी दिखाई नही देता था। तब जयन्त कहाँ जाए! प्रोफेसर को कहाँ खोजे! जैसे-कैसे भी वह प्रोफेसर के पास पहुँचना चाहता था। यह उसकी अनोखी जिज्ञासा थी, जो उसे बरबस कुरेद रही थी। उद्वेलित वना रही थी।

वैसे जयन्त को पता था कि उस मकान के निकट जो दूसरा मकान है वहाँ प्रोफेसर कई बार आया-गया है। प्रोफेसर ने इसका कभी स्पष्ट उल्लेख तो नही किया परन्तु ऐसा आभास उसे अवश्य मिला कि वहाँ कोई प्रोफेसर का पूर्व परिचित है। वह बीमार है। जयन्त ने कमरे का आगे से

कुण्डा चढा दिया और वह उस फैले हुए अन्धकार मे उसी ओर बढ गया। जब वह उस ओर चला तो कुछ दूर चलते ही एक पत्थर से टकराया और गिर पडा। किन्तु जयन्त ने इस बात का ध्यान नही किया कि उसके किसी अग मे चोट लगी है, वह उठा और फिर आगे बढने लगा। उस मकान के द्वार पर जाते ही उसने देखा कि अन्दर एक कमरे मे धुँधला-सा प्रकाश है। मिट्टी का दीया जल रहा है जिसकी कालिख उस समूचे स्थान मे फैल गई है। वही जयन्त ने देखा कि सच, प्रोफेसर है, वह एक चारपाई के पास बैठा है। जयन्त दूर था, दरवाजे पर खडा था इसलिए वह और आगे बढा और उसी कोठरी के समीप जा खडा हुआ। तभी उसने स्पष्ट देख पाया कि उस चारपाई पर एक नारी है जिसके बाल श्वेत है, शरीर कृश और दुर्बल। उसका स्वर भी अतिशय क्षीण सुनाई देता है, किन्तु प्रोफेसर उसी दुर्बल नारी के सिर पर हाथ फेर रहा है और कह रहा है, "जो गत हो गया, बीत गया, अब उसे याद करके क्या मन को सुख मिलेगा ! तुम धीरज रखो, मन शान्त रखो।"

किन्तु तभी, जैसे तडपकर उस नारी ने कहा, "अरे, अतुल ! तुम पत्थर हो ' पत्थर ! तुम नारी का मन नही समझते ! तुम नही जानते कि नारी भी अपने मन मे कोई बात रखती है, उसे मानती है, उसकी पूजा करती है।"

प्रोफेसर अतुल ने कहा, "मै मानता हूँ। ऐसी कल्पना सहज मे कर सकता हूँ।"

"नही, तुम कुछ नही करते ! तुम इस पहाड पर घूमने आते हो और लौट जाते हो। पर मैं सदा सोचती हूँ कि तुम मुझे उस तेज धारा से न निकालते तो अच्छा था। मेरा प्राणान्त हो जाता। जानते हो, मैने आज तक तुमसे कुछ नही कहा। तुम मुझे गुजारे के लिए रुपए भेजते हो, वह न भेजते तो ठीक था। मैं भूखी रहकर मर तो जाती। यो तुम्हारा आभार न मानती। मै अपने अन्तर्मन मे तुम्हारी पूजा करती हूँ।"

"ओह, पगली नर्वदा ! तू तो सच, नर्वदा नदी के समान गहरी बन जाना चाहती है। मुझे अपने इन आँसुओ मे डूब जाने का निमन्त्रण देती है। देख तो, तू बीमार है, मृत्यु के समीप है।"

नर्वदा ने तब भी जैसे आहत बनकर कहा, "अतुल बाबू, हाँ ! अब मै मृत्यु के समीप हूँ। मर जाने वाली हूँ। पर जानते हो, मैं गरीब हुई और बदसूरत हुई तो क्या, मन मे मेरे भी एक लालसा रही है। मैं भी अपने पिया की छाती पर सिर रखकर उसके प्राणो की सुहावनी साँसे सुनने की आकांक्षिणी बनी रही। पर मेरा कौन पिया बनता, कौन मेरा वरण करता, कौन मेरे पास आता मै बच्ची से जवान हुई और फिर बुढिया। आज बात चली, तुम्हारी उँगली मेरी हृदय-तन्त्री पर पड गई, तो यह बज उठी। यह आज भी अपने टूटे-फूटे स्वर निकालने मे समर्थ हो गई। मैं कहती हूँ तुमसे कुछ बोल नही सकी, कह नही सकी तो क्या, पर तुम्हारी पूजा मैं इस जीवन भर मे करती रही हूँ।"

आश्चर्य है कि नारी के प्रति उदासीन और निस्पृह भाव रखने वाला वह प्रोफेसर एकाएक उस वृद्धा की चारपाई पर झुक गया, वह उसके होठो के समीप जाकर, उसकी साँस लेता हुआ, अत्यन्त भावना भरे स्वर मे बोला, "नर्वदा, मैं तेरे समक्ष प्रस्तुत हूँ। तुझे मैंने जीवन मे कोई पीडा दी हो तो मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।"

किन्तु उस वृद्धा ने तुरन्त अपना मुँह फेर लिया और कहा, "राम-राम, अब कैसा अभिनय करने चले हो तुम ! जो दीपक बुझ रहा है उसे जलाने की बात सोचते हो। अपना मुँह दूर रखो। जानते तो हो कि मुझे तपेदिक है, यह डायन मुझे तिल-तिल करके काट रही है, दीमक की तरह चाट रही है, कैसा है यह मेरा जीवन !"

लेकिन प्रोफेसर तो उस समय सचमुच ही भावना मे डूब गया था। वह उसके पैरो पर अपना सिर पटककर बोला, "नर्वदादेवी, मैं तुम्हारा अपराधी हूँ।"

नर्वदा ने फिर अपने पैर हटा लिये और चीखकर कहा, "ओह, आज तुम सचमुच ही मुझे मार दोगे। और मै तुमसे कहे देती हूँ कि मेरे ये प्राण कदाचित् इसीलिए रुके थे कि तुम आजाओगे। सो, अब आ गये हो, तो मैं तुम्हारे कन्धो पर चढकर ही श्मशान मे जाऊँगी। तुम ही मेरी चिता सजाओगे। अब तुम जाओ अपने घर। रात बहुत हो गई है। तुमने नीद भी नही ली। तुम अधिक दिन तक जीवित रहो, मैं मरते समय यही कामना

लेकर जाऊँगी। मै अपने मन मे सदा यह बात रखूँगी कि अगर भगवान ने मुझे फिर औरत बना दिया तो तुम्हारी दासी ही बनूँगी। मै ऐसे अनुपम आदमी की चेरी बनूँगी।"

साँस भरकर प्रोफेसर बोला, "नर्वदा, आज तू न जाने क्या-क्या कह गई है।"

नर्वदा ने कहा, "आज ही अवसर मिला है। यह भी लगता है कि जो बात मुझे कहनी थी, वह मैं कह गई। अब चली जाऊँगी।"

"अरे, कौन किसका आभार पाता है, नर्वदा! यहाँ जो-कुछ है, सभी मिट जाने वाला है, क्षण-भगुर है। सभी अपना भुगतान करते है। जिसका है, उसे देते है।"

नर्वदा ने कहा, "पर सभी ऐसा नही सोचते। तुम्हारी तरह नही।"

प्रोफेसर ने कहा, "तू पहले कहती तो मै जरूर तेरे जीवन मे आ बैठता। पर तूने तो "

नर्वदा बोली, "मै इतनी मूर्ख नही बन सकती थी। मैं जाति की छोटी, बदसूरत, गरीब माँ-बाप की लडकी।"

"शि! क्या बात करती है, तू! अरी, पगली! जीवन में भावना देखी जाती है, जाति या धर्मवाद को नही।" यह कहते हुए प्रोफेसर खडा हो गया। अब वह लौटने के लिए प्रस्तुत हुआ।

नर्वदा ने कहा, "देखना, मेरे मरने के बाद भी इस घर को देख जाया करना। मै शरीर से नही तो आत्मा से यही रहूँगी। इस घर मे मेरे जीवन की लीला बीती है। मैं यहाँ बैठकर हँसी हूँ और रोई हूँ। मैने यही बैठकर तुम्हारा चिन्तन भी किया है।"

प्रोफेसर ने कोई जवाब नही दिया। वह लौट चला। जयन्त उसमे पूर्व ही अपने बिस्तर पर पहुँच चुका था। उसने बत्ती भी बुझा दी थी। वह चुपचाप पडा रहा। प्रोफेसर आया, उसने चेस्टर उतारा और बिस्तर पर पड गया। वह सोया या नही किन्तु जयन्त कुछ ही देर मे सो गया।

जब प्रात हुआ तो जयन्त समय पर नही उठ सका किन्तु जब प्रोफेसर ने झकझोरा, तो वह उठ बैठा। चौककर उसने देखा कि बाहर धूप का प्रकाश फैला है। वह बिस्तर से उठ खडा हुआ। प्रात का कर्म सम्पादित करने जाने

लगा।

तभी प्रोफेसर ने कहा, "मैं तुम्हारी प्रतीक्षा मे हूँ। तुम्हे भी मेरे साथ श्मशान चलना है। यही पास मे रहने वाली एक औरत "

"औरत कौन! तो वह मर गई!"

प्रोफेसर का स्वर भारी था। वह गम्भीर बना था। बोला, "हाँ भाई, वह मर गई। बीमार थी, वृद्धा थी।"

जयन्त ने कहा, "राम-राम! वह बेचारी!" वह चला गया। आध घण्टे मे जब वह लौटकर आया तो प्रोफेसर ने खडे होकर कहा, "प्राणी जब मरता है तो अपने साथ जाने कितनी बडी कहानी ले जाता है। यह औरत भी "

जयन्त ने कहा, "हाँ, प्रोफेसर साहब, जीवन एक कहानी है। यह अनेक कहानियो का पुञ्ज है। मनुष्य कुछ सुनता है, कुछ कहता है। जाने वाला भला क्या ले जाएगा, अपना सभी-कुछ यही छोड जाएगा।"

प्रोफेसर खडा हो गया और बोला, "वह बेचारी नर्वदा सच, उसका इतिहास! निरा दीन निरा याचक, उस नारी का जीवन, जो आज समाप्त हो गया है।"

जयन्त चलने लगा। बोला, "उसका नाम नर्वदा था?"

"हा, जयन्त जी, उसका नाम नर्वदा था। ऊपर से जितनी कुरूप थी, हृदय से उतनी ही उज्ज्वल, सुहावनी। निस्सदेह, वह पूर्णिमा की चाँदनी थी। पर उस चाँद मे स्वय दाग था, उसके चारो ओर अँधेरा! भला किसी ने उस नारी का हृदय देखा था।"

जयन्त के मन मे आया कि कह दे, वह उस नर्वदा को जानता है। उसके मन मे क्या था, उसका भी परिचय पा चुका है। किन्तु उसने ऐसा कुछ नही कहा। मकान बन्द किया और वह प्रोफेसर के साथ हो लिया। लक्ष्य पर जाकर देखा कि वहाँ पाँच-सात आदमी और है। अर्थी तैयार है। नर्वदा उस अर्थी पर रख दी गई है। बडी हल्की है, केवल हड्डियो का पुञ्ज।"

एक व्यक्ति बोला, "कई साल की मरीज़ थी बेचारी। प्राण जाने कहाँ अटके थे। इस नर्वदा की रोज मौत आती और लौट जाती थी।"

श्मशान मे नर्वदा की के शव को चिता पर रख दिया गया और आग

लगा दी गई। जयन्त ने देखा कि उस समय प्रोफेसर पत्थर की तरह कठोर और गम्भीर बना था। उसके सिर के बाल खडे थे। वह जैसे कही दूर, बहुत दूर अपने शरीर को छोडकर उड चुका था। यह देख, जयन्त पास गया और बोला, 'आइये, अब चले, प्रोफेसर साहब!"

प्रोफेसर चौक गया। जैसे आसमान से धरती पर गिर पडा हो। वह बोला, "हाँ, चले अब! नर्वदा तो गई, अब जल भी गई होगी।"

जयन्त ने कहा, "हाँ, प्रोफेसर साहब! यही सबके साथ होता है। एक दिन मेरे और आपके साथ भी होगा।"

प्रोफेसर खडा हो गया और अत्यन्त श्रद्धायुक्त भावना के साथ उस जलती हुई चिता को हाथ जोडकर बोला, "आओ, चले। मुझे आज उस दूसरे पास के गाँव मे भी जाना है। कल लौटना है। इस जिन्दगी मे जितनी बार जिससे मिल लिया जाए, उतना अच्छा है। यही मेरी आस्था है। जब मेरी पत्नी गई, बच्ची गई, तो मुझे लगता है कि किसी क्षण भी, मुझे भी इस भूतल से उठ जाना है।"

जयन्त मौन था। मकान पर आकर उसने स्नान किया, फिर भोजन। जब दोनो तैयार हो गये, तो घर से चल पडे। मार्ग छोटा था, दूर नही जाना था। पहाड से उतरकर वे गाँव मे प्रविष्ठ हो गये। प्रोफेसर एक मकान के द्वार पर पहुँच गया। देखा कि वही पर एक नारी बैठी है। आयु से उतरी हुई है। सचमुच, उसका एक हाथ एक कान नही है। किन्तु उस अवस्था मे भी वह सुन्दर लगती है। प्रोफेसर को देखते ही उसने उल्लास के साथ कहा, "अच्छा, तुम अतुल बाबू!"

अतुल बाबू ने आगे बढकर कहा, "अच्छी हो न, ज्योति!"

ज्योति ने चारपाई छोड दी और उन दोनो को बैठने के लिए कहा। तभी वह बोली, "यहाँ रहने वाले जिस तरह अच्छे रहते है, वैसे ही मै भी हूँ। ठीक हूँ।"

प्रोफसर ने कहा, "पहाड पर आकर तुम्हे देखने की बात अनायास मेरे मन मे आती है। ये मेरे साथी युवक कालेज मे पढते है। नाम जयन्त-कुमार है। मैंने इन्हे तुम्हारी बात बताई थी और कहा था कि तुम्हे दिखाऊँगा। सो, इसे ले आया।"

तुरन्त ही, ज्योति ने कहा, "न, न, नारी का ऐसा प्रदर्शन क्या अच्छा है ! इस धरती पर तो यही होता है। कही आदमी औरत पर प्रहार करता है और कही औरत आदमी पर।"

प्रोफेसर ने जैसे चचल बनकर कहा, "हाँ-हाँ, ऐसा ही प्राय देखा जाता है।"

ज्योति ने कहा, "इसी पहाड पर एक औरत ने अपने आदमी को जहर देकर मार दिया था। तब भला "

प्रोफेसर चचल बन गया और बोला, "पर ज्योति, तेरे साथ जो कुछ हुआ, वह अतिशय अमानवीय था वह नितान्त क्रूर था।"

ज्योति ने कहा, "बाबू, आदमी यही करता है। बेबस बन जाता है। अन्धा हो जाता है।" वह तभी जोर से बोली, "औरत भी अन्धी हो जाती है, बाबू !"

प्रोफेसर ने साँस भरी और प्रस्तुत वार्ता को छोड, मन मे आई बात कही, "तो यह बता ज्योति, अब क्या हाल है तेरा। ठीक चलता है।"

ज्योति ने कहा, "हाँ, बाबू ! मजदूरी करती हूँ और दिन काट लेती हूँ। पढी तो हूँ नही, पूजा-ध्यान भी नही जानती, पर यह जो सामने आसमान को छूता हुआ पहाड दिखाई देता है, मै इसी को देखकर समझती हूँ कि वह भगवान भी इतना बडा होगा · वह भी दुनिया मे चारों ओर "

प्रोफेसर के साथ जयन्त भी हँस दिया। उन्होने एक-दूसरे की ओर देखा।

प्रोफेसर बोला, "वह भगवान पहाड मे नही, तेरे मन मे है, ज्योति ! वह ज्योति-स्वरूप है।"

उदास भाव मे ज्योति ने कहा, "होगा। वह भगवान कैसा है, इस जीवन मे क्या मुझसे समझा जाएगा ? न, कभी नही !"

लेकिन प्रोफेसर ने अपने स्वर पर ज़ोर देकर कहा, "नही, भगवान है। वह तुझे भी दिखाई देता है, तेरे मन मे बोलता है। वही तो तेरे जीवन की रक्षा करता है।"

ज्योति हँस दी, "हाँ, हाँ, कहती तो हूँ, वह तुम्हारा भगवान कही तो होगा।" यह कहते हुए वह तुरन्त ही गम्भीर बन गई और बोली, "पर जब मै अपना सूना जीवन देखती हूँ, कटा हाथ पाती हूँ, चेहरे पर एक कान नही

पाती, तो सोचती हूँ, वह भगवान तुम सरीखे पढे-लिखो के पास हो तो हो, मेरे पास नही आता। वह मुझे नही दिखाई देता। यदि वह मुझे मिले तो बस इतना कहूँ, महाराज, क्यो अपना मजाक उडवाते हो। मेरा यह पगु शरीर हाँ, एक बार तुम्ही कहते थे न कि भगवान हमारा निर्माण करता है इस काया और मन का · ”

जयन्त के साथ प्रोफेसर ने देखा कि अपनी बात कहते हुए ज्योति चचल बन गई है, जैसे नितान्त कातर हो। उसके मन मे दबा हुआ जहरीला धुआँ भी उठ आया है, जिससे वह पीडित है। यह देख प्रोफेसर एकाएक, ऐसी बात नही पा सका कि जो धीरज देने के लिए उस ज्योति से कहे। एक तो उस दिन प्रोफेसर स्वय अशान्त था। नर्वदा जो कुछ उससे कह गई, वह उस समय भी उसके मन मे अटका था। जिस प्रकार वह नर्वदा के आँसू देखकर, उससे कर्म और उसके फल की बात नही कह सका, उसी तरह, सामने बैठी हुई ज्योति को भी कर्म और सस्कारो की बात नही बता सका, क्योकि प्रोफेसर जानता था कि यह कर्म का और सस्कार का प्रसग इस ज्योति के लिए शुभ नही, सुनने और कहने मे भी रोचक नही होगा।”

किन्तु उसी समय जयन्त बोला, “भगवान है, उसकी भावना हे, यह तो मानना ही पडेगा।”

ज्योति ने कहा, “होगा भगवान ! मैंने नही देखा। वह मिलता, तो पूछती, तेरी ऐसी ही सृष्टि है, ऐसा ही नियन्ता है, तू !”

एकाएक जयन्त के मुँह से निकला, “हमे कर्मों का फल भोगना पड़ता है।”

ज्योति विद्रूप भाव से हँस दी और बोली “वह कर्म भी तो भगवान ही कराता है।”

प्रोफेसर ने कहा, “यह विषय विवाद का है।” वह ज्योति की ओर देखकर बोला, “ज्योतिदेवी, यह सत्य है कि तुम्हारे साथ न मानव समाज ने न्याय किया न भगवान ने ! दोनो ने ही क्रूर व्यवहार किया।”

ज्योति ने कहा, “बाबू, तुम आते हो तो दो बात कर जाते हो। मै तो अब ऐसी पथरीली शिला हूँ कि इससे लोग बचकर निकलते हैं। ठोकर मारना भी पसन्द नही करते।”

प्रोफेसर ने कहा, "तुम्हारा सलोना ससार था, वह एक ही आँधी मे उजड गया।"

ज्योति ने साँस भरी और कहा, "भाग्य मे यही लिखा था।" वह बोली, "पानी लाऊँ ?"

जयन्त ने कहा, "नही !" यह कहते हुए वह खडा हो गया।

प्रोफेसर भी खडा हो गया और बोला, "ज्योतिदेवी, मेरे योग्य कोई कार्य हो, तो बताना ?"

ज्योति ने कहा, "आपकी कृपा है। आपने इस बार पचास रुपये भेजे थे, मेरी बीमारी मे बडे काम आये। वे सुगमता से उतार न सकूँगी, पर सदा याद रखूँगी।"

प्रोफेसर बोला, "मैने वापिस पाने के लिए नही भेजे थे, वह तुम्हारे ही थे। लो, ये बीस रुपये और रखो।"

ज्योति ने कहा, "नही, बाबू। मेरा काम चलता है।"

प्रोफेसर बोला, "रख लो, ये तुम्हारे निमित्त है।" यह कहते हुए, उसने रुपये ज्योति के हाथ पर रख दिये।

ज्योति ने कहा, "कब तक यहाँ रहोगे ?"

प्रोफेसर बोला, "बस, कल सुबह चल देगे।"

एकाएक ज्योति ने कहा, "तो बाबू, तुम "

प्रोफेसर ने कहा, "इस जिन्दगी की डगर पर जो मिले, उससे मिलते चलो, दो बात करते चलो। बस, और क्या, ज्योतिदेवी ! सबको भगवान का रूप मानते चलो।" कहते हुए वह जयन्त के साथ लौट चला।

दस

ऐसे चरित्र का और ऐसी इच्छा पाने वाला प्रोफेसर जयन्त से अब दूर था। उसने नौकरी छोड दी थी और देर से किसी अज्ञात-पथ पर अग्रसर

हो चुका था। अब जयन्त को यह भी नही मालूम कि वह प्रोफेसर मर गया अथवा जीवित है। इधर जब गाँव के गरीब ब्राह्मण श्रीधर की पुत्री के विवाह का प्रश्न जयन्त के समक्ष आया और उसने पाया कि स्वय उसी का पिता उस गरीब ब्राह्मण की सम्पति पा लेना चाहता है, तो वह स्वत ही लज्जित बन गया। वह इतना कातर हुआ कि सहज मे समझ नही सका कि वह किस कर्म का सम्पादन करे, पिता से क्या कहे। उस श्रीधर को किस प्रकार सहारा दे।

ऐसे ही समय, एक दिन, एकाएक ही, जयन्त को प्रोफेसर का फिर ध्यान हो आया। यद्यपि, वह प्राय याद आता, परन्तु उस अवसर पर उसे लगा कि उसके उस मानसिक रोग की औषध केवल प्रोफेसर था। वह उसे शाति दे सकता था। समस्या का सुलझाव भी निकाल सकता था। और यह सत्य था कि जयन्त उस प्रोफेसर का अतिशय सम्मान करता था। बल्कि वह अनुभव करता था कि उसका निर्माणकर्ता वह प्रोफेसर है। मा-बाप ने तो केवल उसे आदमी के रूप मे जन्म भर दिया है। उनके द्वारा हाड-मास का एक पुतला बना दिया गया। किन्तु उसके मानस मे जिस भावना का अजस्र स्रोत प्रवाहित हो रहा था, उसका उद्गम क्षेत्र प्रोफेसर अतुल था। उसी देवता ने जयन्त को आशीष प्रदान किया था।

जो हो, वस्तुस्थिति यह थी कि उन दिनो जयन्त अधिक गम्भीर था। उसके लिए सन्तोष की केवल एक बात थी कि अजना का पिता लडकी का विवाह रोक देने पर सहमत हो गया। जिसका दुष्परिणाम यह भी हुआ कि गाँव के लोग अब निर्बाध रूप से यह समझने लगे कि जरूर चमार की लडकी और ब्राह्मण के लडके का गठबन्धन हो जाएगा। लडकी को अब किसी अन्य पथ पर चलना पसन्द नही आएगा।

ऐसी बात नही कि इस प्राकर की बाते जयन्त के कान मे न आती हो परन्तु वह जैसे उस ओर से उदासीन था। उसका काम था, बीमारो का इलाज करना। अब यह उसका व्यवसाय था। पैसा लेने लगा था। डाक्टर बनकर वह पैसा उपार्जित कर रहा था। मानो उसका यही लक्ष्य था। सयोग की बात यह थी कि उसका काम खूब चलने लगा। उसके पास इतने मरीज़ आते कि भोजन का भी कठिनाई से समय मिलता। नगर के जिस

देना और तुम अपने घर चली जाना।" कह कर जयन्त चला गया।

किन्तु वह कहाँ जा रहा था, अजना से यह छिपा नही था, क्योकि एक दिन पूर्व ही, गाँव का श्रीधर वहाँ आया और उससे जयन्त ने जो कुछ कहा, वह सहज ही अजना ने सुन लिया था। अतएव, उसे पता था कि यह जयन्त उसी श्रीधर के घर जा रहा है। उसके मन मे बात आई कि जयन्त उस श्रीधर के घर इस अधेरे मे कैसे जाएगा। बीच मे बरसाती नाला पडता है। वह बरसाती पानी से भरा है। नाला अतल बना है। जयन्त कही उसमे प्रविष्ठ हुआ तो "

अजना ने तुरन्त ही दवाखाना बन्द कर दिया। वह उस ओर चल पडी कि जहाँ से श्रीधर के घर जाने के लिए रास्ता जाता था। गाँव के कुछ घर नाले के पार थे। श्रीधर का घर भी उन्ही मे से एक था। रात हो गई थी। चारो ओर अधेरा था। जब तेज चाल से चलती हुई अजना वहा पहुँची, तो देखा कि जयन्त सचमुच ही, निर्बुद्धि बना हुआ खडा था। वह रास्ता नही पा रहा था, सुगमता से दूसरी ओर नही जा सकता था।

पास जाते ही, अजना ने कहा, "मुझे पता था कि तुम्हे कहाँ जाना है। आओ, मेरे साथ। मै तुम्हे नाले के पार उतार दूगी।"

जयन्त ने कहा, "पानी तेज है, तीव्र गति से बहा जा रहा है।

अजना बोली, "यह नाला प्रतिवर्ष एक-दो प्राणियो की जान ले लेता है। भेट माँगता है।"

जयन्त ने कहा, "आदमी की भेट !"

अजना बोली, "हाँ, तो क्या जानवर की भेट ! जानवर के मरने पर कौन रोता है। उसका कौन उल्लेख करता है।"

जयन्त ने कहा, "इस धरती पर ऐसे भी आदमी है कि जिनके मरने पर कोई नही रोता। नाम नही लेता।"

अजना ने कहा, "हॉ, सो तो है ही। उन्ही मे एक मै ··"

"तू री, अजना !"

अजना हँस दी। वह बोली, "देखो इन्कार न करना। मैं जैसा कहूँ, वैसा ही करना। यहाँ नाला कम चौडा है। यह मेरे हाथ की रस्सी देखते

हो न, मैं उस ओर फेकती हूँ, उस पेड मे उलझाती हूँ, फिर मै इन दो पाटो के ऊपर "

जयन्त ने कहा, "यह तुम्हारा दुस्साहस है। मूर्ख प्रदर्शन !"

अजना बोली, "मै इस प्रदर्शन की अभ्यस्थ हूँ। बचपन से यह खेल करती आई हूँ।" और कहते ही, उसने नाले के दूसरी ओर रस्सी फेकी, पेड की जड मे उलझाई और जिस पार खडी थी वहाँ अपने पैर अडाकर, उस रस्सी के सहारे झूल कर सपाट पुल की तरह पड गई। तभी बोली, "उतरो तुम !"

जयन्त चिल्लाया, "अरी, अजना !"

अजना ने कहा, "देर न करो। तुम पार उतरो और अपने उद्देश्य को पूरा करो।"

और तभी जयन्त उस अजना के ऊपर से पैर रखकर उस गहरे नाले को पार कर गया। उसी समय अजना रस्सी पकडे हुए पानी मे गिरी और जयन्त का सहारा पाकर ऊपर पहुँच गई। उसे पानी मे शराबोर देख, जयन्त ने कहा, "तुम्हारा यह दुस्साहस था।"

अजना ने कहा, "मुझे यही करना था। उस ब्राह्मण की लडकी का उद्धार तुम्हे करना था, तो मुझे भी थोडा सहयोग "

जयन्त बोला, "तो तुम्हे पता था ? सचमुच, मै उसी श्रीधर पडित के घर जा रहा था।"

अजना ने कहा, "मुझे पता था। तभी तो दौड आई। यह रस्सा भी लेती आई। जाओ, जल्दी लौटना। मै यही रहूँगी। इसी रास्ते से तुम्हे पार कर सकूँगी।"

जयन्त चल दिया। वह श्रीधर के घर पहुँच गया। जाकर देखा कि श्रीधर जैसे उसी की प्रतीक्षा मे बैठा था। जयन्त को देखते ही खडा हो गया।

जयन्त ने कहा, "तुम बैठो, पडितजी ! ये रुपये लो और अपनी पुत्री का विवाह सम्पन्न करो। एक हजार है, इनसे काम तो चल जाएगा न !"

श्रीधर अतिशय विनम्र बन गया। बोला, बाबू, ये बहुत हैं। मै तो पाँच सौ मे ही "

जयन्त ने कहा, "नही, नही, पुत्री का विवाह अच्छी तरह करो। तुम्हारी पुत्री के भाग्य से ही मुझे इस बीच कई ऐसे मरीज मिल गये कि जो पैसे वाले थे। मुझे प्रसन्नता है कि वे निरोग भी हो गए। मेरा उपचार सफल रहा।"

श्रीधर ने कहा, "मै तुम्हारा आभारी हूँ, जयन्त बाबू!"

जयन्त ने कहा, "नही, नही, यह तो मेरा कर्त्तव्य था। तुम्हारी पुत्री मेरी भी तो बहिन है।"

उसी समय श्रीधर की पत्नी बाहर निकल आई और बोली, "तुम युग युग जीयो, जयन्त बेटा!"

जयन्त बोला, "माजी, तुम्हारा आशीष चाहिए।" वह जाने के लिए खडा हो गया।

श्रीधर ने कहा, "पर आये कैसे, भैया! यह रास्ते का नाला ..."

जयन्त ने कहा, "मैं आ गया, चला आया। तुम बैठो।"

पत्नी बोली, "तुम साथ जाओ। अँधेरी रात है, रास्ते का नाला ..."

आतुर बनकर जयन्त बोला, "नही, नही, मै चला जाऊँगा। जाता हूँ। राम-राम!"

"जीते रहो, तुम्हारी बडी उम्र हो।" पत्नी ने आशीष दिया।

जयन्त लौट चला। जब वह फिर नाले पर पहुँचा, तो देखा अजना खडी थी, उन्ही भीगे कपडो मे थी। ठण्डी हवा से काँपने लगी थी।

जाते ही, जयन्त बोला, "मै लौट आया अजना।"

अजना ने कहा, "रुपये दे आये। कितने थे?"

जयन्त ने कहा, "एक हजार!"

अजना ने सुनते ही गद्गद् होकर कहा, "शाबाश, तुमको। मेरी बधाई।"

जयन्त बोला, "इन रुपयो को उपार्जित करने के लिए मुझे बडा परिश्रम करना पडा। कभी-कभी तो अपना आदमीपन भी छोड देना पडा।"

अजना बोली, "मैं देखती थी, समझती थी। इस बीच तुम्हारा स्वास्थ्य भी घट गया है।"

"हाँ, अजना! मैने इसी समय तो समझा कि पैसे का चिन्तन करना

सबसे बडा घातक कर्म है। मन और मस्तिष्क को दुखाता है। पाप का सृजन करता है। आदमी की आत्मा को मार देता है।" अब चलो, उठाओ अपना रस्सा। दिखाओ अपनी करामात! सच, आज तुमने अनोखे पुरुषत्व का परिचय दिया। मै तुम्हारे ऊपर से चलकर इस नाले को पार कर सका, यह कभी नही भूल सकूँगा।"

अजना ने कहा, "जब तुमने ब्राह्मण-पुत्री के लिए इतना त्याग किया, तो क्या मैं "

जयन्त ने उसके कन्धे पर हाथ रखकर कहा, "सच, तुम अपूर्व हो, अजना! निरी ममतामयी।"

अजना ने कहा, "चलो, तैयार हो जाओ, मै उस ओर रस्सा फेकती हूँ। कोई आए तो देखकर क्या कहेगा कि ये गाँव के डाक्टर, ब्राह्मण के लडके जयन्त बाबू, और चमार की लडकी इस अजना के साथ।"

जयन्त ने कहा, "यह विभेद मैने मिटा दिया है। अब गाँव सूर्य के खुले प्रकाश मे देखता है कि तुम मेरे दवाखाने मे "

अजना बोली, "वह दूसरी बात है, पर यह रात का मौसम, यह चढा हुआ दरिया, यह सुनसान पथ यो हम, एकाकी "

जयन्त ने कहा, "कोई अन्तर नही पडता। देखने और कहने वाले सभी जगह अपनी एक राय रखते है। वे क्या कहने से चूकते है।"

अजना ने दूसरे किनारे के पेड पर रस्सा फेका, उसकी जडो मे उलझाया और तब पूर्ववत् पुल की तरह पडकर उसने कहा, "चलो, उतरो पार!"

जयन्त ने अजना की टागो और कमर पर पैर रखे और पार उतर गया। तभी उसने अजना को पकडने का प्रयत्न किया। किन्तु दुर्भाग्य की बात कि उसी समय अजना के हाथ से रस्सा छूट गया। वह उस गहरे नाले के पानी मे गिर पडी, जिसे देखते ही जयन्त चीख पडा, "अजना!"

जयन्त खडा नही रह सका। वह उसी प्रकार खडा हुआ नाले मे कूद पडा। कुछ ही क्षण मे तैरकर वह अजना के पास पहुँच गया। उसने अजना को पकड लिया। किन्तु पानी तेज था, उन्हे टिकने नही देता था। दोनों को बहाये लिए जा रहा था। जयन्त जानता था कि वह नाला कुछ दूर

जाकर बडी नदी मे मिलता है। उस बरसात मे वह नदी विशालतर होकर दूर तक फैल गई थी। उसमे जाकर बच निकलना उन दिनो आसान नही था।

उसी अवस्था मे जयन्त ने कहा, "अजना, साहस न खोना।"

अजना ने कहा, "तुम जाओ। मुझे छोड जाओ।"

किन्तु जयन्त किनारे पर जाने के लिए चेष्टित था। बडी नदी का गर्जन वह सुगमता से सुन रहा था। उसी समय, सयोग से नाले के किनारे पर खडे पेड की झुकी हुई डाल को अजना ने पकड लिया। जयन्त भी इसीके सहारे से रुक गया। वे दोनो उसीके द्वारा किनारे पर लगे, और तेज साँस लेते हुए ऊपर बैठ गए।

तभी साँस भरकर अजना बोली, "ओह, आज बडा भयानक काण्ड होना था। शायद भगवान को "

जयन्त बोला, "नदी मे पहुँचते तो बचने का प्रश्न ही नही था।"

अजना ने कहा, "मै रास्ते मे मर जाती। पर मुझे अपनी चिन्ता नही थी, ध्यान तुम्हारा था।"

दोनो उठे और गाँव की ओर चल दिये। वहाँ से गाँव भी दूर छूट गया था। गाँव के समीप जाकर जयन्त ने कहा, "तुम्हे कल शहर जाना है।"

अजना ने बात सुनी तो कुछ जवाब नही दिया। जयन्त अपने घर की ओर बढ गया।

जब वह घर पहुँचा, तो माँ ने देखते ही कहा, "अरे, तू कहाँ गया था। शाम से ही गायब था। देख तो, कौन आया है, शहर से। शायद तेरा प्रोफेसर है। अतुल!"

"प्रोफेसरसाहब, ओह!" जयन्त सीधा भीगे कपडे पहिने ही मकान के ऊपर अपने कमरे की तरफ चल दिया, जब वह पहुँचा, तो देखते ही, जोर से बोला, "प्रोफेसरसाहब!"

"जयन्तबाबू, आओ। अच्छे हो!" प्रोफेसर अतुल बोला।

जयन्त ने कहा, "कृपा है, आपकी! अभी आकर आपके पास बैठता हूँ, कपड़े बदल दूँ। मौत के मुँह से निकलकर आया हूँ, सब बताता हूँ।" कहते हुए जयन्त दूसरी ओर बढ गया।

ग्यारह

गाँव था, वहाँ का समाज था तो उसकी कुछ परम्पराएँ भी थी। जयन्त उन्ही मे अपने को मिलाना चाहता था। किन्तु जब प्रोफेसर अतुल उस गाँव मे आया तो एक दिन बात करते हुए उसने जयन्त का कन्धा हिलाकर कहा, "तुम मेरी बधाई स्वीकार करो कि तुमने गाँव मे आकर नया पथ प्रशस्त किया। अजना को तुमने नगर भेज दिया, उसका जीवन सुधारने मे योग दिया। सचमुच ही, यह तुमने एक पुण्य का काम किया है।"

किन्तु उपेक्षा भाव से जयन्त बोला, "लेकिन आपने यह नही सुना कि लोग मुझे अजना के विषय मे दुश्चरित्र मानते है।"

धीर भाव से प्रोफेसर ने कहा, "यह स्वाभाविक है। अपनी इस सनक के कारण मै एक गाँव मे मरते-मरते बचा था। लोग मेरे टुकड़े कर देना चाहते थे।" वह कहने लगा, "भाई, उपकार का कार्य करने के लिए भी साहस और बुद्धि चाहिए। लोगो की परम्परागत बाते भी याद रखनी चाहिये। मै अब बूढा हो गया हूँ तो क्या, यह कभी नही भूलता कि लोग मुझे चोर भी समझ सकते है, मेरी नीयत पर सन्देह भी कर सकते है। मैने तुम्हारा यह प्रकरण भी सुन लिया है। लेकिन मुझे इसमे दोष तुम्हारा ही लगा है। यह मत भूलो कि ऊँचा आदर्श व्यावहारिक नही होता। भले ही यह गाँव है, यहाँ का समाज भी छोटा है, परन्तु इसकी भी कुछ रीति-नीति है। बोलो, क्या तुम्हे उसका अनुसरण नही करना था?"

जयन्त ने कहा, "मै अविवेकी नही बना, अदूरदर्शी नही बना।"

प्रोफेसर अतुल मुस्कराया। उसने अपनी श्वेत दाढी को सहलाया और कहा, "हाँ-हाँ, यह स्वयसिद्ध है कि तुम अविवेकी नही बने, परन्तु गाँव के अनुरूप व्यावहारिक भी नही। मुझे तुम्हारी माता और पिता ने सभी कुछ बता दिया है। तुम्हारी माँ का आज भी यही खयाल है कि तुमने उस लडकी के उद्धार के लिए जो कुछ किया, अच्छा किया। परन्तु तुम्हारे पिता का अब भी भिन्न मत है। मैं समझता हूँ, वह धार्मिक निष्ठा के कारण ही ऐसा कहते है। फिर भी, तुम गाँव मे चर्चा का विषय बनो, यह अशुभ रहा।"

जयन्त ने कहा, "लोग मूर्ख है। वस्तुस्थिति से दूर रहते है।"

यह सुनकर, प्रोफेसर अतुल हँस दिया। तभी उसने सहज भाव से कहा, "मै तुम्हारी माँ की आशका भी प्रकट कर देना चाहता हूँ। उस ममतामयी नारी को भय है कि कही तुम "

जयन्त ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "नही-नही, प्रोफेसरसाहब! मुझे अजना से कुछ नही कहना है!"

तुरन्त ही प्रोफेसर ने कहा, "उस अजना को तो कहना है। वह अँधेरे मे पडा पत्थर तुमने सजाया है। उसे सुन्दर मूरत का रूप दे दिया है। वह अब बोलता है।" यह कहते हुए प्रोफेसर गम्भीर बन गया। उसका मुँह कमरे के बाहर आसमान की ओर उठ गया। उसी अवस्था मे उसने कहा, "जयन्त जी, वासना की पुकार भी अनसुनी कर देना आसान नही है। तुम अभी युवक हो। अविवाहित भी हो। बोलो, उस अजना मे जिन भावनाओ को तुमने सजोया, आगे उनका क्या रूप होगा? यदि उस लडकी ने कोई आमन्त्रण दिया तो क्या उसे ठुकरा सकोगे? वह अब समाज की विशिष्ट नारी बनेगी। पढती रही तो डाक्टरनी हो जाएगी।"

जयन्त ने साँस लेकर कहा, "मै उस ओर नही देखता, प्रोफेसर-साहब! यह समझना भी मेरा काम नही। अजना समाज की विशिष्ट नारी बने, यही मेरी आकाक्षा थी।"

प्रोफेसर ने अपनी तीखी दृष्टि जयन्त के मुँह पर टिका दी और कहा, "तुम्हारी माँ को यही आशका है।"

जयन्त सूखे भाव से मुस्कराया, "माँ की यह मिथ्या धारणा है।"

प्रोफेसर ने कहा, "भगवान करे, यही हो। यदि तुमने उस अजना को पत्नी बनाना स्वीकार किया तो यह अच्छा नही रहेगा।"

जयन्त सामने रखी पुस्तक के पन्ने उलटते हुए बोला, "यही होगा, प्रोफेसरसाहब! यह जयन्त वासना की भट्टी मे अपने-आपको नही झोक सकेगा।" यह कहते हुए वह उठ गया।

प्रोफेसर अतुल को उस गाँव मे आये कई दिन हो गये थे। वह अनेक परिवारो से परिचय पा चुका था। अजना का पिता चेतराम भी उसका परिचित हो गया था। किन्तु आश्चर्य था कि जयन्त के पिता पण्डित

ज्ञाननाथ से अभिवादन का आदान-प्रदान करने के अतिरिक्त, केवल एक ही दिन कुछ वार्तालाप हुआ. उसके बाद नही। वैसे यह देखकर जयन्त भी चकित था कि प्रोफेसर एक ऐसे स्थान पर अधिक उठता-बैठता है कि जहाँ अब तक वह स्वय नही जा सका था। गाँव का कोई व्यक्ति भी वहाँ जाना पसन्द नही करता था। वह था, गाँव की ठाकुर जाति मे सुखदास का घर। वह सुखदास अब बूढा था। कई वर्ष से बीमार था। उसके शरीर मे अनेक जगह पट्टियाँ बँधी थी, उसे कोढ था। पीप चूता था। उसकेघर के आत्मीय भी उसके पास आते हुए कतराते थे। बल्कि यहाँ तक कि वे लोग उसकी मौत भी चाहते थे। परन्तु वह दुर्भागी सुखदास मर नही रहा था। जैसे जड या पत्थर बनकर उस गाँव मे पडा था।

एक दिन जब जयन्त को पता चला कि प्रोफेसर उस सुखदास के यहाँ गया है, बैठा है, बाते की है और उसके जख्म भी धोये हैं, उन पर दवा लगाई है, तो अवसर पाते ही उसने कहा, "यह सुखदास अपने जीवन मे बडा आततायी रहा है, नितान्त क्रूर! आपका उसके पास जाना क्या शोभा देता है!"

प्रोफेसर ने जयन्त की बात सुनी तो वह क्षण भर के लिए मौन रहा। फिर बोला, "मै समझा, तुम अभी अधूरे डाक्टर हो। दया-ममता से भी दूर! जरूर, तुम उस चमार की लडकी अजना को उपकृत करने के लिए ही इतना प्रपञ्च रच सके हो। वह नर्स बनेगी, फिर डाक्टरनी। तब तुम्हारी सहायक बनेगी। यह तुम्हारा ढोग है, उपकार या जातिवाद के बन्धन का अन्त करना नही।"

इतनी बात सुनकर जयन्त जैसे तिलमिला गया। वह एकाएक कुछ नहीं कह सका।

किन्तु प्रोफेसर ने फिर कहा, "जयन्तकुमार, तुम मेरे शिष्य रहे हो। मैंने तुम्हे समझा है। मेरा खयाल है कि तुम्हारी सदाशयता अभी अधूरी है, दूध का उफान है। यह आदर्श और भावना आदमी का ऐसा अवलम्ब है कि जिसकी कल्पना से वह सुख पाता है, परन्तु उसे स्थायी रूप से ग्रहण नही करता। देखता हूँ कि तुम्हारी डाक्टरी प्रैक्टिस बढ रही है, रुपया आ रहा है। तुमने उस ब्राह्मण की पुत्री के विवाह पर जो रुपया दिया, वह

तुम्हारी कृपा उस ब्राह्मण पर अवश्य रही , पर तुम उसका ढोल पीटकर जो कुछ उपार्जित करना चाहते हो, बोलो, क्या वह इस त्याग से छोटा है? तुम्हारी वह बात गाँव भर मे फैली है। लोगो ने तुम्हे साधुवाद दिया है। तुम्हारी कीर्ति का ढोल बजाया है।"

जयन्त बोला, "यह तो लोगो की भावना है।"

"हाँ, हाँ, यह लोगो की भावना है। तुम्हे भी उसमे आनन्द आता है। अपनी कीर्ति गाथा सुनना भला किसको बुरा लगता है। पर कहे देता हूँ, अब तुम मे दम्भ का अंकुर फूट आया है। वह बडा वृक्ष बन जाने वाला है।" प्रोफेसर अतुल ने ऊपर आकाश की ओर देखकर कहा, "सुखदास तुम्हारी दृष्टि मे हेय है, घृणित है, यह देखकर मुझे दुःख हुआ। तुम आज तक उसके पास नही गये, इससे भी मुझे आश्चर्य हुआ। मैने सुन लिया है कि तुम्हारे पिता पण्डित है तो सूदखोर भी है। तभी तुम पढते समय समर्थ लडको मे थे, मेरे साथ इधर-उधर भी आ-जा सकते थे। तुम्हारे पिता ने गाव के समाज का शोषण किया और अपनी सन्तान को सुखपूर्ण तथा योग्य बनाने के लिए धन का व्यय किया। पर तुम भी कितने चतुर हो कि आरम्भ मे विकास करने के लिए लोगो को मुफ्त दवा दी, सेवा की भावना प्रसारित की, जब वे ग्राहक बने तो उनकी जेब काटने के लिए अपनी कैंची उठा ली। मैं अब तक चोर, डाकू और जेब कतरो की बाते सुनता आया था, लेकिन अब अनुभव करता हूँ कि तुम भी उन्ही की सज्ञा मे एक हो। उसी परम्परा को मानते हो।"

आश्चर्य कि इतनी कडवी और तीखी बात सुनकर भी जयन्त मौन था। वह कमरे के बाहर देख रहा था।

उसी समय प्रोफेसर फिर बोला, "एक बार क्या, हजार बार मैने देखा और सुना है कि अमुक व्यक्ति की जेब कटी, माल चोरी हो गया। पर सचमुच, जब मेरी जेब कटी तभी मुझे ज्ञात हुआ कि किस प्रकार, ऐसे आदमी को जिसका रुपया-पैसा कोई सुगमता से चुरा ले जाए या जेब काट कर ले जाए, पीडा होती है।" उसने कहा, "मुझे सुखदास ने सभी-कुछ बताया है कि उसने क्या-क्या किया। कितना पाप उसके द्वारा इकट्ठा हुआ। पर आज वह प्रायश्चित्त की आग मे जल रहा है। वह दुःखी है, पीड़ित है।

उसकी आत्मा कराह रही है। जब वह अपनी आत्मा के समक्ष दोषी बन चुका तो इस गॉव के समाज का प्रश्न कैसा ! पर तुमको या और किसी को मैं क्या कहूँ, स्वय उसकी पत्नी और पुत्र उसका तिरस्कार करते है। उस सुखदास ने खून किया, डाके डाले तो स्वय जेल गया, यन्त्रणाएँ पाई। पर जो धन लाया वह घर वालो ने भोगा। उसी व्यक्ति को आज कहा जाता है कि मर जाए ! बोलो, यह कैसी अमानुषिकता है ! कैसी विडम्बना है !"

जयन्त ने कहा, "इस ससार की यही परम्परा है, प्रोफेसर साहब !"

"तो यह निद्य है, अशुभ है, मनुष्यता से हीन !" प्रोफेसर ने उत्तेजित होकर कहा।

जयन्त बोला, "प्रोफेसर साहब, इस धरती पर आप जिस स्वर्ग की कल्पना करते है, वह नही आ सकता।"

प्रोफेसर ने जैसे चकित बनकर जयन्त की ओर देखा। उसने कहा, "रे, भैया ! मै वह स्वर्ग नित्य देखता हूँ। जहाँ जाता हूँ, वही उसका विस्तार और स्थान पाता हूँ। यदि तुम्हारे मन मे नर्क का वास है, स्वार्थ है, दम्भ है तो तुम्हे सर्वत्र वही दिखाई देगा।" वह बोला, "जयन्तजी, लोग समझते है कि हम दूसरे को उपकृत करने के लिए कोई त्याग करते है, नही, वे अपने को आभारित करते है। यदि मैं सुखदास की कुछ सेवा कर आया तो समझो, मेरा यही काम था, मुझे करना था, उसका ऋणी था। मुझे वह कार्य करने मे आनन्द आया। मैंने उसकी आत्मा का आशीष पाया। अपने पास से कम दिया, ले अधिक आया। बोलो, मैं क्या घाटे मे रहा ?"

जयन्त उदास भाव से मुस्करा दिया, "प्रोफेसरजी, यह अव्यवहारिक बात है। इतना कौन देखता है, कौन मानता है।"

प्रोफेसर ने अतिशय गम्भीर बनकर कहा, "तुम मानो, तुम समझो। तुम मेरे शिष्य हो न तो मै तुम्हे समझाना चाहता हूँ, यदि मैं इसमे सफल नही बना तो निश्चय ही, मैं हार जाऊँगा, अपने मिशन मे असफल हो जाऊँगा, भाई !"

उसी समय एक मरीज आया और जयन्त को साथ चलने के लिए कहा।

प्रोफेसर बोला, "जाओ, भाई। तुम्हारा ग्राहक आ गया है।"

जयन्त ने कहा, "यह धन्धा खराब है।"

प्रोफेसर हँस दिया, "देखने और समझने का भेद है। मै इसे संसार का महानतम कर्म मानता हूँ।"

जयन्त उठकर चल दिया। तभी प्रोफेसर ने कहा, "सम्भव है, मै आज चला जाऊँगा।"

जयन्त रुक गया और बोला, "नही प्रोफेसर साहब, यह कैसे होगा। अभी आपको रहना पडेगा। आपने जो कुछ कहा, वह मैने सुना।"

प्रोफेसर ने हँसकर कहा, "लेकिन वह सुखकर नही लगा होगा। आदमी अपनी प्रशसा मे आनन्द पाता है, आलोचना मे नही।"

जयन्त ने कहा, "लेकिन आप जो कुछ कहेगे, मैं उसको अपने लिए मन्त्र मानूंगा, ध्यान से सुनूंगा। आपके प्रति मेरी यही आस्था है।"

प्रोफेसर ने कहा, "अच्छा, अच्छा, अभी तुम जाओ। मरीज़ को देखो। रात मे बात करेगे। मैं भी अब सुखदास के यहाँ जाऊँगा।"

जयन्त ने कहा, "आज मै भी उसके घर चलूंगा। सचमुच, मैं कभी उस ओर नही गया, इसका खेद है। उसने भी नही बुलाया।"

प्रोफेसर बोला, "उसने मुझको भी नही बुलाया था। मैं स्वय गया। सयोगवश एक दिन उसके द्वार पर पहुँच गया।"

जयन्त चला गया। तभी अवसर पाकर जयन्त की माँ वहाँ आई। उसे देखते ही प्रोफेसर ने कहा, "आओ, भौजी! बैठो।"

कल्याणी बैठ गई और बोली, "प्रोफेसरजी, आप आये है तो इस जयन्त को समझाइये न, अब विवाह करले। लडकी वाले आते हैं और लौट जाते है।"

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ-हाँ, जयन्त का विवाह कर देना चाहिए, कमाऊ है, समझदार है तो बहू भी आनी चाहिए।"

कल्याणी बोली, "देखते हो, मै बूढी हो गई। अब न मालूम कब तक जिन्दा रहूँ। ऐसे कहाँ तक इस घर का बोझ उठाये चलूंगी।"

प्रोफेसर बोला, "तो जयन्त क्या कहता है? क्या इन्कार करता है?"

"नही, इन्कार भी नही करता।" कल्याणी बोली, "पर जो व्यक्ति

सम्बन्ध करने आता है, वही लौट जाता है। जयन्त अपनी ओर से कुछ नही कहता। बात सुनता है और टाल देता है।"

प्रोफेसर ने कहा, "मुझे लगता है कि तुम भूल में हो। अपने पुत्र को ही कुछ और समझती हो। बात करो और सम्बन्ध कर दो। मेरा खयाल है कि जयन्त पूरा दुनियादार है, जब वह पैसा पैदा करता है तो विवाह भी कर सकता है। यही आदमी करता है। उसके पैदा होने का यही अर्थ है।"

कल्याणी बोली, "तो आदमी और क्या करे? इस धरती पर आकर वही तो करेगा जिसे समाज करता आया है। समाज की रीतीनीति के साथ निभ सकेगा।"

प्रोफेसर ने बात सुनी तो मुस्करा दिया। वह अपनी उन उदास आँखो से बाहर आसमान की ओर देखने लगा।

कल्याणी बोली, "प्रोफेसर साहब, मैंने इस जयन्त के लिए बडी यन्त्रणाएं सहन की थी। यह बचपन मे बडा रोगी रहा था।"

तभी झटके के साथ प्रोफेसर ने कल्याणी की ओर देखा और उसे घूरकर बोला, "तो इसमे हुआ क्या? तुमने कोई खास बात नही की। सभी नारियाँ ऐसा करती है। या कहलाने के लिए प्रत्येक नारी अपना बलिदान देती है। बच्चे को अनुराग प्रदान करती है।"

कल्याणी बात का मर्म नही समझी। अतएव वह बोली, "हाँ, प्रोफेसर, मैंने भी यही पाया। इसके लिए उपवास किये, देवता की पूजा की।"

उसी समय प्रोफेसर को एक ऐसी औरत की बात याद हो आई कि जिसने सन्तानवती होने के लिए एक सुन्दर बालक की हत्या कर दी थी। उसके खून से अपनी माँग तर की थी। वह इस घिनौनी बात को याद करते ही अतिशय विरक्त बन गया और बोला, "हाँ, भौजी! औरत सन्तान पाने के लिए सभी कुछ करती है, किसी के बच्चे का खून तक भी कर देती है।"

कल्याणी बोली, "हाँ-हाँ, यह भी है। इस गाँव मे ही एक औरत ने अपने देवर के बच्चे को मार दिया था। आठ दिन बाद उस बालक की लाश कुएँ से निकाली गई थी। जिसने वह देखी, उसने अपनी छाती पीटी थी।"

प्रोफेसर ने जैसे आतुर बनकर कहा, "पर माँजी, ऐसा है क्यो? मैं

तो ऐसे आदमियो और घरो को जानता हूँ कि जहाँ सन्तान के कारण ही विपत्ति है। सन्तान ने माँ का खून किया। पुत्र के कारण ही बाप सिर पीटता है, फिर भी लोग सन्तान के भूखे है, तरसते है, उसके लिए मरते है। भला ऐसा क्यो ?"

कल्याणी ने अपने मुँह मे आया थूक सटक लिया, उससे एकाएक कुछ नहीं कहा गया।

प्रोफेसर बोला, "माँजी, यही ससार का भोग है। तृष्णा है। इसे पाकर आदमी कष्ट पाता है, इस जीवन के पथ पर भटकता है, बोलो क्यो ?"

कल्याणी बोली, "प्रोफेसर, यही होता है और होता आया है। तभी तो इस जगत का निर्माण हुआ है। तुम्हारी तरह सब साधु बन जाएँ, योग और वैराग्य की बाते करने लगे तो क्या इस दुनिया का प्रसार हो सकता है ?"

प्रोफेसर मुस्कराया, "माँजी, जिन बातो मे आदमी को कष्ट मिलता है और उन्ही को वह पाना चाहता है, तब भला इसका उपचार क्या ! तुम्हे पुत्र के लिए बहू लानी है, फिर बच्चा "बोलो, तुम्हे क्या मिला ! जैसी आज परम्परा है, वह बहू तुम्हारी सेवा नही करेगी। तुम्हारे लिए बोझ बनेगी। बोलो, तुमने पुत्र पाकर ही क्या पा लिया। तुम निरन्तर के कष्ट और पीडा पाकर जल्दी वृद्धा बन गई अब आ गई मौत की ओर "

चकित बनकर कल्याणी बोली, "मुझे यही करना था। मेरा यही कर्तव्य था।"

प्रोफेसर जैसे तीखी और असगत बात कह गया था, इसलिए तुरन्त ही, अपनी भावना पर अकुश लगाकर बोला, "सो तो ठीक है, माँजी ! पर तुम्हे सुख नही मिला। सन्तोष अब भी प्राप्त नही हुआ। मैं कहता हूँ, तुमने जो कुछ किया, किया, बहुत किया। एक सुन्दर और सुशील पुत्र समाज को दे दिया। इस घर का प्रतिनिधि नियुक्त कर दिया। पर अब तो अपनी ओर देखो, अपने चारो ओर, अपने मन की पीडा की ओर ! पाओ तो, तुम्हारे मन का परमेश्वर तुमसे और किस वस्तु की कामना करता है ! वह चाहता है कि तुम इस वृद्धावस्था मे उपकार की बात सोचो, इस घर की सीमा से बाहर अपने गाँव के समाज की ओर देखो।"

कल्याणी बोली, "प्रोफेसर साहब, गाॅव मक्कार है, ओछा है।"

प्रोफेसर ने कहा, "भला क्यो ! न, माॅजी ! तुम्हारे पास कुछ हो तो उसे दो। सद्‌विचार दो, सद्भावना दो, सदाशयता दो।"

कल्याणी बोली, "जो घर बनाया है, वह लुटाया नही जा सकता।"

प्रोफेसर हॅस दिया, "पर यह तुम्हारा शरीर जो एक दिन जल जाएगा, राख का ढेर बन जाएगा तो इसे क्या लोगो मे नही बाॅटा जा सकेगा ? इसके अन्दर जो परमात्मा है, वह क्या लोगो के पास न जा सकेगा, उनकी पीडा न सुनेगा, माॅजी !"

माॅजी ने सिर झुका दिया और कोई जवाब नही दिया। उसी समय जयन्त लौट आया। वह माॅ और प्रोफेसर की ओर देखने लगा।"

बारह

रात आधी से ऊपर बीत चुकी थी। प्रोफेसर अतुल प्रगाढ निद्रा मे सो रहा था। पास के दूसरे पलग पर जयन्त था। वह जाग रहा था। दूर जगल मे बार-बार सियार बोलता, उसका स्वर जयन्त के कानो मे आता। मोहल्ले के कुत्ते और गाॅव का चौकीदार भी उस रात उसकी नीद मे बाधा डाल रहे थे। जयन्त बार-बार करवट बदल रहा था। जब वह देर तक ऐसी विषम अवस्था मे पडा रहा तो अन्त मे उठ खडा हुआ और कमरे के सामने खुली छत पर चला गया। आसमान का चाॅद उस समय अपनी पूर्ण कलाओ से अलकृत था और धरती पर चाॅदनी बखेर रहा था। मकान की उस छत पर से दूर तक का जगल साफ दिखाई दे रहा था। गाँव के मन्दिर का पृष्ठ भाग भी चमक रहा था। उसका वह स्वर्ण-दर्शित बुर्ज भी दिप-दिप दमक रहा था।

लेकिन यह कैसी विषम अवस्था थी उस जयन्त की कि उसके चारो ओर फैली हुई प्रकृति हॅस रही थी और उसका मानस कलप रहा था, जैसे

रो रहा हो। उसका मन जैसे किसी विद्रोह के दावानल मे पडकर झुलसने लगा हो।

उसी समय, एकाएक जयन्त चौक गया। उसने मुडकर देखा कि प्रोफेसर उसके पास आकर खडा है। वह मुस्करा रहा है। प्रोफेसर ने जयन्त के कन्धे पर हाथ रखा और उसको अपनी ओर देखते हुए कहा, "कहो, आज क्या आया है तुम्हारे मन मे ! कोई नई बात गहरी बात ?"

प्रोफेसर से इतना सुना तो जयन्त का सिर झुक गया। वह बोल नही सका।

किन्तु प्रोफेसर ने कहा, "जयन्त, मैं तुम्हारा गुरु हूं, साथी हूँ। मुझे बताओ, क्या बात है तुम्हारे मन मे ? यह तो अनुभव करता हूं, सुनता भी हूँ कि विवाह के नाम पर तुम्हारा माता-पिता से मतभेद हे। इसकी मैं पूर्व कल्पना करता था। परन्तु रोग इतना बढ गया है, यह नही सोच पाया था।"

जयन्त ने कहा, "प्रोफेसर साहब, मै स्वय अनभिज्ञ था कि यह समस्या इतना उग्र रूप धारण करेगी। यो मेरा मन्थन भी कर सकेगी।"

प्रोफेसर ने कहा, "कहो तो, क्या इस बीच मे अजना आई थी ? तुम्हे मिली थी ?"

जयन्त ने कहा, "जी, आई थी। आज उसका पत्र भी आया था।"

"ओह, नादान जयन्त ! उस लडकी को तुम्हे मुझसे मिलाना था। मुझे भी उसका परिचय लेना था।"

जयन्त बोला, "अजना स्वय उत्सुक थी कि आपके दर्शन करे, परन्तु वह तो मुझसे दो बात करने आई थी और लौट गई।"

प्रोफेसर जयन्त के पास से हट गया। वह छत पर घूमने लगा। उसने पीछे की ओर दोनो हाथ बॉध लिए और तब फिर जयन्त के पास आकर बोला, "उस अजना ने तुमसे क्या कहा, उसकी मै सहज ही कल्पना कर पाता हूँ। निश्चय ही, उसने अपने-आपको विवाह के लिए प्रस्तुत नही किया। परन्तु जो उसकी मन:भावना है, उसे मैं समझ सकता हूँ। याद होगा, इस विषय मे, मैंने तुन्हे टकोरा था। साफ कहा था कि उस अबोध बालिका की सुप्त भावना को जगा कर खेल न करना। सो आज वही होने

चला है। तुम मे इतना साहस नही कि इस समाज और उसकी चिर-परम्परा के प्रति विद्रोही बनो। तुमने जिस पथ को स्वीकार किया है वह वणिक्-वृत्ति पर आधारित है। डाक्टरी का पेशा एक दुकानदारी है जहाँ सदाशयता और अनुभूति का सामजस्य नही होता। वहाँ सचय और उपार्जन की भावना होती है। एक विद्यार्थी डाक्टरी पढने मे इसीलिए धन व्यय करता है कि वह डाक्टरी को अपना अवलम्ब बनाएगा, उससे धन उपार्जित करेगा।" यह कहते हुए प्रोफेसर रुक गया और बोला, "तुम्हारी स्थिति नि सन्देह विषम है, कठोर है। देखते हो, तुम्हारी माँ चारपाई पर पडी है। मैने स्पष्ट रूप से समझ लिया है कि तुम्हारी माँ अपने युवा पुत्र का विरोध नही कर पाती, वह अशक्त है। परन्तु उसकी मानसिक वेदना, उसके जीवन को रिस-रिस कर नष्ट कर रही है। वह ब्राह्मणी अपने पुत्र की पत्नी भी ब्राह्मणकुल की कन्या चाहती है। तुम्हारे पिता जिस दृष्टि से पुत्र के विवाह की बात सोचते है, नि सन्देह वह केवल स्वार्थ पर आधारित है। मुझे आश्चर्य है कि वह कैसे पडित है, जाने किस दृष्टि से धर्म की पुस्तको का पाठ करते है।"

जयन्त ने कहा, "मेरे पिता सूद पर रुपया चलाते है, वणिक्-वृत्ति के है।"

आतुर बनकर प्रोफेसर बोला, "हाँ, इसीलिए! ऐसे व्यक्ति के लिए जाति और धर्म गौण है, रुपया प्रमुख है। अपने स्वार्थ का पृष्ठ-पोषण करना सर्वश्रेष्ठ है।"

जयन्त बोला, "प्रोफेसर साहब, मै ऐसे पिता की सन्तान हूँ, यह देखकर भी लज्जित हूँ।"

व्यग्र भाव मे प्रोफेसर बोला, "नही-नही, सन्तान के लिए क्या श्रेष्ठ है, यह तुम्हारे पिता ने खूब सोचा है, उन्होने समझा है। मेरा आज भी यह खयाल है कि धरती के इन्सान को जहाँ एक भावनावादी, एक धार्मिक पडित की आवश्यकता है, वहाँ निपुण व्यवसायी और दुनियादार इन्सान की भी उपादेयता है। दोनो के अपने स्थान है। वणिक निर्माण की प्रेरणा देता है, भौतिक पदार्थों का नियोजन करता है, पडित तो केवल उन्हे व्यवहार मे ला पाता है।"

जयन्त बोला, "व्यवसायिक और स्वार्थी व्यक्ति के कारण ही इस धरती पर कलक है, विषमता है।"

प्रोफेसर मुस्कराया, "शायद ऐसा हो। पर इस इन्सान को जिस व्यवस्था की आवश्यकता है, जिसके लिए पैसा मान्य है, वह कैसे आये। भावनावादी भी अन्न, वस्त्र और मकान चाहता है। वह कैसे उपलब्ध हो। भैया, यह सजा हुआ ससार, यह भौतिक पदार्थो का ढेर योही नही लग गया, इनका विकास और उत्पादन एक योजनाबद्ध कार्यप्रणाली के द्वारा हुआ है। श्रम और बुद्धि के योग से ससार का निर्माण हुआ है। अतएव, तुम्हारे पिता की आस्था एक महत्त्व रखती है। यदि वह केवल गाव के पण्डित होते तो तुम डाक्टर नही बन सकते थे। तुम्हारी पढाई पर उन्होने हजारो रुपया व्यय किया है, तब वह कहाँ से आता। उनका यह फर्ज तुम्हे भुला नही देना चाहिए। तुम्हे उनका अस्तित्व स्वीकार करना चाहिए।"

जयन्त ने अपनी देर की रुकी हुई सास छोडते हुए कहा, "मै परेशान हूँ, दु खी हूँ।"

प्रोफेसर ने कहा, "यह तुम्हारी व्यक्तिगत कमजोरी है। निश्चय ही तुममे वासना बोल रही है। अजना को प्राप्त करने की इच्छा बलवती हो उठी है तुम्हारे मन मे। तुम अपने को धोखा न दो, अपने मन से यह बात कहो कि तुम अजना से विवाह करके समाज मे अपनी ऊँची भावना का प्रसार करना चाहते हो। याद करो, मैने एक दिन तुमसे कहा था जो कि तुम्हे असगत लगा होगा कि पितृ-वृत्ति का प्रभाव तुम्हारे मानस पर भी पडा है। मैने सुन लिया है कि अजना सुन्दर है, भावनामयी है तो इसलिए तुम उसकी ओर आकर्षित हुए हो। एक शब्द मै कहूँ तो सुनो, यही जीवन की भ्रष्टता है। तुमने उसे सुपथ दिखाया तो केवल इसलिए कि उस सुन्दर बाला को अवसर पाते ही नष्ट कर दो अपनी वासना की भट्टी मे ."

एकाएक जयन्त चिल्ला उठा, "प्रोफेसर साहब "

किन्तु प्रोफेसर को तो रोष था, उसकी वाणी मे क्षोभ भरा था, अतएव, वह रुका नही, कहता गया, "जयन्तकुमार, तुम अब युवक हो। यदि बच्चे होते तो मैं तुम्हे मारता, दण्ड देता। सचमुच, तुम अपने समाज के अपराधी हो। तुमने गाँव के लोगो के विश्वास का खून किया है। निश्चय ही,

तुम मेरे अयोग्य शिष्य हो। तुम अपने पिता को दोष देते हो, पर मै कहता हूँ, तुम स्वय क्रूर हो, कसाई हो।"

बरबस ही, जयन्त नीचे झुक गया और प्रोफेसर के पैर पकडकर निरे आर्त्त स्वर मे बोला, "सचमुच, मै अयोग्य हूँ, प्रोफेसर साहब! अब मैं पश्चाताप की आग मे जल रहा हूँ।"

प्रोफेसर ने जयन्त को अपने पैरो मे पडा देखकर भी, उसकी ओर नही देखा, अपितु दूर जगल की ओर देखता हुआ बोला, "जयन्तकुमार, इस प्रात की बेला मे मै तुम्हे अभिशाप नही दे सकता। तुम मेरे नेतृत्व मे देर तक रहे हो। तुम मेरा हृदय छू सके हो!" यह कहते हुए प्रोफेसर गद्गद् हो गया। उसका स्वर भी अवरुद्ध बन गया। ममत्व आँखो मे उतर आया। वह अपनी उन भारी आँखो से नीचे बैठे जयन्त की ओर देखकर बोला, "अब उठो, देखो, सबेरा हो गया।" यह कहते हुए उसने जयन्त को ऊपर उठाया और कहा, "अब केवल तुम अपने माता-पिता की ओर देखो। उनकी बात मानो। एक शब्द मे सुनो, प्रेम नाम की भावना बहुत ऊँची है। उससे वासना की गन्ध दूर रहती है। उस प्रेम को पाने के लिए विवाह आवश्यक नही। विवाह एक सामाजिक परम्परा है, जीव-जगत मे शरीर की भूख मिटाने की निष्ठा। भला इसके अतिरिक्त इसका अस्तित्व क्या! अतएव, निश्चय ही, न अजना तुमसे प्रेम करती है, न तुम उससे। वह तो तुम दोनो के स्वरो मे वासना बोलती है।

उसी समय पूर्व की ओर दूर क्षितिज मे प्रात की अरुणिमा फूटी, दिन निकल आया। जब प्रोफेसर और जयन्त कमरे से नीचे उतरे तो उन दोनो ने देखा कि घर के आँगन मे चारपाई पर कल्याणी पडी है और उसके पास अजना बैठी है, वे दोनो रो रही है। कल्याणी दुलार और ममता के साथ अजना के झुके हुए सिर पर हाथ रखे हुए है और स्वय आँखो से आँसू बहाती हुई कुछ कहे जा रही है। किन्तु जब वे दोनो पहुँचे तो कल्याणी बोली, "अरे, प्रोफेसर, इस अजना को समझाओ। इससे कहो, मैं मरूँगी नही, मैं अपने जयन्त की तरह इसे भी अभी देर तक देखती रहूँगी।"

और प्रोफेसर अपनी बूढी आँखो से देख रहा था, यह अंजना है!

वह मन मे कह रहा था, सच, इसके मन मे करुणा है, वही तो इसकी आँखो मे फूट आई है ।"

तेरह

रात मे जब प्रोफेसर जयन्त के पास पहुँचा तो उस समय भी जयन्त की जेब मे एक पत्र था, वह अजना से मिला था । उस पत्र मे अजना ने स्पष्ट शब्दो मे लिखा था कि अपने परिवार की मान-मर्यादा की रक्षा के लिए उसका यह अन्तिम निश्चय है कि विवाह उसी व्यक्ति से करना पसन्द करेगी कि जिसे उसके माता-पिता स्वीकार करेंगे । उसी पत्र मे अजना ने जयन्त के प्रति आभार प्रदर्शित किया था कि वह उसके द्वारा प्रदत्त शिक्षा को पाकर अपने जीवन का पथ देख चुकी है । चतुर अजना ने पत्र के अन्त मे लिखा था कि जयन्त अपने विवाह पर उसे न भूले, अपनी दुल्हन का परिचय उसे पाने का भी अवसर प्रदान करे ।

किन्तु जब प्रात के समय अजना को जयन्त ने माँ के पास बैठी पाया तो उस समय वह नही समझ सका कि इतने सबेरे वह कैसे उसकी माँ के पास आई है । वह एक सप्ताह के अन्दर गाँव मे दो बार आ चुकी है, उसे पत्र भी लिख चुकी है ।

लेकिन उसी समय कल्याणी ने कहा, "अरे जयन्त, अब अजना का विवाह है । इसकी बिरादरी का लडका शहर मे पढाता है । इसके पिता ने उसीसे विवाह निश्चित किया है ।"

अजना ने अपनी बहती हुई आँखे पोछ ली थी । वह प्रोफेसर की तरफ बढ गई और उसके समक्ष सिर झुकाती हुई बोली, "यह अवसर की बात है कि आज इस शुभ प्रभात मे आपके शुभ्र दर्शन कर पाई । मेरा प्रणाम स्वीकार करे ।"

गद्‌गद्‌ भाव से प्रोफेसर ने अजना के सिर पर हाथ रख दिया और

निरे आलोड भरे स्वर मे कहा, "तुम जीती रहो, अजना! भगवान तुम्हारा मगल करे।"

अजना ने कहा, "मुझे आपका आशीष चाहिए।" यह कहते हुए अजना ने जयन्त की ओर दृष्टिपात किया। देखा कि वह पत्थर के समान कठोर और भारी था। यद्यपि प्रात का समय था, सुहावनी हवा चल रही थी, परन्तु जयन्त के मुँह पर पसीना था, वह जैसे अपने मानस की गहराई मे डूबा जा रहा था। ऐसी अवस्था मे ही अजना ने उसे टँकोरा और कहा, "आप बाहर तक मेरे साथ चलेगे! मुझे अभी लौटना है।"

जयन्त चल दिया और घर से बाहर हो गया। वहाँ से अजना का घर दूर था, परन्तु वह रास्ता उन दोनो ने बिना बोले काट दिया। यद्यपि अभी ठीक से सूर्य नही निकला था, रास्ते मे धुँधला प्रकाश था, फिर भी, न जयन्त बोला और न अजना ही। मानो दोनो के मन मे एक ही बात थी, एक ही समस्या, जिसका सुलझाव उन दोनो मे से एक के भी पास नही था। घर पहुचते ही अजना ने सोते हुए एक शहरी युवक की ओर सकेत किया और कहा, "पिताजी ने इन्हे निश्चित किया है, मेरे विवाह के लिए। कहिये, आपको पसन्द है? बी० ए० पास है। अध्यापक है। हमारी जाति के एक चौधरी के पुत्र है।"

उस सोते हुए युवक को देखते ही जयन्त ने कहा, "यह तो तुमने पत्र मे लिख दिया था। फिर इतना कष्ट क्यो किया?"

अजना ने आतुर बनकर कहा, "नही-नही, कष्ट तो आपको दिया जो यहाँ तक आना पडा।" वह बोली, "परन्तु मुझे तो आपसे यह जानना था कि आपकी सम्मति क्या है! लडका पसन्द है न, आपको! क्रिकेट का प्रसिद्ध खिलाडी है।"

जल्दी से मानो व्यग्र भाव मे जयन्त बोला, "मैं कुछ नही जानता, सच नही!" और वह लौट पडा।

किन्तु अजना ने फिर अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "जयन्तजी "

जयन्त नही रुका। उसने नही सुना। वह अपने-आप कहता गया, "पत्थर · जड "

और कदाचित् वह जयन्त मुड पाता, एक पल को देख पाता तो उसे

यह समझने में कठिनाई न होती कि अजना न पत्थर थी, न जड ! वह एक भावनामयी नारी थी जो कि यौवन और उससे प्रेरित अनुभूति के तेज प्रवाह मे बही जा रही थी, बही ही जा रही थी।

जब जयन्त चला गया तो अंजना सीधी घर मे गई और अपनी चारपाई पर कटी डाल की तरह पडते ही फूट-फूटकर रो पडी।

उधर एक शिकारी के समान, बसी पानी मे डाले, पडित ज्ञाननाथ देर से जिस मछली की तलाश मे थे, आखिर वह उनके काँटे मे फँसी। एक समर्थ और धनवान ब्राह्मण अपनी पुत्री के विवाह का आवेदन लेकर उनके पास आया और प्रथम भेंट मे ही उन्हे आशा से अधिक पैसा दे गया। प्रोफेसर अतुल उस गाँव से जा चुका था। वह जल्दी ही फिर आने को कह गया था। किन्तु यह केवल एक आश्चर्य बना रह गया कि अपने विवाह पर जयन्त एकदम मौन रहा। यह सचमुच, उसके परिचितो के लिए न समझ मे आने वाला विषय था। निश्चय ही, यह बात गाँव के अनेक व्यक्तियो की धारणा के विपरीत थी। जिन लोगो को उस समय जयन्त का मौन रह जाना पसन्द नही आया, उनमे एक था मलखान, जयन्त का पडौसी और विश्वासपात्र साथी। विवाह की तिथि निश्चित होने के बाद एक दिन की सन्ध्या मे जब मलखान गाँव की चौपाल पर गया तो उसके समवयस्क साथी रामदीन ने उसे सुनाया, "कहो मलखान, मै कहता था न, लालची बाप का बेटा भी लालची ही निकलेगा। पैसे के सामने झुक जाएगा, यह जयन्त ! पर तुम बार-बार कहते थे कि नही, जयन्त सच्चा आदमी है, आदर्शवादी है। अरे, मै आज भी कहता हूँ, साँप का बच्चा भी साँप निकलेगा। ब्राह्मण का लडका भला चमार की लडकी से विवाह कर सकेगा राम-राम कहो !"

रामदीन ठाकुर था। वह अपनी बात कहने के साथ ही ठहाका मारकर हँस दिया। उस अवस्था मे बरबस उसने चौपाल पर बैठे अन्य व्यक्तियो को भी अपनी ओर आकर्षित कर लिया।

वही पर बैठे एक वृद्ध ने कहा, "जयन्त चालाक है। जब आया था तो गाँव का सेवक बना दिखाई दिया। बिना पैसा लिए दवाई देता, लोगों के घरो मे आता-जाता। उसका बाप तो है ही एक काईयाँ, पर बेटा उससे

भी आगे निकल गया।"

पास बैठे दूसरे प्रौढ व्यक्ति ने कहा, "सपूत ऐसे ही होते है। बाप से बेटा अधिक रुपया कमाने लगा है। तुम देखना कि कुछ वर्षो मे जयन्त बडी जायदाद का मालिक बनेगा। इस इलाके का बडा आदमी हो जाएगा।"

उनमे रामदीन पढा-लिखा था। एक स्कूल मे अध्यापक था। तुरन्त बोला, "चाचा, इस धरती पर ऐसे जहरीले साँपो की कमी नही है, जो आदमी को काटते है और मारते हैं। यह जयन्त भी एक साँप है। वह लोगो को दवा देकर पैसा उपार्जित करता है। बोलो, गाँव पर इसका क्या ऐहसान है? मेरी निगाह मे तो वह भी भ्रष्ट है, इन्सानियत का कलक!"

उस प्रौढ व्यक्ति ने उपहास के साथ कहा, "रामदीन, अँगूर खट्टे है।"

इतनी बात सुनी तो लोगो मे ठहाका उठा। सभी ने उस रामदीन को बरबस ही मूर्ख बना दिया।

तभी प्रौढ फिर बोला, "पैसा सभी को चाहिए, तुम्हे भी। जो चार पैसे कमाने मे समर्थ होता है, वही सफल आदमी है। समाज मे उसी का सम्मान है। तुम देखना पण्डित का लडका जयन्त एक दिन बडा आदमी बनेगा। नाम कमायेगा।"

लेकिन धीर भाव मे रामदीन ने कहा, "इस देश मे पैसे वाले बहुत है। राजा महाराजा है। कौन उनको जानता है। परन्तु जो जनता की सेवा करता है, वह सिर पर उठाया जाता है वह गाधी, वह तिलक, वह दयानद, वह स्वामी रामकृष्ण परमहस "

उसी के पास बैठे वृद्ध ने कहा, "अरे, किनकी बात करता है, भैया! वे देवता थे। ऊँचे सस्कार लेकर इस धरती पर पैदा हुए थे।"

ऊँचे स्वर मे रामदीन बोला, "यही तो कहता हूँ। इस जयन्त ने गाँव मे आकर सेवा का ढोग क्यो रचा वह चमार की लडकी अजना' कौआ चला हस की चाल' ही-ही, हो-हो "

आश्चर्य कि उस समय मलखान अपने स्वभाव के अनुरूप चुप बैठा था। वह अपनी छोटी-छोटी मूँछो को ऐंठ रहा था। उसी समय जब रामदीन ने बात कही और ठहाका मारा तो उसने अपना सिर उठाया और रामदीन की ओर देखा। उसी अवस्था मे उसने कहा, "रामदीन भैया

तुम ठीक कहते हो। जयन्त को ऐसा बनना था तो वह रूप नही दिखाना था। भेडिये को गाय की खाल ओढकर गाँव के समक्ष नही आना था।"

रामदीन ने अपने स्वर पर ज़ोर देकर कहा, "मैं कहता हूँ, इस जयन्त ने नाबदान के कीडे का काम किया। तब तो उस लडकी का नाम भी बदल दिया। बच्चू, ऐसे सुधारवादी बने कि पढाई का काम करने लगे मुफ्त मे दवा और मुफ्त ही मे शिक्षा देने लगे। मै तभी समझता था कि अपना रास्ता बना रहा है, यह जयन्त! बोलो, अब कहाँ गई, वह प्रौढ शिक्षा की बात! अब पैसा कमाने लगा तो उसी मे लिप्त हो गया है।"

एक व्यक्ति ने कहा, "तुम गलत समझते हो। उसने कुछ बाते अच्छी भी की है। यह कम त्याग नही था कि श्रीधर को पैसा दे दिया। सचमुच तब तो बडा विनम्र था। वैसे देखता हूँ कि अब बात नही करता। अचरज की बात है कि कैसे बदल गया। शायद परिस्थिति ने दूसरे साँचे मे ढाल दिया।"

दूसने ने कहा, "अब उसके पास काम बहुत है। मरीज इतने आते है कि ठीक से देख नही पाता। बात करते भी झुँझलाता है। चिडचिडा बन गया है।"

रामदीन ने कहा, "दोनो हाथो से रुपया कमाता है। घर भरता है।"

उसी समय मलखान वहाँ से उठ चला। वह अपने खेत की ओर चल दिया। उसके मन मे अब भी यह बात थी कि जयन्त स्वय नही बदला, उसे मजबूर किया गया है। जब वह एक खेत के किनारे से जा रहा था तो तभी चेता चमार खेत मे काम करता दिखाई दिया। उसे देख मलखान रुक गया और पास जाकर बोला, "कहो, चेतराम, क्या हाल है! तुम्हारी लडकी अजना ··सुना है कि तुमने कही उसका विवाह निश्चित कर दिया है?"

चेतराम ने कहा, "हाँ, मलखान, सोचता तो हूँ कि लडकी का विवाह हो जाए। पर वह नही करती। अजना पढ रही है। उसने एक इम्तहान पास कर लिया है। और अब वह एक अस्पताल मे काम भी करने लगी है।"

मलखान बोला, "तो कुछ पाती है?"

चेतराम बोला, "हाँ, कुछ पाने लगी है। पिछली बार जब आई तो

पचास रुपया दे गई थी।"

"पर उसका विवाह ? सियानी लडकी अब कब तक ऐसे रहेगी। मैंने तो सुना था कि "

चेतराम बोला, "भैया, अब यह बात मेरे बस के बाहर है। लडकी पूरी शहरातिन हो गई। मेरी पहुँच तो देहाती लडको तक थी, जिन्हे अब वह स्वीकार नही करती।

"तो यो कहो, यह भी तुमने लडकी पर छोड दिया है।" तभी मलखान ने साँस भरी और कहा, 'और यह भी सुना, जयन्तबाबू का विवाह हो रहा है।"

"हाँ-हाँ, सुन लिया। वडा घर मिला है। पहली भेट मे बहुत रुपया दे गया है, लडकीवाला!"

'अरे, वह तो राजा है। घर भर देगा, पण्डित ज्ञाननाथ का!"

प्रसन्न होकर चेतराम बोला, "अच्छा है, भैया! लडका भी भला है। उसी के सहारे तो मेरी लडकी का भाग्य बदला है।"

तभी मलखान बोला, "तेरी लडकी का भाग्य तो बदल दिया, लेकिन तुझसे लडकी को दूर भी कर दिया। लोग तो समझते थे कि तेरी लडकी और जयन्त "

"अरे, भैया! जिसके जो मुँह मे आये कह डालता है। दूसरे की पगडी उछालना लोग खूब पसन्द करते है। भला चमार और ब्राह्मण का कही सम्बन्ध होता है? कभी सुना है?"

मलखान को जैसे आगे कहने का सहारा मिला। वह बोला, "लोग मूर्ख नही है, चेतराम! किसी बात का सिरा जरूर पकड़ते है। और जानता तो है तू, अब हमारे देश मे ऊँच-नीच का भेद-भाव नही रहा।"

चेतराम ने कहा, "मेरी लडकी कुछ औरतो के साथ पढने जाती थी, बस, यही तो। गॉव वालो ने इसी पर कहानी गढ दी। मै गरीब था न, जाति का चमार, तो मेरी पगडी उछाल दी।"

"हॉ, यही चेतराम! यह गॉव का कम अपराध नही था। पर मेरा यह भी ख्याल है कि तेरी लडकी के साथ जयन्त ने भी न्याय नही किया। उसने सूखे खेत मे पानी दिया तो उससे मिट्टी के नीचे दबा हुआ बीज अकुर

बनकर फूट आया था। समझता है न, अजना को जब पता चलेगा कि जयन्त की सगाई हो गई तो उसके अरमानो का किला ढह जाएगा· उस अबोध बालिका के मन मे इस जयन्त ने प्रेम का अकुर पैदा किया था। यही जयन्त का पाप था। लोगो ने ठीक समझा था।"

चेतराम उस समय अपनी बूढी आँखो से दूर पथ की ओर देख रहा था। वह जैसे मलखान की बात के अन्तराल मे डूब चुका था।

मलखान बोला, "चेतराम भगत, प्रेम करना पाप नही, अन्याय नही। तेरी लडकी जवान थी। उसके पास भी अभिलाषा थी। जो जयन्त पहले जातिवाद को पाप मानता था, मै देखता हूँ कि आज उसी ने जाति के समक्ष अपना सिर झुका दिया है। और यह कहे देता हूँ, अजना सरीखी लडकी के इन विचारो से प्रभावित होकर ही वह दिन-ब-दिन उसके सम्पर्क मे पहुँचता गया।" उन दिनो मलखान के मन मे यह बात आती थी कि जिस दिन यह जयन्त चमार की लडकी अजना से विवाह कर लेगा, गाँव मे वह पहला व्यक्ति होगा कि जो जयन्त के गले मे फूलो का हार डालकर यह कहेगा कि तुम हो वास्तव मे साहसी नव-चेतना के प्रतीक!

किन्तु उसी जयन्त को जब उसने फिसलकर नीचे गिरता पाया तो मलखान ने सहज ही समझ लिया कि सब इसी प्रकार फिसलते है—चिकनाई है न इस धरती पर, काई जमी है, सदियों से एक ही परम्परा और गन्दी विचारधारा इस धरती पर तैरती रही है, इसलिए आदमी टिक नही सकता। पैर जमाकर खडा नही हो सकता। आदर्श और त्याग की आड लेकर यह आदमी शिकार करता है, छद्मवेशी बनता है, आदमी से जानवर फिर पिशाच··

निस्सदेह, उस समय खेत पर खडे मलखान के मस्तिष्क मे विचारो की आँधी उठ रही थी। उसके मन मे बार-बार आता था कि वह अभी गाँव लौट जाए और लाठी का एक भरा हाथ उस जयन्त की खोपडी पर मार दे। उसे धरती पर गिरा दे और गाँव के समूचे समाज को सुनाकर कहे—यह भी चोर है, डाकू है। इसका अपराध इसलिए बडा है कि इसने सेवा की आड़ ली। अतः इसको यही सजा मिलनी चाहिए थी।

मलखान अपने खेत से लौट पडा। उसका मन गिर गया, उत्साहहीन

भी हो गया। और कदाचित् इसका कारण यह था कि जयन्त का प्रसग आने पर उसकी भावना खण्ड-खण्ड हो गई। उसकी आँखो के समक्ष ही धरती पर छितरा गई। वह भावना ठगी गई। असमय मृत्यु के मुँह मे समा गई। क्योकि बचपन से मलखान को ऐसा व्यक्ति तो मिला नही कि जो ऊँची बात करता हो। प्रस्तुत परम्पराओ और इच्छाओ से तनिक हटकर चलता हो। लेकिन एक जयन्त ही ऐसा आदमी दिखाई दिया कि जो शहर से पढकर, बहुत-सी किताबो का ज्ञान लेकर, जब गाँव मे आया तो सहज ही, मलखान ने समझा कि हाँ, इस जयन्त के पास कुछ है। प्रेरणा है, उत्साह है और लगन है। यह स्वार्थ और स्वेच्छा की दलदल से दूर खडा है। अपना-पराया भी नही देखता। बस, केवल वह एक आदमी है आदमी की जाति को प्यार करता है, उसके प्रति समर्पित हो जाने का भाव रखता है।

लेकिन वही जयन्त जब परम्पराओ का, इन्सान की पुरानी आदतो का दास बना दिखाई दिया तो सचमुच, मलखान का मन गिर गया। उसे लगा कि यह भी साँप हैं, इसके दाँतो मे जहर है, कालकूट की तरह फुँफकारता है। तमाम दुनिया की दौलत यह जयन्त भी अपने घर मे भर लेनी चाहता है।

और आश्चर्य की बात तो यह थी कि एक बार स्वय ही जयन्त ने मलखान को बताया था कि ये डॉक्टर, ये वकील भी सरमायेदारो की तरह इन्सान का शोषण करते है, अवसरवादी बनते है और इन्सान की विवशता का लाभ उठाते है। उसी अमिट वाक्य को अपने मानस [illegible] लिए, मलखान बार-बार चौकता और कहता तो अब क्या इस जयन्त की उस बात का अर्थ क्या! मलखान रास्ते मे रुक गया और ऊपर नीले आसमान को देख, कडुवे भाव से मुस्कराकर बोल दिया, "सच ही कहा है किसी ने कि आदमी सहज में नही समझा जाता। साँप-बिच्छू से बचा जा सकता है। पर इस आदमी से नही।"

उसी समय मलखान चौक गया। चकित भी हुआ। उसने देखा कि सामने से चेतराम की लडकी अजना जा रही है। उसके साथ एक लडकी और है। दोनो पूरी शहरातिन है। मेम बनी है।

अजना के पास आते ही मलखान बोल पडा, "अरे, अजना तू ! कब आई ?"

अजना ने कहा, "मै अभी आई थी।"

"अच्छा, तो छुट्टी होगी। ये कौन है ?"

अजना बोली, "मेरी सहपाठिन है।"

"तो रहोगी न ?"

अजना ने कहा, "नही, मै कल ही लौट जाऊँगी।"

"तो जयन्तबाबू से भेंट करोगी ?"

अजना ने दूर उडते हुए पछी की ओर देखते हुए कहा, "हॉ, मिल सकी तो मिलूँगी। वह ठीक तो है ? '

मलखान बोला, "तुमने सुना तो होगा ही कि जयन्त का ब्याह "

अजना ने कहा, "हा, अभी-अभी सुना है। मोहल्ले की एक लडकी ने बताया है।"

मलखान ने कहा, "लडकी का बाप बडा आदमी है। जयन्त के पिता को बहुत धन देगा। सगाई मे ही कई हजार नगद और सामान दे गया है।"

अजना ने कहा, "ठीक तो है रुपये मे रुपया आता है। जयन्तबाबू भी तो बडे आदमी है। ऊँचे विचार रखते है।"

मलखान ने उन दोनो लडकियो को देखते हुए कहा, "हा, आदमी विचार तो ऊँचे रखता है, पर कर्म नीचे करता है।"

बात सुनकर अजना चचल बन गई। वह तुरन्त बोली, "अच्छा है, भैया मलखान। सभी ऐसा कहते हैं और करते है।" और इतना कहने के साथ ही उसने अपने पैरों को आगे बढा दिया।

चौदह

पत्थर पर जब पत्थर मारा जाता है तो आग निकलती है। वह भावनाओ से भरा युवक मलखान भले ही इस बात का अनुमान नही लगा सका कि उसकी बात से अजना को कितनी चोट पहुँची, परन्तु यह सत्य था कि वह भावनामयी एकाएक ऐसी बन गई कि जैसे रो पडेगी, मूच्छित होकर उस रास्ते पर गिर पडेगी। उसकी साथिन भी उसी अस्पताल मे नर्स थी कि जिसमे अजना काम करती थी। उस चतुर नर्स ने इस बात को समझ लिया कि जरूर इस अजना के मन मे कोई बात है, परेशानी है। इसलिए वह एक हरे-भरे खेत के डौले पर रुक गई और बोली, "अहा ! कैसा सुहावना मौसम है। यह कितना अनुराग और उल्लास भरा है।"

लेकिन अजना तब भी मौन रही। वह बोल नही सकी।

वह नर्स बोली, "देखो अजना, यह समाँ भी नही रहेगा और एक दिन हम तुम भी नही।"

अजना ने साँस भरकर कहा, "यहाँ जो कुछ है वह सभी अस्थायी है, अस्थिर है।"

नीरा नाम की उस नर्स ने कहा, "अजनादेवी, पदार्थ-सेवी मनुष्य यह नही देखता कि क्या स्थायी है और क्या नही। बस, यह समझ लो कि मनुष्य नवीनता का प्रेमी है। भौतिक-जगत मे रस लेना ही इसका स्वभाव हे।"

किन्तु नीरा की वह बात अजना को या तो रुचिकर नही लगी अथवा समझ मे नही आई। वह मौन बनी रही। वह केवल हरे खेत की ओर स्थिर दृष्टि से देखती रही।

नीरा ने कहा, "केवल अपरिवर्तित भगवान है, वह सत्य की भावना है।"

तभी अजना ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "हाँ, मनुष्य भावना भी बदलता है।"

नीरा ने कहा, "यह परिस्थिति की बात है।"

जैसे झुँझलाकर अजना बोली, "यह झूठा रूपक है, छलना है। मै

जानती हूँ कि आदमी स्वार्थवश ऐसा करता है।"

बरबस, नीरा ने हँस दिया। उसने सिर के ऊपर से जाते हुए सफेद बगुलो का दल देखा और कहा, "अजना बहिन, यह विषय हमारी समझ से परे है, इतना ही जितना यह कि ये बगुले उडकर पता नही कहा जाएँ। मै तो बस, इतना समझती हूँ कि इस धरती पर जो भी आता है वह अपनी परिस्थिति के अनुरूप जीवन का आनन्द लेता है। उसमे डूब जाना पसन्द करता है।"

अजना ने कहा, "मै भी मानती हूँ।"

"तो बस, तुम भी इस सुहावने जीवन का आनन्द लो। सच बताना, वह फौज का कैप्टन क्या कहता था? मै रोज देखती थी कि तुम उस बीमार के पलग के पास जाती, तो वह एक अपूर्व और प्यार की दृष्टि से तुम्हारी ओर देखता था। क्यो, कोई प्रेम की बात कहता था? मुझसे न छिपाना। मैं उस कैप्टेन को जानती हूँ। एक बार पहले भी वह अस्पताल मे आया था। तब उसके कन्धे मे गोली लगी थी। पद्रन्ह दिन मेरे सरक्षण मे रहा था। मुझे यह भी पता है कि उसे आज तक ऐसा सुयोग नही मिला। उसे किसी लडकी ने प्रेम नही किया। जो भी उसके पास आई वह उससे डरी ही, उस भीमकाय काले-कलूटे कैप्टन से कोई भी प्रेम करने के लिए प्रस्तुत नही हुई। मै जानती हूँ, उसकी एक मा थी लेकिन अब चल बसी है। उसका घर सूना है, दिल सूना, यो उसका जीवन भी सूना है।"

उस समय अजना गम्भीर थी, उदास बनी थी। अभी बाते समाप्त ही हुई थी कि अजना का घर आ गया। वे दोनो घर मे चली गईं। अजना की माँ चूल्हे पर बैठी रोटी बना रही थी। देखकर बोली, "अरी, अब आई हो तुम, बैठो। रोटी खा लो।"

नीरा ने पूछा, "क्या बनाया है, माँजी!"

अजना की माँ बोली, "देहाती खाना है, बेटी! जगल का साग तथा ये मक्का की रोटी है!"

"वाह-वाह। यही तो शहर मे नही मिलता। आज मिला है, तो खूब खाऊँगी। बैठ अजना। अब मैने समझ लिया। यहाँ गाँव मे नया अन्न मिलता है, नया जीवन! अब मैं तेरे साथ आया करूँगी। तू न लाएगी

तो स्वय आ जाया करूँगी, क्यो माँजी, है न !"

"माँ ने कहा, "हाँ, बेटी ! तुम्हारा घर है। जब आओगी तो इसका द्वार तुम्हे खुला मिलेगा।"

दोनो बैठ गई, रोटी खाने लगी।

तभी नीरा ने कहा, "यह सच है कि गाँव मे दिखावा नही, यहाँ का आदमी बहु-व्यसनी नही, प्रमादी नही।"

अजना बोली, "यहाँ ऐसा साधन भी नही है, पैसा नही है तो बाजार नही, सिनेमा या खेल-तमाशा नही है।"

नीरा ने कहा, "बाहर का जीवन गुलझटदार है, सीधा या साफ नही है। वहाँ आदमी के पास पैसा जिस तेजी से आता है उसी तीव्रता से चला जाता है। अन्तत आदमी पराश्रित और दीन रहता है।"

रूखे भाव मे अजना ने हँसकर कहा, "फिर भी वहाँ का आदमी दम्भी और मगरूर रहता है। अपने सामने किसी को कुछ नही समझता है।"

उसी समय माँ ने कहा, "थोडा साग और लो। रोटी भी दूँ क्या ?"

अजना बोली, "मै खा चुकी हूँ।"

नीरा ने भी तत्काल हाथ रोकते हुए कहा, "बस माँजी !"

माँ बोली, "इस अजना को अब जाने क्या हो गया है। अपनी खुराक भी छोडती जाती है। रोटी न खाएगी तो फिर किस सहारे चलेगी।"

परिहास के स्वर मे नीरा ने कहा, "यह अजना चटोरी हो गई है।"

किन्तु माँ अपने मन की बात लेकर बोली, "अब कहाँ गई थी ? क्या जयन्त के पास ?"

अजना ने कहा, "नही, जगल मे।"

माँ ने कहा, "जयन्त के पास तू भी जाती और बधाई दे आती। तेरा चाचा तो गया था।"

नीरा बोली, "माँजी, किसी का बडे घर मे ब्याह हो तो यह क्या बडी बात है। उस जयन्त ने कौन-सा किला फतह किया है। वह कौन है ?"

माँ ने कहा, "नही बेटी, उसका हम लोगो के ऊपर ऐहसान है। अजना को इस अवस्था पर पहुँचाना उसी का काम है। आदमी भला है। यह अजना वहाँ जाये तो तू इसके साथ चली जाना। बात करेगी तो कहेगी, वह

जयन्त समझदार है । घर का बडा है तो दिल का भी बडा हे ।"

किन्तु नीरा ने उपेक्षा से कहा, "माँजी, हमारे अस्पताल मे ऐसे बहुत से मरीज आते है कि जो पढे-लिखे होते है । बडी लच्छेदार बाते करते हे । और वह अस्पताल ही क्यो, समूचा शहर ऐसे ही आदमियो से भरा पडा हे। सच तुम वहाँ जाकर देखो तो कहोगी कि वाकई आदमी मक्खी की तरह भिनभिनाता है। किन्तु वह सफेदपोश आदमी, वह लच्छेदार बाते करने वाला इन्सान, किसी की जेब काटता है, किसी को चोरी करता हे और किसी का खून कर देता है । मै कहती हूँ जितने कम आदमियो से मिला जाए उतना ही अच्छा है । वह जयन्त कैसा है, मुझे इसका पता चल गया । अभी रास्ते मे एक आदमी इस अजना को बता गया है ।"

चकित बनकर माँ ने पूछा, "अरी, कौन था वह, अजना ? मै जानती हूं, उस जयन्त के बैरी-दुश्मन बहुत है । खाते-पीते इज्जतदार आदमी को क्या लोग फटी आँखो देखते है ? हाँ, कौन था, री ?"

उदास स्वर मे अजना ने कह दिया, "मलखान था मा !"

मलखान । अरी, वह तो जब मिलता तभी जयन्त की बडाई करता था । अब एकदम बदल गया ? वह भी दूसरे शिविर मे चला गया ?" माँ ने चकित स्वर मे कहा ।

अजना उठकर खडी हो गई और बोली, "आदमी कब बदलता है, इसका कोई नपैना नही है, माँ !"

माँ ने कहा, "राम-राम यह आदमी एक मुंह से जाने कितनी बाते करता है । जिसको अच्छा कहता है तो उसी को बुरा कहते भी न लजाता है और न आगा-पीछा देखता है ।"

वहाँ से दोनो लडकियाँ एक चारपाई पर जा पड़ीं । उसी समय नीरा बोली, "चलना हो तो चल, उस जयन्त के पास ! मै भी देख आऊँ तेरे उस डाक्टर को । तूने भी बहुत बार उसका जिक्र किया था । सदा प्रशसा की थी । तेरे कमरे मे लगा फोटो तो मैने अनेक बार देखा था । उसमे तो डाक्टर जयन्त सुन्दर और शरीर से स्वस्थ दिखता है ।"

अजना ने कहा, "अब मेरा उस ओर जाना ठीक नही है ।"

नीरा बोली, "तो रहने दे । मार गोली ।" उसने आरम्भ रखा "सच

इस गॉव मे शान्ति है, चैन है। मैने रोटी भी अधिक खा ली। बडी जायके-दार लगी। शायद मक्का की रोटी आज तक नही खाई थी।"

यद्यपि उस समय अजना के मन मे जयन्त की बात थी, परन्तु जब नीरा ने अपनी बात कही तो वह जैसे अनजाने मे बोल पडी, "यहाँ का यही खाना है। सस्ता है और यही सुलभ होता है।"

नीरा बोली, "किन्तु गॉव मे शोभा नही। गन्दगी है। देख तो, चारो ओर कितनी मक्खियाँ हैं। वह सामने पानी के पोखर मे कितने मच्छर भिनभिना रहे है। चारो ओर कूडियो के ढेर लगे है।"

अजना ने सास भर कर कहा, "नीरा बहिन, गॉव का जीवन भी कठोर है, विषम है। दरिद्रता ने यहाँ के प्रत्येक व्यक्ति को ग्रस रखा है। यहाँ अशिक्षा है। घर-घर पीडा से युक्त है। और इस सबका कारण एक ही है कि यहाँ पैसा नही है, उसके आने का आधार नही। कोई रास्ता नही।"

सॉस भर, नीरा ने कहा, "वास्तव मे यही बात है।"

अजना अब उठकर बैठ गई और सामने देखने लगी।

चौककर नीरा ने पूछा, "वहाँ क्या देख रही है?"

किन्तु जब तक अजना कुछ कहती इससे पहले ही नीरा ने देखा कि दो आदमियो के साथ जयन्त उस छप्पर के समीप आ रहा है कि जिसके नीचे खुद वे दोनो पडी थी। पास आते ही उसने अजना को देखकर कहा, "अरे, अजना तुम यहाँ! कब आई?"

अजना चारपाई से खडी हो गई और बोली, "आज ही आई, दो घण्टे पूर्व!"

"अच्छा, अच्छा। मुझे खबर मिल गई थी कि तुम्हे अस्पताल मे काम मिल गया है। चलो अच्छा ही हुआ है। अब तुम और तरक्की कर सकोगी। यह साथ मे कौन? शायद 'सिस्टर' है?"

अजना ने कहा, "यह नीरा है। उसी अस्पताल मे नर्स का कार्य करती है।"

जयन्त ने पैर आगे बढाते हुए कहा, "चौधरी का लडका बीमार है, शायद हैजा हो गया है।"

अजना ने तत्काल कहा, "मैं भी चलूँ तुम्हारे साथ!"

जयन्त बोला, "नही, नही, तुम बैठो, आराम करो !" और वह उन आदमियो के साथ आगे बढ गया।

तभी नीरा ने कहा, "मेरे विचार मे यही जयन्त डाक्टर था।"

मानो कही उस जगह से दूर जाते हुए अजना ने भारी स्वर से कहा, "हाँ, यही था, डाक्टर जयन्त !"

"यह जयन्त यहाँ खूब उपार्जित करता है। लोगो द्वारा पूजा जाता है। अन्धो मे काना राजा है।" नीरा हँसी और फिर बोल पडी, "अब समझी मै, मेरी प्यारी साथिन के मन मे क्या डोलता है। कौन रमता है। सच यह जयन्त सुन्दर लगता है।"

अजना ने कहा, "नीरा बहिन, कोई और समझे या नही पर तू जरूर समझ ले। मैने कभी नही चाहा कि इस जयन्त का पल्ला पकड लूँ, इसके पास मिलकर बैठ जाऊँ। मै इस जयन्त का सम्मान करती हूँ। मै इसकी ऋणी हूँ। यह आदमी भले ही हो, पर मैं इसे देवता मानती हूँ।"

उस समय अजना के समान नीरा भी गम्भीर बनी थी। नीरा बोली, "तुम्हे यही सोचना चाहिए, इस कुलीन जयन्त को पथ-भ्रष्ट करने की बात मन मे नही लानी चाहिए।"

अजना बोली, "किन्तु मै यह भी पसन्द नही करूँगी कि यह जयन्त अपने मन और स्वभाव से बदल जाए। इन्सान की बस्ती मे बैठकर पूरा कसाई बन जाए। मैने सुना है कि अब यह लोगो से कसकर पैसा वसूल करता है। खूब कमाता है। पैसा भागता है तो यह भी उस पैसे के पीछे भागता जाता है।" उसने बात जारी रखी "इस जयन्त ने एक दिन मेरा आवाहन किया था, मुझे उद्बोधित किया। इसने मेरा निर्माण किया। मै चाहती हूँ कि यह जयन्त अपनी आस्था को न भूल जाए।"

यह सुनकर नीरा हँसी नही। वह मौन रह गई। कुछ ठहरकर बोली, "आज का तत्वज्ञानी वही है कि जो पैसा प्राप्त करने की कला पहचान ले। यह डाक्टर जयन्त वही तो करता है। जब डाक्टरी पढा है तो उसका उपयोग करना ही शोभा देता है। माँ-बाप ने पढाई पर पैसा लगाया तो उसे सूद-सहित वसूल करना इसे भी रुचिकर लगेगा।"

किन्तु अजना इतना सुनकर चिढ गई और तीव्र स्वर मे बोली, "ठीक

तो है, कसाई, कसाई क्यो न हो। बुद्ध या ईसामसीह के अवतार को मान्यता देना भी बेकार है।" उसने कहा, "नीरा, मेरा मत है कि आदमी उपकारी बनने का ढोल न पीटे। इस जयन्त ने एक दिन अपने आपको उपकारी के रूप मे प्रकट किया था। गाँव मे इस नाते ही परिचित हुआ था। और जानती है तू, मेरा भी शहर जाने का यही अर्थ था। सोचा था कि इस जयन्त के साथ समाज की सेवा करूँगी, मै भी कन्धे-से-कन्धा मिलाकर चलूँगी। पर अब मेरे अरमानो का वह किला असमय मे गिर गया।"

नीरा ने तब अपने स्वर पर जोर देकर कहा, 'अजना, यह तेरा स्वार्थ था। मै नारी की स्थिति मे समझती हूँ कि तेरा मिथ्या प्रमाद था। तू कहे या नही, पर यह जयन्त तुझे नही मिला। तेरा इतना बडा विचार था, राम-राम! भला क्या यह तुम दोनो के लिए शोभनीय था!"

उदास स्वर मे अजना बोली, "नीरा, मेरे पास भी भावना थी, अनुभूति थी, इस जयन्त ने ही मेरा सुप्त-हृदय जगा दिया था।" उसने साँस भरी और कहा, "पर यह समझ ले, मैने कभी भी इस जयन्त को ठगने का प्रयत्न नही किया। मैने अपने जीवन से अधिक उसे महत्व दिया।"

नीरा ने कहा, "तुम्हारे लिए यही शोभनीय था। तुम्हे और कोई बधाई दे या नही, पर मेरा हृदय जरूर साधुवाद देगा।"

अजना ने कहा, "मै इस जयन्त को नही भूल सकती और न ही भुलाया जाएगा!"

नीरा कुछ कहती कि उसी समय अजना का पिता लौट आया। उसके सिर पर घास का गट्ठर था। उसे छप्पर मे एक तरफ डाल कर वह घर मे चला गया। वह आँगन मे बैठकर सुस्ताने लगा।

उस वृद्ध को देख नीरा ने प्रस्तुत प्रसग बदल दिया और पूछा, "बोल तो, तेरे पिता की उमर क्या होगी, साठ से ऊपर तो होगी ही!"

अजना ने साँस भरकर कहा, "शायद सत्तर से ऊपर है।"

नीरा बोली, "और तूने मुझसे एक बार कहा था कि तेरे पिताजी अपनी बिरादरी मे भगतजी के नाम से पुकारे जाते है। दूसरो को भलाई का उपदेश देते है, ठीक है न!"

अजना बोली, "मेरे पिता जैसे ऊपर से है वैसे ही अन्दर से है। उनके पेट मे काला विचार नही है। कही छुपाव नहीं है, किसी के लिए दुराव भी नही है।"

नीरा बोली, "फिर भी उनका बदन नगा है। फटा सलूका पहिने हे। इस बुढापे मे इतनी मेहनत करते है। भगवान और भावना के उपासक यो अभावग्रस्त रहे, हाय!"

अजना बोली, "हम गरीब है। मजदूरी करके ही अपना पेट पालते है।"

धीर भाव से नीरा बोली, "ऐसे ही परिवार धन्य है। वे जीवन के अँधेरे मे रहकर भी सन्तोष और सुख का अनुभव करते है।"

इतनी बात सुनकर अजना मौन रह गई। वह कहना चाहती थी कि मेरे पिता भूखे है, दरिद्र है, तो फिर भी अपने भाइयो का साथ देते है। अपने पेट की रोटी अनेक बार दूसरो को दे चुके है। जाडे मे ठिठुरते नगे आदमी को अपने शरीर का कपडा उतारकर प्रदान करते है। किन्तु अजना ने यह सब नही कहा। उस सध्या के सुहावने समय मे कदाचित् जीवन मे प्रथम बार उनके मन मे अपने पिता के प्रति ऐसा सम्मान पैदा हुआ कि वह ऐसे पिता की पुत्री है जो कि उदार है, पढा-लिखा न होकर भी ऊँची बात करता है। लोगो को भला रहने के लिए कहता है। अब अजना के मन मे ऐसा भाव आया तो उसकी आँखे चमक उठी, मुँह पर तेज झलक आया। उसने खुले स्वर मे नीरा को सुनाया, "बहिन मेरा पिता सरल है, सीधा है। लेकिन लोग ऐसे आदमी को बुद्धू और कमजोर मानते है। वह यह नही देखते कि उसके मन मे भगवान बोलता है। जब ऐसे आदमी को सताया जाता है तो उसके मन का भगवान रोता है। मेरा पिता कहता है, तन उजला हुआ तो क्या, मन भी उजला चाहिए। और जब मन काला है, तो समूचा जगत भी काला दिखाई देता है।"

नीरा ने कहा, "यह तो है ही। आदमी के मन का चोर सभी ओर बोलता है। पापी आदमी स्वय अशान्त रहता है तो दूसरो के लिए भी परेशानी का कारण बनता है।"

उसी समय एक आदमी आया और वह एक लिफाफा अजना की ओर

बढाकर बोला, "यह डाक्टर साहब ने दिया है।"

अजना ने उस बडे लिफाफे से पत्र निकाला, वह निमन्त्रण पत्र था, जयन्त के विवाह का पत्र।

देखते ही नीरा ने जोर से कहा, "इस डॉक्टर ने जले पर नमक छिडका है।"

किन्तु अजना चुप रही, उस क्षण उससे बोला नही गया। मुँह का थूक गले मे अटक गया, आँखो मे अन्धेरा छा गया था। नीरा देख नही सकी कि अजना की आँखो मे पानी उतर आया है।

पन्द्रह

सध्या के समय जयन्त ने अजना को जो विवाह का निमन्त्रण-पत्र भेजा था उसी के एक भाग पर लिखा था, "मन्दिर मे प्रतीक्षा करूँगा।" रात हो चली थी। चारो ओर अँधियारी छाने लगी। दिन मे ही पानी बरस चुका था। हवा बन्द थी। उमस हो गई थी। धरती की दबी हुई बदबू उस वर्षा के कारण उभर आई थी। मच्छर भी पैदा हो गये थे। नीरा सो गई तो तभी अजना उठी और मन्दिर की ओर चल पडी। निश्चय ही, उस समय उसकी छाती मे धडकन थी। वह नही चाहती थी कि अब जयन्त और उसका किसी एकान्त मे साक्षात्कार हो। वह दुर्बल थी। कदाचित् उसकी आत्मा मे इतना तेज नही था कि वह जयन्त सरीखे उदार और सहायक से मुँह मोड लेती। फिर भी, जब जयन्त ने उसका आवाहन किया, उसे बुलाया तो वह नही रुक सकी। मन्दिर पर जाते ही उसने देखा कि जयन्त वहाँ के रास्ते पर खडा है। अजना को देख पाते ही उसने कहा, "मैने समझा था कि तुम नही आओगी। तुमने जिस प्रकार का प्रदर्शन किया, वैसा आगे भी करोगी।"

अजना ने कहा, "जयन्त बाबू, मै इतनी कठोर कहाँ हूँ। अब भी

निरावलम्ब हूँ।"

जयन्त बोला, "इस धरती पर सभी दुर्बल है, आधारहीन है। पर तुम बताओ, अपने जिस विवाह की तुमने चर्चा की, मेरे समक्ष गलत प्रदर्शन किया, वह क्या ठीक था ? बताओ, तुम्हारे साथ आने वाला वह युवक कौन था ?"

अजना ने कहा, "जयन्तजी, मै इस अन्धेरे मे नही देख पाती कि तुम्हारे मुँह पर कैसा भाव है ? पर मन मे क्रोध हो तो मै समक्ष हूँ, मेरे मुँह पर तमाचा मार सकते हो। तुम्हे पूरा अधिकार है। वैसे, इतना अवश्य कहूँगी कि मैंने जो कुछ किया वही मुझे करना था। वही मेरे लिए उचित था। मेरे माता-पिता का भी मुझे यही आदेश था। वह युवक अध्यापक था। वह विवाहित है। केवल मेरे साथ गाँव देखने आया था।"

तुरन्त जयन्त बोला, "ओह ! तू रहस्यमयी अजना।"

अजना ने कहा, "कभी कहा था तुमने, यह विश्व रहस्य से भरा है तो यह एक अकेला मनुष्य भी क्या सहज मे समझा जा सकता है ? मेरी आत्मा आज भी यह कहती है कि तुमसे मैने जो कुछ पाया तो उसका बदला यह नही था कि मैं तुम्हे ठगती। तुम्हारे समाज और माता-पिता से तुम्हे छीन लेती। वैसे जानते तुम भी हो कि वे बाँहे इतनी बलिष्ठ नही कि जो सभी का प्रतिरोध पाकर भी, तुम्हे कसकर पकड लेती।"

जयन्त ने साँस भरी और छोड दी। उसने काले आसमान की ओर अपनी आँखे उठा दी।

अजना ने फिर कहा, "जयन्तजी, स्वार्थ मेरा था। तुम्हे तो सुन्दरतम नारियाँ मिल सकेगी, पर मुझे तुम सरीखा कहाँ मिलेगा। जानते हो, एक दिन इतना त्याग करने के लिए मेरे पिता ने अपनी पगडी को मेरे पैरो मे डाल दिया था। बाद मुझे यह भी पता चला कि इस कार्य को सम्पन्न कराने के हेतु तुम्हारे पिता ने मेरे घर अनेक बार चक्कर लगाए थे। उन्होने धर्म, जाति और इन्सानियत की दुहाई देकर मेरे पिता को इस बात के लिए सहमत किया कि मै तुम्हारे रास्ते से हट जाऊँ। सो, मै तुम्हारे सामने से दूर हो गई, जयन्त बाबू ! मैने अपने कल्पनालोक मे सोने की दुनिया बनाई थी, वह टूट गई, ध्वस्त हो गई।" यह कहते हुए अजना

तभी उदास भाव से, जैसे पीडित स्वर से अजना ने कहा, "तो अब क्या है, बोलो ?"

जयन्त बोला, "नही, मै अब भी तुम्हारा हूँ । मै माता-पिता और समाज के विरुद्ध चल सकता हूँ । बोलो, तुम क्या कहती हो ?"

तत्काल अजना ने अपना सिर जयन्त के पैरो मे रख दिया और कहा, "शरीर से नही, मै आत्मा और मन से तुम्हारी हूँ, जयन्त बाबू । बोलो, तुम रहोगे न, ऐसे !"

जयन्त मौन रहा । वह फिर आसमान की ओर देखने लगा ।

अजना सीधी बैठ गई और बोली, "मेरा विवाह तो हो चुका, जयन्त जी ! मैने उस भावना को वरण कर लिया कि जिसे तुमने प्रदान किया था ।"

एकाएक जयन्त के मुँह से निकला, "ओह ! सभी कुछ अनोखा है, निर्मम है ।" उसने कहा, "अजनादेवी, तुम्हे बता नही सकता कि अब मेरा जीवन बदल जाएगा । निश्चय ही, स्वस्थ और सुखी नही रहेगा । जब जीवन के इस उठते प्रहर मे भावना मर गई तो भला आगे क्या मिलेगा । पैसा तो मुझे सुख नही दे सकेगा ।"

अजना के मुँह से निकल पडा, "जीवन की भावना   जीवन का सघर्ष " वह बोली, "इस जीवन मे शान्ति कहाँ है जयन्त बाबू ! सच्ची अनुभूति कहाँ है !"

इतना सुनते ही जयन्त ने बरबस ही अजना का हाथ पकड लिया और वह उसे ऊपर उठाता हुआ बोला, "नही नही, इन सभी का अस्तित्व है, अजनादेवी ! मैने प्रोफेसर के सम्पर्क मे रहकर यही समझा है । भावना न हो, ईश्वर का चिन्तन न हो, तो क्या यह जगत जीवित रह सकता है ? कदापि नही !"

उल्लास से भरकर अजना बोली, "सचमुच ! हाँ, मै समझी, तुम तो ईश्वरवादी हो न ! उस ईश्वर का वर्णन मैने भी अनेक बार तुमसे सुना, तो आज समझ सकती हूँ कि कोई आधार तो है कि जिस पर यह जगत टिका है । सच, उसी का सहारा लिये-लिये मै भी तुम्हारे तक पहुँचूँ, ऐसी धारणा क्या तिरोहित कर पाऊँगी इस जीवन मे, कभी नही !"

जयन्त ने कहा, "अजना, सयोग की बात थी कि हम-तुम मिले। वह जोर से बोल पडा, "पर आज यो छूटने वाले है, क्या यह भी नियति का रहस्यभरा और क्रूर व्यापार नही है? प्रोफेसर ने पहले ही मुझसे कहा था कि मै दुर्बल हूँ, तिनके के समान जीवन की धारा मे बहा जा रहा हूँ। भला देखो तो मै कैसा अस्तित्वहीन हूँ, कितना निर्बल हूँ, कितना एकाकी हूँ।"

यो सुनते ही अजना ने अपना मुँह जयन्त की छाती पर रख दिया और कहा, "आह, तुम मेरे हो!" वह बोली, "जयन्तजी, भूलो मत मै सदा तुम्हारी रहूँगी।"

जयन्त उस अवस्था मे ही अजना के ठण्डे चेहरे पर अपने गरम हाथ की हथेली फेरने लगा। वह स्वय उस चेहरे की ओर झुक गया और अपनी गरम साँसे उस अजना की साँसो पर मिलाता हुआ बोला, "अजना, तुम मेरी हो।"

उसी समय पास से एक जानवर निकला, तो चौककर अजना ने कहा, "अब उठना चाहिए।"

दोनो उठ पडे। जयन्त ने कहा, "आओ, मै तुम्हे छोड आऊँ। अन्धेरा रास्ता है, रात बढ गई है।"

अजना ने कहा, "जिसके जीवन मे अन्धेरा हो उसके लिए यह अन्धेरा पथ क्या है, यह निर्मम बनी हुई काली रात क्या है?"

लेकिन जयन्त इस बात पर मौन ही रहा वह अजना का हाथ पकडे हुए उस काले पथ पर बढता गया।

सोलह

नगर मे ही अजना को समाचार मिला कि जयन्त का विवाह बडी धूमधाम से सम्पन्न हो गया है। उसी अवसर पर अजना ने भी बधाई का

सन्देश भेज दिया। यह सयोग और दुर्विपाक की अवस्था थी कि उन दिनो अजना की दृष्टि मे जयन्त का विवाह ऐसा विषय नही था कि जिस पर वह अपना ध्यान केन्द्रित करती। बरबस ही, जैसे अज्ञात भाव से, उस अवसर पर अजना के चिन्तन का विषय बन गया था वह कैप्टन कि जो फौजी विभाग मे उच्च पद पाकर भी सन्तुष्ट नही था। वह मन से पीडित था। उसे कोई विक्षिप्त तो कह नही सकता था, परन्तु उसका व्यवहार निस्सन्देह रहस्यपूर्ण था। वह ज्यो-ज्यो अजना के निकट आता गया त्यो-त्यो उसकी दृष्टि मे निखरता गया, साफ दिखाई देता गया। अजना ने यह पूर्णरूप मे समझ लिया था कि वह कैप्टन जितना ऊपर से उग्र और भयानक दिखाई देता, उसका हृदय उतना ही निर्मल और शान्त था। कैप्टेन बार-बार अजना के घर आता और लौट जाता। रमाकान्त नाम का व्यक्ति उस अजना के समक्ष आकर जैसे निरा बच्चा बन जाता। उसमे मचलता और लडना चाहता। कभी शराब अधिक पी आता। जिस दिन नशे की अवस्था मे अजना के पास आता तो रोता और सिर पीटता। वह अजना को सुनाता, "मै अभागा हूँ, निराश्रित हूं। तूने मुझे अस्पताल के बिस्तर पर जीवन-दान दिया है तो आगे भी मेरा यह अन्धकार से परिपूर्ण जीवन उजागर कर मुझे अभयदान प्रदान कर।'

ऐसी अवस्था मे, कभी-कभी अजना झुँझलाती और कह देती, "तुम यहाँ न आओ।" वह धमकियाँ भी देती और कहती, "मै पुलिस मे रिपोर्ट करूँगी, तुम्हे गिरफ्तार करा दूँगी। तुम्हारे विभाग को लिख दूँगी।"

वस्तुत एक बार जब ऐसी ही अवस्था आई ता अजना की बात सुनकर वह कैप्टेन इतना व्यग्र और आतुर बन गया कि उसने तुरन्त अपना पिस्तौल निकाल लिया और उसका घोडा दबाकर सामने दीवार पर दनदन कई गोलियाँ चलाता हुआ बोला, "जानती हो, ऐसे धडाके मे मेरा अन्त हो जाएगा। इसी घर से मेरा जनाजा उठेगा।"

उस अवसर पर कैप्टेन को नशे मे देख, अजना ने साहस किया और उसका पिस्तौल छीन लिया। उसने चीखकर झुझलाते हुए कहा, "तुम्हे क्या हो गया है, कैप्टेन! तुमने क्यो मेरा घर घेरा है। मुझे मूर्ख बना दिया है।"

माथे पर भरे पसीने की ओर ध्यान न कर कैप्टेन ने कहा, "मै पागल हो गया हूँ। इस हरे-भरे ससार मे मै अकेला हूँ। जन्म-जन्म का दुर्भागी हूँ।" यह कहते हुए वह तभी एक बच्चे के समान फूट-फूटकर रो पडा, उसी अवस्था मे उसने कुर्सी के पीछे अपना सिर गिरा दिया।

यह देख, बरबस ही, आतुर भाव से अजना बोली, "तो मुझसे क्या कहना है? तुम्हारी माँग क्या है?"

एक बच्चे के समान गिडगिडाते हुए कैप्टेन ने कहा, "तुम कह दो एक बार कि मै तुम्हारे समक्ष उपेक्षा का पात्र नही, हूँ हाँ। अजना मै तुम्हारे इस सुन्दर और भावभरे मुख से सुनना चाहता हूँ, मैं तुम्हारी अनुभूति और सदाशयता की माँग करता हूँ। मैं अपने को जन्म-जन्म का दुर्भागी मानता हूँ न, यह भी नही जानता कि पुरुष के लिए एक नारी किस प्रकार समर्पित होती है, कैसा अनुराग उस पुरुष को प्रदान करती है।"

एकाएक चीखकर अजना ने कहा, "गुस्ताख कमीना"

कैप्टेन सुनकर मौन हो गया, जैसे ठण्डा पड गया हो। उसका मुँह भी पीला हो गया। किन्तु लगता यह था कि उस दिन अपने मन का उद्वेग उँडेल देना चाहता था। जो कुछ उसके मन मे था वह सब उस अजना को सुना देने के लिए सन्नद्ध था। अतएव वह फिर बोला, "अजनादेवी, न मै गुस्ताख हूँ, न कमीना। मै केवल एक दुर्बल प्राणी हूँ। कहा तो है मैंने कि मैं दुर्भागा हूँ। मैंने केवल माँ का प्यार पाया और किसी का नही। मुझे पैसे की इच्छा नही, यश की नही। यह भी चिन्ता नही कि मै मर जाऊँगा तो मेरा क्या होगा। मरूँगा तो सरकार फूंक देगी, पर अपनी यह चिर-अभिलाषा साथ लिये चला जाऊँगा कि जीवन मे एक क्षण के लिए भी नारी का अभिसार और प्यार अपने तई नही प्राप्त कर सका। यह न समझना कि मुझे नारियो की कमी है, ऐसी बहुत है कि जो पैसे के लिए अपना विसर्जन करती है। पर आज तुम्हे बताता हूँ, मैने नारी को ठगना पाप माना है। और यह भी जानता हूँ कि मुझ काले-कलूटे को तुम सरीखी सुन्दर युवती अपना प्यार नही दे सकती। यह तो असगति है। शायद मेरा कहना ही अविवेक से पूर्ण है। पर मैं क्या करूँ, मेरी आत्मा बार-बार चिल्लाती है और आन्दोलित कर तुम्हारे द्वार तक ले आती है। शायद मैं विवश बन

गया हूँ। अपने अन्तर्मन की वाणी के समक्ष झुक गया हूँ ।

"सैनिक बनकर मैने सैकडो व्यक्तियो का अन्त किया है। मरनेवालो का चीत्कार सुना है। लेकिन मेरी यह चचल अभिलाषा कभी पूर्ण होगी, यह जानने की जिज्ञासा है। देखता हूँ मै हिसक, मै क्रूर, मैं इन्सान के प्राणो को तिनके के समान तोड देने वाला सैनिक तुम्हारे समक्ष झुका हूँ। भिक्षुक बना हूँ। तुम्हारी दया, ममता और अभिसार की भीख माँगता हूँ। मैं तुमसे ही यह कहने मे सन्तोष मानता हूँ कि इस धरती पर अपना कहने वाला मेरा कोई नही। मरने के बाद नाम लेने वाला मेरा कोई नही। बोलो, कैसा तुच्छ, निन्द्य और अमानुषिक जीवन है, मेरा! निरा अभद्र! निरा पत्थर"

तभी एकाएक अजना के मुँह से निकला, "कैप्टेन, तुम जाओ। मै तुमसे घृणा करती हूँ।"

कैप्टेन ने कहा, "ओह, कठोर औरत! निरी नादान!" वह खडा हो गया। पिस्तौल जेब मे डाल लिया और सिर झुकाए, दोनो हाथ बाँधे वहाँ से चल दिया।

किन्तु अभी एक मिनट नही बीता था उस कैप्टेन को गये कि अजना का माथा ठनक गया। जैसे स्वत ही उसने अपने को अपराधी मान लिया। उसे लगा कि कैप्टेन परेशान है, रोया भी अधिक है। यह सोचते ही, अजना उठी और मकान बन्द कर सडक पर पहुँच गई। उसने देखा कि कैप्टेन जा रहा है, सिर झुकाए चला जा रहा है। यह देख, जाने किस प्रेरणा से भर, अजना उसके पीछे-पीछे चल पडी, चली तो चलती गई। कैप्टेन का दृष्टि-लक्ष्य शराब की दुकान था। वहाँ जाते ही उसने शराब माँगी और पैसे देकर जब सडक पर आया तो एकाएक पछाड खा गया और गिर गया। उसका सिर एक पत्थर से टकरा गया। वह बेसुध हो गया। दूर खडी अजना ने यह सब देखा। सडक पर आदमी जा रहे थे, मोटर और ताँगे भी दौड रहे थे। परन्तु उस कैप्टेन की ओर किसी का ध्यान नही था। मानो समाज से उसका कोई सम्बन्ध नही हो। उसी समय पुलिस की गाडी आई, सडक पर कैप्टेन पडा देखा तो उसे उठा ले गई। दूर खडी अंजना तब निरी मौन, मानो पत्थर बनी, वहाँ से चली गई और अपने घर पहुँच

गई। उस रात वह देर तक नहीं सो पाई। वह अपने कमरे मे देखती रही कि जितनी कीमती वस्तुएँ थी, वे सब कैप्टेन की दी हुई भेंटे थी, उन वस्तुओ मे एक प्रेमी-प्रेमिका की प्रतिमा थी, जो नितान्त सुन्दर और सुहावनी थी। उस प्रतिमा मे प्रेमी अपनी प्रेमिका के प्रति आकांक्षित था, कुछ माँग रहा था। जिस दिन वह प्रतिमा खरीद कर लाया तो उसे देते हुए उसने अजना से कहा था, "यही है मेरे जीवन की साध! तेरा कोई प्रेमी हो, पति हो तो मुझे बता दे, मै उसे भी प्यार करूँगा, यह भेंट दूंगा।"

लेकिन उस दिन तो अजना खिलखिलाकर हँस पड़ी थी, वह भोले कैप्टेन की बातो मे खो गई थी।

किन्तु तभी कैप्टेन ने फिर कहा था, "ऐ अजना, मै कोई इच्छा नही रखता। तू सुन्दर फूल है, मै सूँघकर इसे भ्रष्ट करना नही चाहता। तू ऐसी रहे, परम रहे, सुहावनी रहे। तू रानी बनी रहे, अजना।"

बात असल मे यह थी कि अजना धीरे-धीरे कैप्टेन से डरने लगी थी। उसके मजबूत हाथ कब उसकी मुलायम गर्दन पकड ले, ऐसी आशका भी उसके मन मे उठती थी। किन्तु तब भी, जब कैप्टेन आता तो वह उसका स्वागत करती, उससे हँसती-बोलती, उसके पास बैठती, मानो वह उसके मनोभावो के साथ खिलवाड करने लगी थी।

लेकिन उस रात मे जब कैप्टेन शराब के नशे मे चूर सडक पर गिर पडा, अजना के समक्ष बैठकर पिस्तौल की गोली छोड बैठा तो आधी रात के बाद तक जागती रहकर भी, उसके मन मे यह भाव नही आया कि अब यदि कैप्टेन उसके पास आये तो उसे बैठायेगी, उससे आत्मीयता का प्रदर्शन करेगी। उसने निश्चय कर लिया कि कैप्टेन के आने पर अब उसे पुलिस मे पकडवा देगी। फौजी अफसरो से शिकायत करेगी। यद्यपि मन मे आई इस उपेक्षा, घृणा और उस कैप्टेन के प्रति उदासीनता के समीप, अजना के अन्तर मे यह भी बात थी कि हाँ, यह कैप्टेन रमाकान्त सचमुच अभागा है, दीन है, वह सुगमता से रोता ही इसलिए है कि उसका मन घायल है, बीता युग याद करते ही तडप उठता है। अजना को इस बात का भी पता था कि कैप्टेन की माँ बडी खराब अवस्था मे मरी थी। कई

दिन की भूखी रहकर अपने प्राण तोड सकी थी। यह बात भी उस कैप्टेन को प्राय याद आती। माँ की याद उसे कभी भी रोने के लिए बाध्य करती थी। लेकिन उस रात, जिस प्रकार की तीव्र घृणा और प्रतिरोध की भावना अजना के मन मे उस कैप्टेन के लिए पैदा हुई, वह अधिक भारी थी, कषैली थी। उस अवस्था मे अजना रात मे देर तक नही सो सकी थी।

जब प्रात हुआ, अजना अपनी ड्यूटी पर गई, तो उससे अधिक सम्पर्क रखने वाली नीरा ने उसे टँकोरा और कहा, "सुना कुछ, रात तेरा वह कैप्टेन सडक पर पडा था, पुलिस ने उठाया था। शायद शराब के नशे मे था।"

अजना ने इस पर मौन रहना ही उचित समझा।

नीरा बोली, "अब यह बात दूसरो को भी मालूम है कि वह कैप्टेन तू ।"

अजना बोली, "नीरा, मै परेशान हूँ। भगवान से चाहती हूँ कि कैप्टेन मेरे पास न आया करे। मै उसे घृणा का पात्र मानती हूँ भूखा कुत्ता " अजना बोलती गई, "ऐसी अवस्था रही तो मै नौकरी छोड दूँगी, इस शहर को भी ।"

नीरा बोली, "यह कह न कि दुनिया भी छोड देगी। भोली भटियारिन, पहले तो मुँह लगा लिया, उस औरत के भूखे को। उससे मीठी-मीठी बाते की। अब वह जानवर की तरह से गन्ध पाता हुआ तेरे पात आता है, तो उसको दुतकारती है।"

अजना चीख उठी, "मैं उसे नर-पशु मानती हूँ, नीरा !"

किन्तु नीरा ने तब भी शान्त और धीरे स्वर मे कहा, "मै ऐसा नही मानती। तेरा मन इतना कठोर नही हो सकता, यह मै समझती हूँ। मेरे पास तो आये वह, ऐसा सबक दूँ बच्चू को कि छठी का दूध याद आ जाए। ये इश्क मिजाजी के तराने ।"

अजना बोली, "मैं कमजोर हूँ। स्वय परेशान हूँ।"

नीरा ने कहा, "नही, तू भावुक है। और यह नही जानती कि तुझ जैसी खूबसूरत लडकी यदि भावुक बनेगी तो ठगी जाएगी। एक जगह तो तू ठगी गई है। उस डाक्टर जयन्त से। अब और कहा-कहाँ की खाक

छानेगी। मै कहती हूँ, तू उस कैप्टेन से विवाह क्यो नही कर लेती। सच, आदमी असाधारण है। उसकी प्रतिष्ठा है। अभी आयु का भी अधिक नही है। बस, यही तो बात है कि सुन्दर नही, शहराती भी नही। तू उसकी बात मानेगी तो वह तुझे आँखो पर उठाये फिरेगा। हृदय की रानी बनायेगा।'

अजना ने क्षुब्ध बनकर कहा, "मै ऐसा नही चाहती। उससे विवाह नही कर सकती।"

"तो फिर उसे आने से रोक दे। हाथ जोड दे। वह कोई भेट लाए तो वह भी वापिस कर दे।"

अजना बोली, "कम्बख्त से बार-बार कहा है। द्वार बन्द रखा है। पर वह ऐसा जिद्दी है कि बस "

नीरा ने कहा, "वह फौज का आदमी है, कठोर है। जाने अपनी बन्दूक की गोली से कितने आदमी मार चुका है। लडना और मारना ही उसका काम है। देख, मै कहती हूँ कि किसी दिन ।"

अजना ने जैसे सहमकर कहा, "मुझे भी लगता है। वह तो अब मुझे अभिशाप दिखाई देता है जैसे मेरा काल ‥।"

नीरा बोली, "पर वह तुझे नही मारेगा। स्वय मर जाएगा।"

अंजना ने कहा, "वह पागल है, अन्धा है। वह औरत का भूखा है।"

एकाएक नीरा बोली, "न, न, वह औरत का भूखा नही। बस, औरत उसे प्यार करे, ऐसा चाहता है। मैने सुना है कि वह एकाकी है, अकेला है।"

अजना बोली, "तुम मेरा उद्धार करो, नीरा! नही तो अब मैने सोच लिया है कि पुलिस को बुलाऊँगी, और सब बाते उसके सामने रख दूँगी।"

नीरा वहाँ से जाती हुई बोली, "अच्छा-अच्छा, अब तेरे घर आए तो बताना, मुझे खबर देना। मै तब आ जाऊँगी और उससे बात करूँगी।"

अजना अपने काम मे लग गई। वह अपने वार्ड मे गयी और रोगियो की परिचर्या का कार्य सम्पादित करने लगी। किसी पीडित रोगी को जाकर समझाती, उसका मन बहलाती और किसी के कही दर्द होता तो उसे दूर करने का प्रयत्न करती। अजीब काम था वह रोगियो की सेवा-सुश्रूषा का

कि अजना को बैठने की भी फुरसत नही मिलती थी। किसी को दवा देती, किसी के कपडे बदलती। एक रोगी के पास जाकर खडी होती तो दूसरा आवाज देता। उस 'सिस्टर' को एक साथ अनेक स्थानो से बुलावा आता, किन्तु क्या मजाल कि वह सिस्टर बनी हुई अजना घबडाती हो, मरीज को झिडकती हो, उसकी ओर देखकर आँखे निकालती हो। वह सभी की ओर देखकर हँसती, मुस्कराती और दो मीठी बाते कर उस रोगी का मन बहलाने का प्रयत्न करती, मानो वह सिस्टरबनी अजना सभी की माँ थी, अपनी प्रत्येक सन्तान पर कृपा-दृष्टि रखनेवाली माँ!

उसी समय बडा डाक्टर आया और उस सिस्टर को देखा, पास आकर बोला, "सिस्टर, हमे प्रसन्नता है कि तुम्हारा काम सुन्दर है। प्रत्येक रोगी तुमसे सन्तुष्ट रहता है। तुम्हे यह जानकर हर्ष होगा कि तुम्हारी पद-वृद्धि हो गई, अब तुम्हे वेतन भी अधिक मिलेगा। निश्चय ही, तुम्हारा उत्तर-दायित्व भी बढ गया हे। देश की सरहद पर युद्ध हो रहा है न, तो घायल सैनिको को यहाँ लाया जाएगा। अब इस अस्पताल का काम बढ जाएगा। जब देश पर विपत्ति आई है तो सभी को कुछ-न-कुछ योग देना पडेगा।"

अजना ने कहा, "डाक्टरसाहब, मै इस कार्य के लिए प्रस्तुत हूँ।"

डाक्टर ने कहा, "धन्यवाद! इस वार्ड मे अब बाहर के मरीज नही आएँगे, सैनिक आएँगे, तुम्हारे ऊपर ही उनका गुरुभार रहेगा।"

"जैसा आपका आदेश!"

डाक्टर चला गया। वह दिन अजना का बीत गया। जब सध्या आई तो वह इस बात के लिए सन्नद्ध होकर घर गई कि यदि आज कैप्टेन आया तो वह अन्तिम निर्णय करेगी और उसे मकान मे घुसने से रोक देगी। किन्तु रात के दस बजे तक भी कैप्टेन नही आया, तब अजना ने समझा कि वह कैप्टेन बुरा मान गया है। वह समझ गया है कि अजना का घर उसका ठौर नही है। यह देख, उसे सन्तोष हुआ। उसने विचार किया, चलो, जो समस्या थी उसका अन्त हुआ।

किन्तु जिस बिस्तर पर अजना पडी थी उसके सामने ही वह प्रस्तर प्रतिमा खडी थी। वह प्रतिमा मानो मूक भाव से मुस्करा रही थी और अजना से कुछ कह देने मे समर्थ थी।

उसकी ओर देखते ही प्रजना ने कहा, "जब कैप्टेन का नशा उतरा होगा तो उसे पता चला होगा कि मैने उससे क्या कहा। किस प्रकार अपमानित किया।" एकाएक उसके मुँह से निकला, "बेचारा कैप्टेन।"

यो रात आई और चली गई। फिर दिन और सप्ताह! उधर सरहद पर युद्ध हो रहा था। कुछ विशिष्ट अफसर घायल अवस्था मे हवाई मार्ग से उस नगर मे भी लाए जा रहे थे। जब कैप्टेन कई सप्ताह तक नही दिखाई दिया तो अजना के मन मे दो विकल्प आये कि या तो वह फौज मे लडाई पर गया है अन्यथा मुझसे मुँह फेरकर बैठ गया है। यो अजना को दोनो अवस्थाओ से सन्तोष था। उसे सुख था कि चलो, उसकी मुसीबत का फन्दा कट गया।

लेकिन उसदिन, जब कुछ घायल सैनिक उस अस्पताल के वार्ड मे आये तो एक सैनिक को देख, अजना एकाएक चीख उठी, "ओ कैप्टेन!"

उसी समय सर्जन वहाँ आया और अजना को सकेत करके बोला, "यह फौज का कैप्टेन है। हमे खास सदेश मिला है कि इसने देश का सम्मान ऊँचा किया है।"

अजना ने जैसे बरबस ही अपना थूक सटक लिया और कहा, "जी!"

सर्जन बोला, "इसकी देखभाल तुम्हे करनी होगी, सिस्टर! इसके प्राण अमूल्य है। अभी देश को इस बहादुर और दूरदर्शी अफसर की आवश्यकता है।"

फिर भी, कठिनाई से अजना ने कहा, "जैसा आपका आदेश!"

सर्जन चला गया। वह कैप्टेन की ओर बडी और ठीक उसके मुँह के पास अपनी गरम साँसे ले जाती हुई बोली, "आह, कैप्टेन।"

कैप्टेन बेहोश था। उसके शरीर मे कई स्थानो पर गोली के घाव थे। पट्टी बँधी थी। अतएव वह मौन था। किन्तु अजना की आँखो मे जो आँसू एकाएक छलछला आये, वे उस कैप्टेन के मुँह पर टपक पडे।

उसी समय नीरा वहाँ आई। वह उस कैप्टेन को देख, बलात् आहत हुए स्वर मे बोली, "ये आँसू छुपा ले, अजना! सच, तूने अच्छा नही किया। यह बहादुर और देश सेवक कैप्टेन ·।"

अजना ने आर्द्र बनकर कहा, "अब यह नही बचेगा।"

नीरा बोली, "यह सोचने का काम तुम्हारा नही, भगवान का है। यदि इसका जीवन शेष होगा तो यह बचेगा। अभी इस धरती पर रहेगा।" कहते हुए नीरा चल पडी। वह अपने वार्ड की ओर बढ गई।

उसी समय कैप्टेन कराह उठा। उसने क्षीण स्वर मे कहा, "पा नी "

सुनते ही अजना ने चम्मच से उसके मुँह मे पानी डाल दिया।

किन्तु जब भरी रात आई, चारो ओर सन्नाटा छाया तो उसी निस्तब्धता मे कैप्टेन के मुँह से निकला, "अ ज ना "

एकाएक जैसे छाती पर घूँसा-सा खाकर अजना उसकी ओर बढ गई और ठीक उसके मुँह के समीप जाकर बोली, "कैप्टेन मै यहा हूँ, अजना! बोलो, क्या चाहिए। क्या दूध दूँ?"

क्षीण स्वर मे कैप्टेन के मुँह से निकला, "नही, तुम!"

मानो अज्ञात भाव मे, अजना चीख पडी। वह रोती हुई बोली, "म तुम्हारी हूँ, कैप्टेन! सच, तुम्हारी!"

कैप्टेन की आँखो पर पट्टी बँधी थी, वह देख नही सकता था। परन्तु उसने अजना का हाथ कसकर पकड लिया और उसे अपनी छाती पर रख लिया। वह उसी अवस्था मे जैसे एकाएक आल्हादित बनकर बोला, "अजना, मेरे इस अन्तिम समय पर तुम मिली, यह अच्छा हुआ। भगवान तुम्हारा भला करे!"

उसी रात मे कैप्टेन रमाकान्त का देहावसान हो गया।

सत्रह

निश्चय ही, मरने से पूर्व, कैप्टेन रमाकान्त को इस बात का आभास मिल चुका था कि वह नही रहेगा। रात का समय था। अस्पताल मे चारो ओर सन्नाटा था। कैप्टेन की सरक्षिका नर्स अजना कुछ समय के लिए अवकाश पाकर आराम करने गई थी। वह दो रात से निरन्तर जाग रही

थी। कैप्टेन उसे अपने पास रहने के लिए बाध्य करता था। वह जिस भाव-भरी याचना से अजना को अपने पास बैठने के लिए कहता, उसे टाल देना सरल नही था। किन्तु उस समय, जब अजना वहाँ नही थी तो फौज के कुछ अफसरो के साथ, एक मजिस्ट्रेट वहाँ आया। अस्पताल का सर्जन भी आया। उन्होने वहाँ बैठकर कुछ लिखा, कैप्टेन रमाकान्त के हस्ताक्षर लिये। जब वे सभी व्यक्ति वहाँ से लौटे, तो तभी, अजना ने उस कमरे मे प्रवेश किया। उसी समय बडा डाक्टर मुस्कराया और बोला, "सिस्टर, तुम्हारा रोगी अधीर है, उसे तुम्हारी सेवा की आवश्यकता है। रोगी की अवस्था अच्छी नही है। स्वाँस की गति भी खराब है।"

अजना ने कहा, "डाक्टरसाहब, यह कैप्टेन नही बचेगा।"

डाक्टर ने तब फिर अजना की ओर देखा। जैसे उस प्रौढ व्यक्ति ने उस युवा नर्स के मुँह पर कुछ खोजना चाहा। किन्तु उसने अपनी बात लेकर कहा, "अच्छा होता, यह कैप्टेन रहता अभी कुछ और ।" और डाक्टर पैर बढाकर दूसरी ओर चला गया।

वहाँ से अजना कैप्टेन की चारपाई के समीप पहुँच गई। उसने देखा कि कैप्टेन मौन है, आँखे बन्द है। तभी उसके मुँह के पास आकर अजना से कहा, "कैप्टेन, पानी दूँ।"

आवाज सुनकर कैप्टेन ने आँखे खोल दी। उसकी वे दुर्बल आँखे अजना के मुँह पर टिक गई। जैसे सचमुच ही उन आँखो मे याचना थी, जीवन की समस्त भावना थी, जिसे देख वह चचल और युवा सिस्टर एकाएक लजा गई। उसकी आँखे झुक गई, उसे लगा कि निश्चय ही यह कैप्टेन चल बसेगा, अब नही रहेगा और अपने जीवन मे वह अब तक जिस अभाव से भरा रहा, जिसके कारण मूर्त्त और मौन बना रहा, वही तो अब भी इस कैप्टेन की आँखो मे है, मन मे है, वाणी मे है। और वह है, प्रेम नारी का प्रेम ।

अजना सीधी खडी हो गई। वह कमरे के बाहर दूर काले अन्तरिक्ष की ओर देखने लगी। उस समय प्रात की ठडी हवा आने लगी थी। वह शीतल पवन अजना से भी टकरा रहा था। उसके शरीर मे फुरहरी पैदा कर रहा था। उस गरम मौसम मे भी जैसे अजना को जाडा लगने लगा

था। निश्चय ही, उसका मन उस समय समस्त संसार की ओर से छूट, उस कैप्टेन के समीप पहुँच गया था कि जो किसी भी क्षण अपने शरीर से सम्बन्ध तोड देने के लिए तत्पर था। अजना के मन मे बार-बार यह बात आती कि हाय! यह बेचारा कैप्टेन जिन्दगी भर लडा। देश के लिए मरने और मारने के लिए सदा ही तत्पर रहा, परन्तु इस बेचारे ने क्य पाया! यह जीवन मे किसी को भी अपना आत्मीय नही बना सका। किसी एक नारी का प्रेम पाने मे भी सफल नही बन सका।

उसी समय, क्षीण स्वर मे कैप्टेन ने पुकारा, "अजना "

चचल बनकर अजना उस ओर बढ गई। वह कैप्टेन की सासो पर अपनी गरम साँसे टिकाकर बोली, "मै यहाँ हूँ कैप्टेन।"

कैप्टेन ने कहा, "थोडा पानी!"

"हाँ, हाँ, पानी लो, बहादुर कैप्टेन!" और उसने चम्मच से पानी उसके मुह मे डाल दिया।

तभी कैप्टेन ने फिर कहा, "मेरी कोई अशिष्टता हो तो उसे भूल जाना, अजना! मैने तुमसे बहुत कुछ कहा। तुमसे भी सुना।"

सुनते ही, घायल पछी की तरह तडपकर, अजना ने कहा, "नही, नही, तुमने कोई अशिष्टता नही की, रमाबाबू! बोलो, तुम क्या चाहते हो! क्या मन मे लिये हो! मुझसे कहो। तुम मेरा प्रेम चाहते हो न, अब वही पाओ। मेरा समर्पण स्वीकार करो।" यह सुनकर कैप्टेन की आँखें अजना की आँखो पर टिक गई।

किन्तु अजना बोली, "मै तुम्हारी भावना समझ चुकी हूँ। तुम्हारे मन की बात मै समझ गई हूँ। मै तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत हूँ, रमाबाबू! सच, मैं तुम्हारी "

लेकिन इतना सुनकर भी कैप्टेन बोल नही सका। उसने फिर आँखे बन्द कर ली। यह देख, अजना ने उसका हाथ अपने मुलायम हाथों मे पकड लिया और उस कठोर हाथ को अपने गालो पर रखते हुए कहा, "कैप्टेनबाबू, इस दुनिया मे सभी कुछ लेते है, कुछ देते है। देखती हूँ, तुमने अपने जीवन मे दिया बहुत कुछ, पर लिया कुछ नही। तुम्हे अवसर नही मिला। ऐसा सुयोग नही मिला।"

यह सुन कैप्टेन ने फिर आँखे खोली। उसकी साँस भी तीव्र हो चली थी। लगता था कि वह बोलना चाहता है पर बोल नही पा रहा था। वह अशक्त और निरुपाय बना था।

यह देख, एकाएक अजना ने अधीर बनकर कहा, "कैप्टेन "

कैप्टेन फुसफुसाया, "अजना, तू तू "

अजना ने अपना मुँह उसकी छाती पर रख दिया और एकाएक आवेगपूर्ण बनकर कहा, "कैप्टेन, मैं तुम्हारी हूँ। मुझे अवसर दो! मेरी याचना स्वीकार करो।"

उसी समय वहाँ पर नीरा आई। देखकर उसने कहा, "अजना, रोती हो! अब हटो, जल्दी करो यह कैप्टेन "

और सचमुच नीरा के साथ उस विह्वल बनी अजना ने देखा कि कैप्टेन हिचकी ले रहा है। उसकी अन्तिम साँस बाहर आई और तिरोहित हो गई। उसी समय नीरा ने कैप्टेन का मुँह ढँक दिया।

प्रात हुआ और कैप्टेन रमाकान्त के शव का सैनिक सम्मान के साथ दाह-सस्कार कर दिया गया। तभी जलती हुई चिता के समक्ष फौज का बडा अफसर अजना के समीप आया और एक लिफाफा अजना को सौपता हुआ बोला, "हमे नही मालूम था कि आप दोनो का सम्बन्ध कब स्थापित हुआ, परन्तु स्वर्गीय कैप्टेन ने अन्तिम समय पर अपनी वसीयत लिखाई और अपनी सम्पदा का उत्तराधिकारी आपको बनाया है। इसे ग्रहण करे।"

पास खडे हुए अस्पताल के सर्जन ने कहा, "कुमारी अजना ने बीमार कैप्टेन की बहुत सेवा की।"

अफसर ने कहा, "हमारे कैप्टेन ने भी यथोचित पुरस्कार दिया। समस्त धन सौप दिया।" वह लौट पडा।

यो, वह दिन भी अन्य दिनो के समान आया और चला गया। परन्तु मानो अजना के लिए वही विशिष्ट दिन था। सुखपूर्ण भी और खेदपूर्ण भी। जो कैप्टेन अपना सभी कुछ सौप गया, अजना अब उसी कैप्टेन को पाना चाहती थी। वह मिल जाए तो उसके चरणो मे लोट जाने के लिए प्रस्तुत थी। परन्तु उसका दुःख यह था कि वह कैप्टेन जहाँ चला गया, अब

वहाँ से नही लौट सकता था। कैसा अजीब आदमी था वह। एक दिन पहले की रात मे ही उसने अजना से कहा था, "अजना, अगर मै जीवित रहा तो अपने हाथो से तेरा भी श्रृगार करूँगा और तेरे दूल्हे का भी ! तेरी बारात चढे, तू दुल्हन बने तो इतना मै भी देखना चाहूँगा।"

तब, जैसे खोई-खोई-सी बनकर ही अजना ने कैप्टेन से कहा, "तो तुम्हे क्या मिलेगा ?" अपने हृदय की समूची सत्यवाणी मे उँडेलकर उस कैप्टेन ने कहा था, "मेरा यह सबसे बडा सुख होगा। मै तुझे प्यार करता हूँ न, तो तुझे सजी हुई दुल्हिन बनी देखना मुझे सबसे प्रिय लगेगा। मुझे तेरा दूल्हा भी ऐसा लगेगा कि जैसे मेरा प्राण हो, मेरी आत्मा का प्रतिरूप।" उस समय अजना हँस नही सकी थी, रोई भी नही। वह पत्थर के समान कठोर बन गई थी। जब बहुत देर बाद उसकी साथिन नीरा उस ओर आई तो वह देखकर चकित थी कि अजना अपने बीमार कैप्टेन के पास बैठी नीचे को सिर झुकाये अविरल भाव से रोये जा रही है। जिसे देखते ही वह नीरा बोली, "सच, तू निरी भावुक है, निरी भोली है।" उसने कथन जारी रखा, "री, अजना, बीमार के पास बैठकर रोते नही, उसका मन बहलाते है। हम नर्सों का काम ही यह है कि घायल और पीडित को सात्वना देती है। हम मुस्कराती है, हँसती है, बीमार का मन बहलाती है। पर तू मूर्ख कही की !" किन्तु उस अवस्था मे ही अजना ने कह दिया था, "नीरा मै ऐसे तो पागल हो जाऊँगी। इस बीमार कैप्टेन की सेवा तो क्या करूँगी, शायद अपना ही अत करूँगी।"

"छि., पगली कही की।" नीरा ने कहा, "इस जिन्दगी मे बहुत-सी हवाएँ आती है और निकल जाती है। उन्ही मे तो एक यह कैप्टेन है, हाँ, अजना, भूल मत कि तू नर्स का काम करती है, अपने बीमार की सेवा करके स्वय रोगी बन जाना क्या तेरे लिए शोभनीय है ? जानती तो है शरीर के रोग का इलाज हो सकता है पर मन के रोगी का नही। यह असाध्य बीमारी है।"

और अब नही रह गया है वह कैप्टेन। परन्तु उसका पचास हजार से अधिक रुपया है, जो अजना को मिल जाने वाला है। उसका मकान है, जमीन है। इस प्रकार वह मरा हुआ कैप्टेन और अधिक अजना के लिए समस्यात्मक

बन गया है। उसे अनुप्राणित कर गया है। इसीलिए वह मरा हुआ कैप्टेन उसे याद आता है। वह रात-दिन उसके आगे-पीछे रहता है।

अजना मालदार बन गई है। उसको अब पत्र आने लगे है। जयन्त का भी पत्र आया, जिसमे उसने लिखा कि अब अजना सम्पन्न है, समाज का विशिष्ट अग है। किन्तु अजना को इस प्रकार के पत्र, किसी की वाणी सहन नही थी। वह ऐसी अन्धी थी कि जिसके आघातो से बचना उसके लिए सरल नही था। वह दुर्बल थी, कोमल थी, वह बार-बार चाहती कि कैप्टेन आये और अपना अधिकार वापस ले जाए। किन्तु स्वय उसकी अवस्था यह थी कि अपनी साथिनो की धारणा के विपरीत न उसने नौकरी छोडी, न अपने दैनिक जीवन के रहन-सहन मे कोई बढोतरी की। अपितु इसके विपरीत यह हुआ कि अजना अब बहुत कम साथिनो से मिलती। उसने अपना रहन-सहन भी बदल दिया। अपनी आवश्यकताओ को कम कर दिया। वह कैप्टेनरूपी पछी उसके पास से उडकर क्या गया, उसके सभी अरमानो को छितरा गया।

तभी एक दिन अजना के पास गॉव का मलखान आ गया और उसके साथ प्रोफेसर अतुल। प्रोफेसर अब वृद्ध हो गया था। उसने आते ही कहा, "बेटी, तुझसे मिलने की इच्छा थी। जयन्त से मिलने गया, वहॉ से यहॉ चला आया।"

अजना ने कहा, "मुझे आपकी आवश्यकता थी। मैं जयन्त बाबू को लिखने वाली थी।"

मलखान बोला, "प्रोफेसर तुमसे मिलने के उत्सुक थे। तुम्हे पता नही, गाँव इनका ऋणी है। उस सुखदास को जानती हो न, जिसके पास कोई जाता नही था, वही सुखदास इन प्रोफेसर की कृपा से ठीक हो चला है। अब वह गाँव मे आता-जाता है। गॉव का कोई घर ऐसा नही कि जहॉ प्रोफेसरबाबू का आना-जाना न हो।"

प्रोफेसर अतुल ने पूछा, "यह बताओ कभी जयन्त आया ?"

अजना ने कहा. "जी नही, कुछ समय पूर्व एक पत्र आया था।"

प्रोफसर बोला, "जयन्त का जीवन बदल गया है। वह जीती हुई बाजी हार गया है। तुम देखो तो समझो कि वह कहॉ से चला था और कहॉ पहुँच

गया है। वह मेरे शिष्यो मे योग्यतम था, पर उसका तो ऐसा पतन हुआ कि समझ ही नही आता।"

मलखान बोला, "अजनाजी, जयन्तबाबू ने रुपया तो उपार्जित किया, परन्तु जीवन का सुख उस दॉव पर लगा दिया। पत्नी ऐसी मिली कि उसने उनके घर का सभी वातावरण बदल डाला। बडे घर की बेटी, पढी-लिखी, जो अपने हाथ से न चक्की पीसती है, न वर्तन मॉजती है, न रसोई बनाती है, बहूजी के आते ही उस घर मे कई-कई नौकरो का बसेरा हो गया है। आमदनी बढी, तो खर्च भी बढ गया। गॉव मे भले ही किसी को सवारी के लिए गधा भी मयस्सर न हो, परन्तु डाक्टर जयन्त के पास मोटर है, घोडागाडी है।"

हँसकर अजना ने कहा, "अच्छा तो है। ठाठ है, जयन्तबाबू के।"

मलखान बोला, "नही नही, अजना बहिन! जो जयन्त कभी मुफ्त मे इलाज करता था, वह अब मुफ्त मे बात भी नही कर सकता। उसे अधिक पैसा चाहिए, वह इन्सानियत को छोडकर पैसे का भूखा बन गया है। कोई कह सकता है कि जयन्त कभी कुछ और था?"

प्रोफेसर अतुल उस समय गम्भीर था, निरा ठोस। वह तभी अपने हाथ की मुट्ठी बॉधकर बोला, "अफसोस होता है उस जयन्त को देखकर! बडा निर्मल, बडा साफ था कभी। मैं अब भी उसे बदलना चाहता हूँ। उससे ममता रखता हूँ। मैं क्या पहलेवाले जयन्त को भूल सकता हूँ।"

मलखान बोला, "जी, अब पानी सिर से उतर चुका है।"

प्रोफेसर ने कहा, "मै नही मानता। आदमी मे सत्य हो तो वह कभी भी देखा जा सकता है।"

अजना ने कहा, "मेरी परीक्षा का यह अन्तिम वर्ष है। मैने सरकार को किसी स्थान पर एक अस्पताल खोलने के लिए लिखा है। मुझे मृत कैप्टेन का पचास हजार रुपया मिलने वाला है तो उसी का सदुपयोग करना मैने सोचा है। यही मैने सरकार मे निवेदन किया है। मृत कैप्टेन के नाम पर ही वह अस्पताल चलेगा।"

एकाएक हर्षित होकर प्रोफेसर ने कहा, "शाबाश बेटी।"

मलखान बोला, "तुम्हारा विवाह कब हुआ था, उस कैप्टेन से?"

अजना ने कहा, "वह कभी नही हुआ। परन्तु अब मै मृत कैप्टेन की पत्नी हूँ, उसीके नाम पर वैधव्यता स्वीकार कर चुकी हूँ। मेरे जीवन का उत्थान और पतन साथ-साथ हुआ है।"

सुनकर मलखान मौन रह गया। बोल नही पाया।

अजना बोली, "मेरा ध्येय निश्चित है। मुझे जन-सेवा का कार्य करना है। मै इस बात को नही भूल सकती कि इसकी प्रेरणा जयन्तबाबू ने दी है। परन्तु अब वह यो उलझ चुके है इसका मुझे पता नही था। वैसे गृहस्थी बनकर यही सब होना था।"

प्रोफेसर ने कहा, "बेटी, आदमी स्वयं परेशानी खरीदता है। अन्धकार मे जाता है। जब जीवन की माँग अधिक बढ जाती है तो मनुष्य असयत बन जाता है।"

उसी समय नीरा वहाँ आ गई। अजना ने उसको प्रोफेसर का परिचय दिया। नीरा ने मलखान को देखकर कहा, "इन्हे तुम्हारे गाँव मे देखा था।" उसी समय उसने प्रोफेसर और मलखान को बताया, "यह अजना सन्यास लेना चाहती है। वह कैप्टेन क्या मरा, इसका रूप बदल गया। वह जैसे इस अजना को भी मार गया। सब लोग देखते है अब यह अजना नीचे जमीन पर सोती है, कम्बल बिछाती है। सादा भोजन और सादा पहनावा पसन्द करती है। यह तो अब भरी जवानी मे योग साधना करने चली है।"

प्रोफेसर अतुल ने कहा, "बिटिया, तुम्हारी बात सत्य हो तो यही श्रेयस्कर है। इस अजना के लिए शुभ है।"

अजना ने कहा, "प्रोफेसर साहब, आप कुछ समय रहिए। मुझे सेवा का अवसर दीजिये।"

प्रोफेसर हँस दिया, "मैं सेवा कराता नही, करता हूँ। मेरी कोई आवश्यकता नही है।"

मलखान ने कहा, "प्रोफेसर साहब कही भोजन नही करते। अपना भोजन भी साथ रखते है। सूखे फल खाते है।"

प्रोफेसर ने कहा, "मैंने बहुत भोजन किया। अब कहाँ तक इस पेट को भरूँगा। इच्छाएँ असीमित है। वे सभी कष्टदायक है।"

नीरा ने कहा, "प्राफेसर साहब, आपका नाम सुना था, आज आपके

शुभ दर्शन किये। बताइये तो जीवन की इच्छा को मारना क्या सगत हे ? फिर इस विश्व का निर्माण कैसे हो सकता है। ऐसी अवस्था मे इस भौतिक पदार्थों का क्या होगा ? जो धरती का तत्व है, वह उसी मे दबा पडा रहेगा। मनुष्य काहिल और सुस्त बन जाएगा।"

नीरा की बात सुनकर प्रोफेसर मुस्कराया, और बोला, "यदि ऐसा हो तो सुखकर रहेगा। मनुष्य शान्त और स्थितप्रज्ञ बनेगा। धरती पर स्वर्ग आ जाएगा।" उसने कहा, "बेटी, ये निर्माण कार्य सभ्यता का विस्तार करने के लिए है, इन्सान को अधिक गुलझटदार बनाने के लिए है। तभी आदमी दास बनता है। बोलो, तुम सौ रुपये मासिक की अपेक्षा पाँच सौ पाने लगो तो क्या करोगी ? तुम और अधिक भौतिक पदार्थों का क्रय-विक्रय करोगी। अभाव तुम्हारा तब भी रहेगा जिसकी कोई सीमा नही। आत्म-कल्याण और समाज-कल्याण का कोई भाव तुम्हारे मन मे नही आएगा। देर से यह इन्सान गन्दा पानी उलीचता आया है, उसी मे तुम्हारा भी भाग होगा। इस निर्माणो की भीड मे आदमी खो गया है, आत्महीन बन गया हे। सजा हुआ इन्सान खोखला और नर-पशु के अतिरिक्त और कुछ नही रह गया। तुम बढिया खाओ, बढिया पहिनो, बढिया मकान मे रहो, तो इससे समाज को क्या मिला ! तुमने क्या दिया ! तुमने तो बढियापन को पाने के लिए चोर और डाकू का रूप अगीकार किया। यही कारखानेदार करता है, यही वकील और यही डाक्टर करता है ! जो समाज का गुरु हे, अध्यापक है, वह भी इसी मनोवृत्ति का परिचायक बन गया है। अब तो जन-सेवा का भाव नही दिखाई देता। इन्सान सग्रह करने की मनोवृत्ति को अपना रहा है। वह मूर्ख स्वय अपनी आत्मा का हनन कर रहा है।" इतना कहते हुए प्रोफेसर रुक गया। उसका पीला और दुर्बल चेहरा लाल पड गया। मन का रोष उसकी वाणी मे फूट आया और वह चेहरे पर भी उतर आया। तभी प्रोफेसर फिर बोला, "ये ऊँचे-ऊँचे महल, ये भव्य नगर ऊपर से भले ही प्रगति और नव-युग के प्रतीक हो, परन्तु इनके अन्तकाल मे जो कुछ है, वह भयानक है, वीभत्स है, सडाँद से भरा है। लगता है कि यहाँ का प्रत्येक व्यक्ति सर्प के समान फूत्कार कर रहा है। मनुष्य ही मनुष्य का वध करता दिखाई देता है।"

नीरा ने साँस भरी और कहा, "प्रोफेसर साहब, आपका कहना तो सत्य है, परन्तु इस तेज प्रवाह मे बहता हुआ मनुष्य क्या सहज मे रुक सकता है? कामना और इच्छा से क्या मुँह मोडना सरल होता है ?"

प्रोफेसर ने कहा, "यह ठीक है कि मनुष्य नही रुक सकता। वह बहेगा। ऐसे तूफान मे उडकर मरेगा। अपनी कब्र स्वय ही खोद लेगा।"

उसी समय अजना गिलासो मे दूध ले आई, साथ मे कुछ मीठा था। उसने गिलास दोनो को थमा दिए।

प्रोफेसर ने कहा, "आज का इन्सान पैसे का दास बन गया है। पैसा है तो जीवन है, रोटी है, कपडा है, सिर छिपाने को घर है। बोलो, यह कैसी विवशता है। यह सरमायेदारो का षड्यन्त्र है। कुछ व्यक्तियो का पाप है!"

आतुर बनकर नीरा ने कहा, "जी।"

प्रोफेसर ने दूध पी लिया। उसने मिठाई का एक टुकडा भी मुँह मे डाल लिया। वह अजना को देखकर बोला, "बेटी, तुम चाहो तो मेरे साथ चलो। कुछ पहाडी गाँवो मे घूमो। तुम्हारा जो सकल्प है उसे और कोई प्रोत्साहन दे या नही, परन्तु मै हृदय से सराहूँगा। तुम्हारे कार्य मे मै भी योग दूँगा। मेरे पास जितना रुपया है वह भेट कर दूँगा।"

चतुर नीरा ने कहा, "आपके पास भी रुपया है!"

प्रोफेसर मुस्कराया, "हाँ, बेटी! मेरे पास रुपया है। मैने अध्यापक काल मे जो किताबे लिखी, वे अभी चलती हैं। उनकी रायल्टी मिलती है। कुछ काम तो मुझे भी करना पडता है।"

अजना ने कहा, "प्रोफेसर साहब, मुझे पथ-प्रदर्शक चाहिए, आपका आशीष!"

उसी समय मलखान बोला, "तुम गाँव चलो, अजना! वहाँ अँधेरा है। वहाँ का इन्सान पत्थर है।"

अजना ने कहा, "हाँ, भैया! मुझे वही जाना है। मै सफर की तैयारी कर रही हूँ। सरकार मेरे पत्र का क्या उत्तर देती है, इसकी प्रतीक्षा है।"

उसी समय प्रोफेसर ने अपना झोला और लकडी का डण्डा उठा लिया और वह बोला, "अब मै जाऊँगा। यहाँ से कुछ दूरी पर एक स्थान है, मुझे

वही जाना है।"

आतुर बनकर अजना बोली, "आज ही! अभी-अभी तो आप आए है।"

प्रोफेसर ने कहा, "मै जल्दी लौट आऊँगा। यहाँ से पहाडी गावो मे जाऊँगा। तुम चाहो तो मेरे साथ चल सकती हो।"

उत्साह से भर अजना ने कहा, "हाँ, मै आपके साथ चलूँगी। ऐसे अवसर का उपयोग अवश्य करना चाहूँगी।"

मलखान भी उठ पडा और बोला, "मुझे यहाँ काम था, साथ ही तुमसे भी मिल लिया।"

सभी चले गये, बाद मे नीरा भी। वह कहती गई कि यह प्रोफेसर विचित्र था, सचमुच अनोखा था। अजना ने बात सुन ली और सहज भाव से केवल मुस्करा भर दिया।

अठारह

एक मास से ऊपर हो गया था जब अजना प्रोफेसर अतुल के साथ पहाड पर गई और वहाँ के अनेक गाँवो मे घूमकर, प्रोफेसर के कार्य की गतिविधि देखती रही। अनेक स्थानो पर अजना स्वय प्रोफेसर की सहायक बनी। उस पर्यटन मे उसको लगा कि जैसे वह जन्म-जन्मान्तर मे प्रोफेसर के साथ थी, उसकी पुत्री थी, सहायिका थी। उसी प्रवास मे जब एक दिन प्रोफेसर अतुल के साथ अजना एक झरने के पास बैठी थी, तो तभी, प्रोफेसर ने उसका ध्यान भग किया और कहा, "बेटी अजना, सच कहना, क्या सच ही तुम्हे विवाह नही करना होगा? देखो, भावुकता मे न बह जाना। जीवन की वास्तविकता को देखना।"

अजना ने कहा, "मेरे लिए केवल आपका ही यह प्रश्न नहीं, दूसरी जगह भी मुझसे यह सवाल किया गया है। परन्तु मै सोचती हूँ कि विवाह

का प्रश्न गौण है, शरीर की भूख मिटाना मात्र ही इसका ध्येय है, और मेरे मन मे जो कुछ है वह इससे ऊँचा है।"

प्रोफेसर बोला, "बिटिया, बात ऊँची है। निभा सको तो इससे श्रेष्ठ दूसरा पथ नही है।"

अजना ने कहा, "वह निभेगा, निभाया जाएगा। आपका आशीष चाहिए।"

गद्गद् भाव से प्रोफेसर बोला, "यह प्रकृति भी तुम्हे आशीष देगी। सुनो, मै तुम्हे बता नही सका, कल मुझे जयन्त का पत्र मिला था। पत्नी से प्राय उसका झगडा रहता है। उस जयन्त का जीवन क्लिष्ट बन गया है।"

साँस भरकर अजना बोली, "जयन्तबाबू अच्छे है, सरल है। वे सदा मेरे सामने रहते है।"

प्रोफेसर ने कहा, "जयन्त अतिशय भावुक है। आओ अब चले। ठण्ड बढ गई है। तुम अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान किया करो। यह शरीर धर्म की बात है। शक्ति से परे काम न किया करो। देखता हूँ, तुम कातिहीन बन चली हो। इस पहाड पर आकर तुम्हे और स्वस्थ होना चाहिए था, पर तुम दुर्बल ही बनी रही हो।"

अजना ने अपने श्वेत मोतीसरीखे दाँतो से हँसकर कहा, "अब इस शरीर का क्या होगा! एक दिन नष्ट हो जाएगा। केवल राख का ढेर ही दिखाई देगा।"

प्रोफेसर ने कहा, "नही, नही, ऐसा समझना गुनाह है, आत्मघात है। तुम्हारा अभी जीवन ही कितना है, अभी तो बहुत चलना है। अभी इसने बहुत काम करना है। तुम्हारा तो अभी सभी काम अधूरा है। जब जीवन पाया है तो इसका मोल समझना चाहिए। चिर-जीवित रहने के लिए उत्साहित बनना चाहिए।"

अजना ने कहा, "मै अभी नही मरूँगी, अभी रहूँगी। जो मन मे बात है, उसे पूरा करना है।"

बाते करते-करते दोनो डेरे पर पहुँच गये। वहाँ जाते ही वे दोनो अपने-अपने बिस्तर पर पड गये। रात का आगमन हो चुका था। प्रात

होते ही प्रोफेसर ने सफर की तैयारी की। दोनो के बिस्तर बँध गये। वे दोनो चल पडे। अगले दिन जब अजना घर मे पहुँची तो उसे घर पर सरकार का पत्र मिला। अजना का आवेदन स्वीकार कर लिया गया था। उसने सरकार से निवेदन किया था कि यदि सरकार कैप्टेन रमाकान्त के नाम पर एक अस्पताल निर्माण करने मे सहायता दे तो वह मृत कैप्टेन का समस्त रुपया और जायदाद सरकार को भेट कर सकती है। जब उसके प्रस्ताव की स्वीकृति उपलब्ध हुई तो वह एकाएक गद्गद् होकर प्रोफेसर अतुल की ओर देखने लगी। उसकी आखे भर आई।

प्रोफेसर ने कहा, "अजना बेटी, मुझे लगता है कि तुम्हारे मन मे भगवान बोलता है। तुम्हारे जीवन का यह शुभारम्भ नितान्त पवित्र है।"

उस समय अजना की आँखे बाहर की ओर उठी थी। नीलाकाश को देख रही थी। उसी ओर देखते हुए वह बोली, "प्रोफेसर साहब, मेरे मन की पीडा भी अगाध है। जिस व्यक्ति ने मुझे इस सुन्दर पथ पर बढने का सकेत दिया, देखती हूँ, उसने मुझे उपेक्षा और तिरस्कार का पात्र समझ लिया। पर एक वह थे कैप्टेन रमाकान्त, तनिक कल्पना तो कीजिये, जाने किस सस्कारवश उनके मन मे मेरे प्रति अनुराग भर आया था। भगवान ने मुझे उस कैप्टेन के समक्ष ले जाकर खडा कर दिया।"

प्रोफेसर अतुल उस समय अत्यन्त गम्भीर थे। वे निश्चय ही अजना के हृदय की उस गहराई मे उतर गये कि जहाँ उसकी पीडा छुपी थी। तभी उन्होने अपना दुर्बल और काँपता हुआ हाथ अजना के सिर पर रखा और कहा, "बिटिया, इस दुनिया मे यही होता है। ऐसा ही सुना और समझा जाता है। पर यह समझ लो, जयन्त तुम्हे खोकर सुखी नही है। वह स्वय अपनी जाति की वेदी पर आत्मघात कर चुका है।"

अजना का सिर और अधिक झुक गया। उसके मन का उद्वेग भी आँखो मे उतर आया। वह रो उठी, तडपकर बोली, "मै भी अपराधिनी हूँ। जीवन मे बहुत बडा पाप कर बैठी हूँ मै। मै उस मृत कैप्टेन को उपेक्षा तथा तिरस्कार के अतिरिक्त और कुछ नही दे सकी। यदि मै उसे एक बार भी बताती, तनिक भी कहती कि मै····"

प्रोफेसर ने कहा, "बेटी, धैर्य रख। अब शान्त हो। सचमुच, वह

कैप्टेन भी अनुराग का भूखा था। नारी की अनुभूति चाहता था। वह ऊँचे हृदय का था। तूने उसे कुछ नही दिया तो क्या हुआ, वह तो तुझे अपना सभी कुछ दे गया।"

तभी आवेगपूर्ण बनकर अजना बोली, "पर एक जयन्तबाबू है जो पैसे के भूखे है, जातिवाद के उपासक है।"

विचलित बनकर प्रोफेसर ने कॉपती वाणी मे कहा, "हॉ हॉ, मैं सब समझता हूँ, बेटी! परन्तु जयन्त ने तुम्हे धोखा नही दिया। ऐसा भी नही कि वह तुम्हारा मूल्य नही आँक सका। निश्चय ही जयन्त दुर्बल निकला, परन्तु हृदयहीन नही। वह तुम्हे पाता। नि सन्देह, वह भाग्यहीन रहा, मुझे पता है। तुमने स्वय ही उसे जीवन-भर भटकते रहने को बाध्य किया।"

उसीदिन प्रोफेसर अजना से विदा हो गया। लेकिन अजना के लिए भले ही यह कोई अनोखी समस्या न हो कि वह विचार नही करेगी, परन्तु जो उसकी साथिने थी, उस बडे अस्पताल के डाक्टर तथा अन्य कर्मचारी थे, उनकी दृष्टि मे वह अजना मानो रहस्य से भरी थी, वह न समझने वाली समस्या थी। यह बात सभी ओर फैल चुकी थी कि अजना ने प्राप्त समस्त रुपया लौटा दिया है। इससे भी अधिक कौतुक की बात यह थी कि अजना अब विवाह करने की बात मे रुचि नही लेती। जब उससे अधिक कहा जाता तो कह देती, मेरा विवाह हो गया है।

—तो प्रश्न किया जाता, "किसके साथ ?"

अजना सरल भाव से कह देती, "कैप्टेन रमाकान्त के साथ।"

"उस कैप्टेन के साथ वह तो मर गया।"

"हाँ, वह गया, तो मुझे वैधव्य मिल गया।"

"तो विधवा है तू! सच! अरी अजना, भावना मे बहकर जीवन को धोखा न दे। उस सुहावने यौवन को यो बरबस ही न नष्ट कर दे। इसे पनपने का अवसर दे। बोलने दे।"

तब, सचमुच ही, नितान्त कठोर और गम्भीर बनकर अजना कहती, "इस जीवन से यदि भावना तिरोहित हो जाए तो इसमे फिर रह क्या जाएगा। तब तो निरा खोल ही होगा, यह जीवन! मुझे ऐसा ही रहने दो।

कुछ दिन जीना है, तो जीने दो।"

यों बात चलती और रुक जाती। कहने वाले को फिर आगे बात चलाने की क्षमता न रहती।

लेकिन अजना की उस मनोदशा के समय ही एक दिन, सध्या के समय, जयन्त वहाँ दिखाई दिया। निश्चय ही, वह अजना के पास आया था। अंजना ने देखा कि वह बहुत कुछ बदल गया है। कातिहीन हो गया है। वैसे अजना को इस बात का पता था कि अब जयन्त के पास रुपया है। वह मालदार है। देखते ही अजना ने कहा, "कहिये, ठीक तो है आप! आपकी पत्नी · बच्चे ·।"

जयन्त ने कहा, "हाँ, अजना, सब कुछ ठीक है। जो प्राणी इस धरती पर आता है, चलता है, चले ही जाता है। पर सोचता हूँ कि तुम्हारा चलना, तुम्हारा इस धरती पर आना मुझे सार्थक दीखता है।"

अजना उसके इस कथन पर चुप रही। उसने अपना मुँह ऊपर काले हो आए आसमान की ओर उठा दिया और उसी ओर देखते हुए, साँस भर-कर कहा, "जयन्तबाबू, ऐसा न कहते तो ठीक था। कम-से-कम आपके मुँह से ऐसा सुनना मुझे नही रुचता। देखते है आप! मै एक गरीब माता-पिता की लडकी हूँ, आपकी जाति से बहुत छोटी, मै समाज के इसी अभिशाप से आज भी अभिशप्त हूँ, केवल अस्पताल के मरीजो की सेविका हूँ।"

जयन्त इतनी भारी बात सुनकर भी मौन बना रहा। वह सहज ही समझ गया कि इस अजना के मन मे पीडा है। कोई फोडा है, जो सूज रहा है। उसकी बात से वह कसक गया है। अतएव, वह उदास भाव से मौन बैठा रहा।

अजना बोली, "परन्तु मुझे यह देखकर प्रसन्नता है कि आप सुखी है। आपकी पत्नी शुभदा मेरे लिए खेद का विषय है कि मैं उनसे नही मिल सकी।"

जयन्त ने मन मे उठी बात को लेकर कहा, "अजना, मै अपना पाप समझता हूँ। मै स्पष्ट देखता हूँ कि मेरे जीवन की पूजा भ्रष्ट हो चुकी है। फलस्वरूप, मै अशान्त हूँ। मनुष्य कहाँ चैन पाता है और कहाँ पीडा—यह सुगमता से नही समझा जाता। जिस पैसे से, प्रतिष्ठा से एक आदमी सुख

पाने की कल्पना करता है, तो यह जरूरी नही कि वह ऐसा कुछ पाकर भी सुखी बने। मैने इस जीवन मे यही समझा है। शुभदा सुन्दर है, सम्पन्न परिवार की बेटी है, उसके साथ मेरे घर मे सम्पत्ति भी आ सकी है, परन्तु यह सब पाकर मैने जीवन की शान्ति खो दी है। मुझे लगता है कि वह शुभदा आग है…अँगारा वह ईर्षा और हीनता से भरी है। तुम्हारे विषय मे गॉव की स्त्रियो ने उसे बता दिया है। उसने अनेको बार तुम्हारा नाम लिया है।"

बलात् अजना ने कहा, "नही, नही, मैने तो सुना है कि शुभदा सरल है, स्नेहमयी है। मै कभी आऊँगी। उसने उपेक्षा दिखाई, तो भी बुरा न मानूँगी।"

किन्तु इतना सुनकर जयन्त ने सॉस भरी और कहा, "काश, तुम उस शुभदा को समझ पाती। तुम उस नारी के हृदय मे उतर सकती। तुम यहॉ बैठी उसकी प्रशसा करती हो और वह तुम्हे आज भी अपने रास्ते का पत्थर मानती है। मेरा जीवन और अधिक विषम तथा कठोर न हो, इसीलिए मै तुम्हारे पास नही आया। परन्तु इस सत्य को स्वीकार करो, तुमने मेरा जीवन विषाक्त बना दिया।"

चचल बनकर अजना ने कहा, "छोडिए इस बात को! बताइये, आप चाय लेगे या शरबत!"

जयन्त बोला, "मै कुछ नही लूँगा। मै अभी लौट जाना चाहता हूँ।"

अजना बोली, "आप अपने स्वास्थ्य का ध्यान नही रखते। पत्नी से ममता रखिये। मुझे तो केवल इतना कहना होगा कि इस अजना को न भूले।"

जयन्त ने कहा, "काम अधिक है। अब तो स्वय अपने प्रति मन मे ग्लानि हो गई है। जीवन मे सन्धि नही है।"

बात सुनकर अजना मुस्करा दी। उसने कहा, "ऐसा सभी कहते है। मरने की बात भी सोचते है। पर जो जीवन का धन्धा है सब उसी को करते दिखाई देते है।"

जयन्त बोला, "यह विवशता है। मनुष्य दास है, याचक है।" यह कहते हुए वह खडा हो गया। उसने अपना हैण्ड बैग उठा लिया।

अजना बोली, "तो अभी, आज ही " उसका स्वर रुक गया।

जयन्त स्वय खिन्न था, बोला, "हाँ, अजना! मुझे कुछ काम है। तुझे भी आज पा लिया है। किसी ने बताया तो होगा नही कि मै यहाँ कई बार आया हूँ और लौट गया हूँ।"

अजना ने कहा, "मै अब स्थायीरूप से यह स्थान छोड दूँगी। गाँव मे अब मेरा कोई रहा नही तो इस नौकरी को करके क्या करूँगी। मै अब प्रोफेसर अतुल के निर्देश पर चलूँगी।"

जयन्त बोला, "प्रोफेसर महान व्यक्ति है, अद्भुत!" यह कहते हुए वह द्वार की ओर बढ चला। तभी उसने रुककर कहा, "अजनादेवी, मै ऐसा कहने का अधिकार तो नही रखता, परन्तु कहे बगैर रुक नही पाता। अच्छा यही है कि तुम विवाह कर लो। इस सुहावने जीवन को यो उजाड देने के लिए उद्यत मत बनो। बोलो, मै कोई अशुभ बात तो नही कहता!"

तुरन्त ही अजना ने कहा, "नही, नही, आप मेरे लाभ की ही बात कहेगे।"

जयन्त ने कहा, "तुमने जो त्याग किया, वह अनुपम है, महान है। आज यदि वह कैप्टेन रमाकान्त जीवित होता तो तुम्हारी इस भावना को पाकर प्रसन्न होता।" यह कहते हुए जयन्त ने पैर बढाये और बाहर चला गया।

उसी समय क्षुब्ध भाव मे एकाएक अजना के मुँह से निकला, "निरा बेचारा।"

उसे लगा कि सचमुच यह जयन्त बदल गया है। पूरा दुनियादार बन गया है। जिन्दगी की दलदल मे फँस गया है।

उसके अगले दिन ही अजना ने अपनी नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। इसकी सूचना उसने प्रोफेसर अतुल को भी दी। उसी पत्र मे उसने प्रोफेसर को बता दिया कि अब वह कहाँ रहेगी और क्या करना पसन्द करेगी।

उन्नीस

लेकिन जगन्त की मन स्थिति उन दिनो निश्चय ही, अतिशय दयनीय बनी थी। उसकी पत्नी शुभदा यह देखकर स्वय परेशान थी कि उसका पति या तो पागल है, अथवा अत्यन्त मेधावी बनने की लालसा मे स्थिर नही रहा। आरम्भ मे उसने समझा था कि उसका पति सरल है, भावुक है, जीवन की अनेक अनुभूतियो से भरा है, परन्तु शनै -शनै. उसे लगा कि नही, उसका पति जर्जर है, कठोर है। वह आत्मानुभूति से परे है। अपनी पत्नी के साथ किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, उससे भी अनभिज्ञ है। उसका पति केवल अपना स्वरूप देखता है, नारी का नही। ठीक इसी प्रकार की शिकायत जयन्त को शुभदा से थी।

परन्तु सत्य क्या था, कदाचित् इसे न शुभदा ने समझा न डॉक्टर जयन्त ने। वह रोगियो का शारीरिक उपचार करना जानता था, मानसिक नही। यही कारण था कि वह शुभदा के मन को तो क्या शान्ति देता, स्वय अपने रोग का उपचार करने मे समर्थ नही था। स्थिति यह थी कि उसके पास उभरते दरिया के समान पैसा तो आ रहा था, वह नित-नित अधिक परिश्रमी भी बनता जा रहा था, वैभवशाली भी हो गया था, परन्तु उसका मन निरन्तर ही अशान्त और उद्विग्न रहता था। उसके मन मे जैसे दीमक का कीडा चिपट गया था कि जो नित-नित ही उसे काटता जा रहा था। शुभदा सुन्दर थी, सुशिक्षित थी, लेकिन जयन्त का मन उसके पास जाने को प्रस्तुत नही था। कदाचित् यही कारण था कि एक-एक सप्ताह हो जाता कि जयन्त और उसकी पत्नी मे दो घडी बैठकर वार्तालाप भी न हो पाता। शुभदा यदि ऐसा अवसर पाना चाहती तो जयन्त रास्ता काट जाता। किसी काम का बहाना करके घर से चल देता। रात मे भी वह देर से घर पहुँचता और भोजन करते ही अपने कमरे मे चला जाता। शुभदा यदि वहाँ पहुँचती तो वह नीद मे सोया होता अथवा किसी किताब को लिए पढने मे लगा होता।

यो, देर से, उस परिवार मे उन दो प्राणियो के मन मे एक ऐसा बीज

पनप रहा था कि जिसे न शुभदा समझ पाती थी न जयन्त। दोनो के मन का बोझ आये दिन बढता जा रहा था।

तभी जयन्त को पता चला कि दूर पर्वतीय प्रान्त मे सरकार ने कैप्टेन रमाकान्त के नाम पर एक अस्पताल खोला है, अजना उस अस्पताल की सरक्षिका है। जयन्त को यह भी समाचार मिला कि अजना उस क्षेत्र मे सभी की परिचित है। ऐसे समाचार से प्रेरित होकर जयन्त के मन मे आया कि वह पर्वतीय क्षेत्र मे जाए और उस अस्पताल को देखे। वह भी उस मिशन को अपना योग दे। किन्तु वह देखता था कि उसका जीवन तो बँधा है। इस शुभदा ने पकड लिया है। इसके बच्चो ने और जयन्त उस अजना के पास जाने के लिए लालायित था, उसका मन छटपटा रहा था। वह उस अजना से एक बार फिर अपने मन की बात कह देने के लिए तत्पर था। किन्तु जयन्त के मन की इस ऊहापोह के मध्य ही एक दिन शुभदा ने उसे टँकोरा और कहा, "आखिर क्या है, तुम्हारे मन मे ? क्या वह अजना ऊँ, तुम उसके पास जाओगे तो मै नही रोकूँगी ? मै तुम्हारा पथ अवरुद्ध नही करूँगी।"

अप्रत्याशित भाव से जयन्त शुभदा की बात सुनकर भी मौन बना रहा।

किन्तु शुभदा ने फिर कहा, "मै समझी थी कि मनुष्य सरल है साफ है। परन्तु मै तुम्हे देखकर यह समझती हूँ कि नही, मनुष्य रहस्य से भरा है, कठोर है। बोलो, क्या तुम्हारे मन मे वह चमार की लडकी अजना···"

जयन्त तुरन्त चीख पडा, "शुभदा!"

शुभदा ने कहा, "मै भगाई हुई नही हूँ, विवाहिता हूँ। मैं एक भले माँ-बाप की बेटी हूँ। तुम्हारे लिए यदि और बीवियाँ हो सकती थी, तो मेरे लिए"

"ओह, मूर्ख शुभदा!" जयन्त फिर झल्ला पडा।

किन्तु शुभदा तो उसदिन जैसे सभी कुछ कह देने के लिए प्रस्तुत थी। वह बन्दूक की भरी गोली की तरह छूट पडी और बोली, "मै मूर्ख हो सकती हूँ, परन्तु पाप की पोट नही।"

जयन्त ने भावावेश मे मेज की दराज से पिस्तौल निकाल लिया और

उसका घोडा छोड बैठा। साथ ही उसने चीत्कार किया, "मै तुझे जान से मार दूंगा, शुभदा की बच्ची। तुझे घमण्ड है कि तेरा बाप मालदार है तो उस पर थूक दूंगा।"

अवसर की बात थी कि गोली शुभदा की कनपटी के ऊपरी हिस्से को छूती हुई निकल गई। वह कमरे की दीवार मे घुस गई। शुभदा के सिर से खून निकला और वह वही कमरे के फर्श पर सिर पकडकर बैठ गई। घर के नौकर कमरे मे आ गए। शुभदा के बच्चे भी दौडे आये। वे रो पडे, लेकिन जयन्त तो क्रोध मे था। वह नौकरो को देख चिल्ला पडा, "तुम लोग चले जाओ यहाँ से।" और वह स्वय पिस्तौल को रख कमरे से बाहर निकल गया। वहाँ से सीधा गाँव के मन्दिर पर पहुँच गया। उसने देखा कि उस रात के सन्नाटे मे भी मन्दिर का देवता मुस्करा रहा है, हँस रहा है। जयन्त उसी मन्दिर के चबूतरे पर घूमने लगा। ऊपर आसमान मे चाँद निकल आया था। चारो ओर चाँदनी फैल गई थी। दूर जगल का दृश्य अत्यन्त मनोरम लग रहा था। तभी जयन्त के मन मे बात आई, यह वैभव और पैसा मुझे बडा महँगा पडा। इस शुभदा ने मेरा सर्वस्व हरण कर लिया। और एक वह थी अजना, निरी सरल। आह! अब मै उससे भी दूर हो गया।

सयोग से उसी समय मन्दिर का पुजारी वहाँ आ गया। वह बूढा था। उसे कम दीखता था। किन्तु जब वह निकट आया और उसने मन्दिर के चबूतरे पर गाँव के सबसे बडे आदमी डाक्टर जयन्त को देखा तो वह चकित बनकर बोला, "भैया, तुम!"

जयन्त ने कहा, "हाँ, पुजारीजी, मैं हूँ।"

किन्तु पुजारी ने कहा, "बहुत दिन पहले भी तुम आते थे, तब तुम्हारे साथ वह लडकी अजना भी आती थी।"

जयन्त ने साँस भरकर कहा, "हाँ, पुजारीजी, अब वह दिन नही आ सकते। वे दिन दिखाई भी नही देगे।"

पुजारी ने कहा, "भैया, जो गया वह नही आता। समय भी नही।" वह बोला, "पर भैया, आज तुम कैसे आए?"

जयन्त ने कहा, "मै परेशान था, मन खिन्न बना था। यहाँ देखता हूँ कि सदा के समान भगवान आज भी मुस्कराता है, हँसता है।"

पुजारी ने कहा, "भैया, भगवान आदमी के समान न रोता है, न हँसता है। उसके मन का भाव क्या कभी बदलता है? निर्लेप है भगवान।"

जयन्त चुप रहा। वह ऊपर आकाश की ओर देखने लगा। मानो वह आकाश का चन्द्रमा भी उसी की ओर देखकर हँस रहा हो। किन्तु जयन्त के मन की यह कैसी विवशता थी कि उसका मन रो रहा था। वह पीछे घर पर जो काण्ड उपस्थित कर आया था वह उसकी आँखो के समक्ष घूम रहा था। उसी समय उसे लगा कि सच, इस जयन्त के मानस मे राक्षस बैठा है। वह चीत्कार करता है, हँसता है।

उसी समय जयन्त लौट पडा। वह तेज चाल मे चल घर पहुँच गया। जाकर देखा कि शुभदा के बच्चे सो गए है। वह स्वय भी बिस्तर पर पडी है। सिर मे पट्टी बँधी है। पास जाते ही उसने शुभदा से कहा, "मै अपराधी हूँ, शुभदा! मै दुखी हूँ।"

सुनते ही, शुभदा उठकर बैठ गई। वह तुरन्त ही कातर और रुक्ष स्वर मे बोली, "मै समझती थी कि तुम देवता हो, पर आज समझ सकी कि तुम क्या हो।"

जयन्त ने कहा, "हाँ, शुभदा! मै राक्षस हूँ, जगली हूँ। निश्चय ही, मै तुम्हारे अयोग्य हूँ। मैं अब जीवन नही चाहता, मौत चाहता हूँ।"

किन्तु शुभदा ने तीक्ष्ण दृष्टि से जयन्त को घूरकर कहा, "कहते क्यो नही, तुम मेरी मौत चाहते हो।"

उस समय जयन्त का सिर झुक गया। वह अपनी पत्नी की दृष्टि मे अपराधी बन गया। उसी तरह सिर झुकाए वह अपने कमरे मे लौट गया।

किन्तु प्रात होने पर जब शुभदा जयन्त के कमरे की तरफ से निकली तो नौकर ने एक पर्चा शुभदा के हाथ पर रखा और कहा, "बाबूजी बाहर गए है।"

शुभदा ने पर्चा पढ लिया जिसमे लिखा था कि वह बाहर जा रहा है। पहले पिस्तौल पुलिस मे लौटा देगा, बाद मे कही अन्यत्र जाएगा। वह एक सप्ताह से पूर्व नही लौटेगा।

शुभदा फिर अपने कमरे मे लौट आई। रात मे उसने स्वय निश्चय

किया था कि वह अपने पिता के घर चली जाएगी। इस प्रकार वह इस घर मे नही रहेगी। किन्तु जब उसने देखा कि जयन्त स्वय चला गया, पिस्तौल लौटाने का भी विचार कर लिया, तो बरबस ही, उसके मन मे आया कि रात जो कुछ हुआ, उसका परिणाम भी अब सुखकर नही होगा। कदाचित् अब उसका भविष्य उज्ज्वल नही बन सकेगा, एक नारी के रूप मे। उस शुभदा ने क्षणभर मे समझ लिया कि वह और उसके बच्चे निरावलम्ब है, पथ-भ्रष्ट है। उसने अपने मन मे सुन्दर कल्पनाओ का एक महल निर्मित किया था, वह हवा का एक ही झोका खाकर गिर गया। मानो उस शुभदा का ससार लुट गया हो।

किन्तु इसके विपरीत, वह जयन्त था जो अपने गाँव से चलकर नगर मे गया। उसने पिस्तौल वापिस कर दिया और वहाँ से एक ऐसे स्थान की ओर चल दिया कि जो उसके लिए अपरिचित नही था। दूसरे दिन ही वह उस पर्वतीय स्थान मे पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही उसे प्रोफेसर अतुल मिला जिसने मुस्कराते हुए उसका स्वागत किया। प्रोफेसर ने कहा, "मै जानता था कि तुम आओगे। यहाँ आकर भी अजना से मिलोगे।" उसने बताया, "अजना यहाँ नही है। आजकल यहाँ मलेरिया है न, तो वह बीमारो की परिचर्या मे लगी है। आज आराम करो, कल चलेगे उसके पास।"

जयन्त ने कहा, "अजना का जीवन पवित्र है। गगा का जल है।"

प्रोफेसर ने कहा, "अजना अब भिक्षुणी बन चुकी है। उसने आज ब्रह्मचर्य-व्रत ले लिया है। वह विधिवत् बौद्ध-धर्म मे दीक्षित हुई है।"

जयन्त ने साँस भरकर कहा, "यह उसकी तपस्या है।"

"हाँ, सो तो है ही!" प्रोफेसर ने कहा, "अब तुम आराम करो। अजना ने इस अस्पताल के काम मे मुझे भी लपेट लिया है। उसके पीछे मुझे यहाँ रहना होता है। इस क्षेत्र मे लोग गरीब है, रोगी भी अधिक होते है। अजना के कहने पर मैने अपना अन्तिम स्थान यही चुन लिया है।"

वह दिन बीत गया। रात आ गई। प्रोफेसर अतुल मौन भाव से अपने बिस्तर पर पडा था। कुछ फासले पर ही जयन्त अपने बिस्तर पर बैठा था। तभी उसने कहा, "प्रोफेसर साहब, मेरे मन मे एक बात है।"

प्रोफेसर ने उसकी ओर देखा, 'क्या ?"

जयन्त ने कहा, "मैं सोचता हूँ, अपनी सेवाएँ इस अस्पताल को समर्पित कर दूँ।"

सुनकर प्रोफेसर रुक गया। एकाएक नही बोला। जयन्त की ओर देखने लगा, जैसे उसके अन्तर्मन की बात को समझने लगा हो।

जयन्त बोला, "एक दिन मेरे मन मे यही साध थी। समय बदला कि मै भूल गया। अब उसे याद करता हूँ तो "

प्रोफेसर ने कहा, "तुम विषम परिस्थिति मे हो, जयन्तबाबू! तुम गृहस्थी हो।"

जयन्त ने कहा, "पत्नी के पास पैसा है, जायदाद है।"

प्रोफेसर बोला, "परन्तु ये सभी गौण है। उसे पति चाहिए।"

जयन्त ने कहा, "प्रोफेसर साहब, आप मेरे मन की स्थिति नही समझते। शुभदा से मेरे विचार नही मिलते। वैसे अब वह दो बच्चो की माँ है।"

सुनकर प्रोफेसर मुस्कराया और हँस दिया। तभी उसने कहा, "अब सो जाओ। प्रात बात करना। अभी अजना को सूचना दे दी गई है, वह प्रात आजाएगी।"

जयन्त लेट गया। प्रोफेसर सो गया, परन्तु जयन्त उस रात मे देर तक नही सो पाया।

प्रात हुआ। जब सूर्य पहाड की ओट से ऊपर आया, तभी अजना वहाँ आ गई। उसके शरीर पर काषाय वस्त्र थे। जयन्त को देखते ही वह हँस दी और कहा, "मुझे समाचार मिल गया था कि आप यहाँ आए है।"

जयन्त ने कहा, "मुझे प्रोफेसर ने बता दिया था कि तुम "

"हाँ, जयन्तजी! काम बहुत है। यहाँ का समाज गरीब है, निरुपाय है। आपने अस्पताल देखा है न!"

जयन्त ने कहा, "हाँ, देखा है। कैप्टेन रमाकान्त की प्रस्तर प्रतिमा का भी दर्शन किया। मै प्रोफेसर से सुन चुका हूँ कि तुम उस प्रतिमा की पूजा करती हो। सचमुच, यह सब तुम सराहनीय कार्य कर रही हो। उस स्वर्गीय आत्मा को शाति प्रदान कर रही हो।"

उसी समय प्रोफेसर वहाँ आया। अजना ने कहा, "प्रोफेसर साहब,

यह जयन्तजी मेरी प्रशसा करते है। यह तो कहते नही कि मै कहाँ भूल करती हूँ, कहाँ भटक जाती हूँ।"

प्रोफेसर ने कहा, "जयन्त सत्य बोलता है। इसके मन मे भी है कि वह अपनी सेवाएँ अस्पताल को प्रदान करे।"

चकित बनकर अजना ने कहा, "ऐसा कैसे होगा? यह नही होगा। इनकी पत्नी, बच्चे यह नही हो सकेगा।"

"अच्छा फिर आऊँगी", कहकर अजना ने दोनो को अभिवादन करके विदा ली।

उसदिन के समान जो और दिन आये तो वे भी बीतते चले। डॉक्टर जयन्त को वहाँ दो मास हो गए। वह योग्य और परिश्रमी डाक्टर था। जिस रोगी का उपचार करता, वह अच्छा हो जाता। मानो उस अस्पताल को डाक्टर जयन्त क्या मिला, वरदान मिल गया हो। प्रोफेसर अतुल और अजना ने पूर्णरूप से गाँवो मे घूमने और ग्रामीणो की सेवा करने का काम ले लिया। सभी का ख्याल था कि अस्पताल शरीर है तो डाक्टर जयन्त उसकी आत्मा है। वह अब कोई 'बाबू' नही, सन्यासी है। सिर के बाल बढ गए है, दाढी बढ गई है। उसका खान-पान और पहनावा भी बदल गया है। उसको एक ही लगन है—रोगियो की सेवा करना।

लेकिन एक प्रात प्रोफेसर अतुल और जयन्त जब अजना के पास पहुँचे तो वे दोनो देखकर चकित हुए कि अजना गम्भीर है, मौन है और उसी के पास बैठी हुई शुभदा विनीत भाव से कह रही है, "मैं तुमसे भिक्षा माँगने आई हूँ, मेरा पति मुझे लौटा दो मेरे बच्चो का पिता "

बीस

शुभदा की वह अवस्था प्रोफेसर अतुल और जयन्त को भले ही रुचिकर न लगी हो। परन्तु स्वय अजना उस सुन्दर और स्नेहमयी नारी की

करुण वाणी मे ऐसे खो गई कि मानो उन क्षणो मे, उसकी आत्मा के परकोटो मे उस वाणी के करुण कोलाहल को छोड और कुछ नही रह गया हो। जयन्त और प्रोफेसर अतुल तुरन्त ही उस स्थान से लौट गए। जयन्त अपने काम पर जा लगा। जाते ही वह मरीजो के करुण-नाद मे खो गया। प्रोफेसर को पास के एक गॉव मे जाना था। अब उसका अपना कोई निजी परिवार तो था नही, इसलिए वह एक से अनेको मे बॅट गया था। रात मे ही अजना को इस बात का पता चला कि करतारपुर गॉव मे जो यशोदा नाम की विधवा रहती है उसकी युवा लडकी मालती के विवाह का प्रबन्ध प्रोफेसर के पैसो से हो रहा है। प्रोफेसर अतुल ने ही लडका चुना है। जब रात मे प्रोफेसर ने अजना से उस मालती के विवाह मे सम्मिलित होने की बात कही, तो अजना ने उन्हे सहज ही भाव से बता दिया कि उसका अब इन दुनियावी विवाह-शादी के उत्सवो से कोई सम्बन्ध नही रहा। इतना सुनकर प्रोफेसर मौन रह गया। किन्तु जब प्रात. के समय अजना अपने नित्य कर्मों से निवृत्त होकर दिनभर के कार्यक्रम पर विचार करने बैठी, तो तभी, उसे प्रोफेसर अतुल की बात याद हो आई। उसने निश्चय किया कि वह मालती के विवाह मे अवश्य जाएगी। हो सका, तो जयन्त को भी साथ ले जाएगी।

वहाँ शुभदा और उसके बच्चे भी गये। वे सभी सुहावने और मनभावने लग रहे थे। देर से अजना को मौन देख शुभदा ने कहा, "अजनाजी, देखती हूँ, तुम मुझसे ऊँची हो। भाग्य की बात है कि तुम ·"

"ओह, ऐसी प्रसगहीन बात भी कहती हो। न, न, तुम बडी हो। तुम माँ हो। तुम इन सुन्दर सुकुमार बच्चो का निर्माण कर सकी हो।" सहज भाव से अजना ने कहा, "सच मानना, मै इन बच्चो मे ही भगवान का रूप पाती हूँ। तुम्हारे मातृत्व को धन्य समझती हूँ। विश्वास रखो, मै जयन्त-बाबू से कहूँगी कि वे लौट जाएँ। अपनी सुन्दर दुनिया मे चले जाएँ।"

उस समय शुभदा की दृष्टि कमरे के बाहर गई हुई थी। समीप ही ऊँचा पर्वत खडा था। वर्षा हो चुकी थी, इससे पर्वत भी हरियाला बन गया था। सुन्दर लग रहा था, ऑखो मे छा रहा था। किन्तु उस विशाल पर्वत की ओर देखते हुए ही शुभदा के मन मे जिस प्रकार का कोलाहल भरा था

वह तरल बनकर आँखो मे उतर आया। शुभदा के गोरे गालो पर बह चला।

यह देख, अजना ने आहत स्वर मे कहा, "रोती हो शुभदा बहिन ! बोलो, क्या मन मे लिये हो ?"

शुभदा जैसे चौंक गई। उसने एक बार पास बैठी अजना की ओर देखा और तब अपनी गर्दन झुकाकर सहमे स्वर से कहा, "देखती हूँ कि मै अब तक धोखे मे थी, मै गर्वित बनी थी। पर आज तुम्हे देखकर तो "

अजना मुस्करा दी और अपना हाथ बढाकर शुभदा के हाथ पर रखती हुई बोली, "मेरी अच्छी शुभदा !"

शुभदा ने कहा, "वे ऐसा ही चाहते है, तो करें, वे रहे। अब मै उनके रास्ते मे नही आऊँगी।"

तुरन्त ही अजना ने अपने स्वर पर ज़ोर देकर कहा, "नही, नही, ऐसे तो जयन्तबाबू की साधना सफल नही होगी। वह जीवन की जिस समाधि मे बैठ जाना चाहते है वह तुम्हारे इन आँसुओ मे बह जाएगी।"

उसी समय वहाँ पर प्रोफेसर अतुल आ गये। वह अजना के कमरे के द्वार पर आकर बोले, "मै करतारपुर जा रहा था, लौट आया। मै रात कहना भूल गया था कि मालती की माँ बीमार है, वह अछूत है न, तो गाँव के ब्राह्मण लोग और उनकी पत्नियाँ उसके पास भी नही आएँगी। इसलिए मालती की चोटी गूँथने, उसे विवाह के कपडे पहनाने और घर के अन्य काम-धन्धे देखने के लिए किसी दूसरी नारी की आवश्यकता है। बोलो, क्या ये जयन्तबाबू की पत्नी शुभदादेवी "

अजना ने कहा, "इसकी मानसिक स्थिति ठीक नही है। अभी-अभी तो आँखो मे आँसू "

उसी समय शुभदा ने अपनी आँखें पोछ ली और ऊपर मुँह उठाकर कहा, "मै आपके काम आ सकती हूँ तो वह मेरे अहोभाग्य होगे।"

प्रोफेसर अतुल ने कहा, "शुभदादेवी, वह अछूत कन्या हजार ब्राह्मण कन्याओ से श्रेष्ठ है, निर्मल और पवित्र है। तुम उसे देखोगी तो खुश हो जाओगी।"

आतुर बनकर शुभदा ने कहा, "जी, मैं उस अनुपम कन्या का शृगार

करूँगी, उसके सिर के बाल गूँथूंगी, मैं उसे सजाकर ससुराल भेजूंगी।"

प्रोफेसर दरवाज़े की चौखट से लग गया। वह सामने खड़े पर्वत की ओर देखने लगा। तभी अजना ने कहा, "शुभदा बहिन, इस लड़की का विवाह करने के लिए प्रोफेसर ने अपना सब-कुछ दे दिया है। पता है, वह लडकी जन्मान्ध है। परन्तु रूपवती इतनी कि चित्रकार भी उसे देखकर शरमा सकता है। बचपन मे उसकी माँ ने लडकी के पालन-पोषण मे कमी नही की, तो अब भाग्य से मिल गई इन प्रोफेसरजी की सहायता।"

शुभदा ने साँस भरकर कहा, "प्रोफेसरजी देवता है।"

अजना बोली, "उस लडकी की आँखो का इलाज भी चल रहा है। आँखो का डाक्टर कहता है कि रोशनी आ सकती है। वह मालती इस सुन्दर ससार को अवश्य देख सकेगी। और जो लडका विवाह कर रहा है वह स्वय डाक्टरी पढ रहा है। प्रोफेसर उसकी पढाई पर भी व्यय कर रहे है। विवाह के बाद ही वह लडका विशेष शिक्षा के लिए विदेश जाने वाला है।"

तभी प्रोफेसर ने कहा, "अजना, मैं स्पष्ट देखता हूँ कि उस मालती का भाग्य रानी-महारानियो से कम न होगा। यह मेरा मन कहता है।"

अजना ने हँसकर कहा, "भगवान करे, आपका आशीष सत्य हो।"

प्रोफेसर बोला, "अच्छा, अब मैं जाता हूँ।"

अजना ने कहा, "हम लोग भी आएँगे। जयन्तबाबू मरीजो से छुट्टी पा ले तो सब वहाँ इकट्ठे पहुँच जाएँगे।"

प्रोफेसर ने कहा, "जयन्त ने रात ही मुझे एक हज़ार रुपया इस विवाह के लिए दिया है। उसने कहा है कि वह लडके की पढाई पर भी देगा।" प्रोफेसर ने शुभदा की ओर देखकर कहा, "तुम चिन्ता न करो, जयन्त तुम्हारा है। वह तुम्हारा आदर करता है। परन्तु उसकी आत्मा में जो स्वर गूँजता है उसे तुम भी सुनो। जयन्त चलते-चलते भटक गया था। पर अब फिर अपनी दिशा देखता है। क्या यह अच्छा न होगा कि उसके दिशा-सकेत पर तुम भी चलो। तुम भी अपने मन का उदात्त-पक्ष इस निर्बल और असह्य बने समाज को भेट करो।"

शुभदा ने कहा, "प्रोफेसर साहब, आप मेरे पति के गुरु हैं, तो मेरे भी

लडके ने कहा, "नही ।" उसका नाम ललित था ।

अजना ने लडकी की ओर देखकर पूछा, "और मुन्नी तुम ?"

मुन्नी ने सिर हिला दिया जिसका अर्थ था नही। उसका नाम सुधा था ।

जब अजना ने उन दोनो के नाम मालूम किए तो उसने सहज भाव से मुस्कराया, "लडका पिता पर गया है, लडकी माँ पर।"

शुभदा ने कहा, "यह स्वाभाविक है ।"

जल्दी से अजना बोली, "हाँ-हाँ ।"

तब उसने सुधा की ओर देखकर कहा, "तू मेरे साथ रहेगी ?"

सुधा ने कहा, "हाँ, रहूँगी ।"

"और ललित तू ! देख तो यहाँ कैसे ऊँचे पहाड है । बोल, रहेगा ?"

ललित ने सिर हिलाकर स्वीकार कर लिया ।

तभी अजना ने हँसकर कहा, "अरे, तुम नही रहोगे भैया ! अपनी माँ को छोडकर भला यहाँ कैसे रहोगे। उसने शुभदा को देखकर कहा, "जयन्तबाबू ऊपर के कमरे मे रहते है। वह बडा कमरा है। आदमी तुम्हारा सामान वही पहुँचा देगा ।"

तुरन्त ही शुभदा ने कहा, "क्या इस कमरे मे ठीक नही रहेगा। यहाँ आकर मुझे तुम्हारे समीप रहना ही शोभनीय लगेगा ।"

अजना बोली, "यह भी तुम्हारा कमरा है । पर जयन्तबाबू के मन मे क्या है, इसे तो एकान्त मे ही बैठकर समझा जाएगा ।"

शुभदा ने कहा, "मै उनके मन की बात समझती हूँ । मै देर से जानती हूँ कि जिस डोरी को खीचा गया वह अब टूट भी सकती है । उसकी सीमा है । मै अब वही करूँगी कि जिसमे इन बच्चो के पिता की मतैक्यता होगी ।"

इतनी बात सुनकर, अजना फिर गम्भीर हो गई । वह खडी हो गई । जब वह बाहर जाने लगी तो बोली, "इतना बताना असगत नही होगा कि जयन्तबाबू जो कुछ करते है उसमे अपने प्राणो की समस्त आस्था समर्पित कर देते है । आज जयन्तजी इस अस्पताल के प्राण है । रोगी उन्हे अपना भगवान मानते है । मैंने देखा है कि रोगी के उपचार मे जयन्तबाबू अपना भोजन भी भुला देते है। वे सच्चे सेवक है ।"

शुभदा ने कहा, "हाँ-हाँ, यह मै भी मानती हूँ। लेकिन क्या यह गृहस्थ जीवन उपेक्षणीय है ? यह भी तो सेवा है।" .

मानो इस एक बात मे ही अजना ने शुभदा के मन का स्वरूप पा लिया। उसने समझ लिया कि इस सुन्दर नारी के मन मे क्या है ? अतएव, उसने कहा, "यह तो श्रेयस्कर है ही।"

यह सुनते ही शुभदा को जैसे बल मिला। उसने कहा, "तब भला वे गृहस्थी से क्यो भागते है। क्या योगी बनना चाहते है ? मै तो यही समझी हूँ अब तक।"

अजना ने वहाँ से जाते हुए कहा, "अब आई हो तो बात कर लेना। समझा-बुझाकर जयन्तजी को साथ ले जाना।"

निश्चय ही, उस समय यदि अजना कुछ और खडी रहती तो शुभदा तुरन्त कह देती, तुम जिस आदमी की बात करती हो, वह मेरा पति भले ही हो, परन्तु मन से वह तुम्हारा पूजक है, मेरा नही। उस पर मेरी बात का प्रभाव नही, तुम्हारा है।

लेकिन अजना तो वहाँ से जा चुकी थी। जब शुभदा उस कमरे मे अकेली रह गई तो देखा कि दोनो बच्चे पहले से ही बाहर निकल गए थे। वे मैदान मे खेलने लगे थे। तभी शुभदा ने देखा कि अजना के उस कमरे मे बहुत ही सीमित सामान है, शायद अजना धरती पर सोती है। सामने दीवार के आले मे भगवान बुद्ध की एक मूर्ति रखी है। वहाँ धूप जल रही है। उस मूर्ति के गले मे माला पडी है। एक तरफ कुछ किताबे रखी हैं। उस अवस्था मे ही शुभदा खडी हो गई, वह देर से बैठी थी। कमरे के बाहर निकलकर जब वह अस्पताल के एक पार्श्व की ओर चल पडी, तो तभी उसके दोनो बच्चे वहाँ आये और बोले, "अम्मा, चलो, देखो तो वह बुढिया कितनी रो रही है।"

शुभदा ने पूछा, "अरे, कौन बुढिया ?"

ललित ने कहा, "माँ, वह बुढिया बीमार है। तडप रही है।"

निरुद्देश्य बनी शुभदा बच्चो के साथ आगे बढ गई। अब वह एक कमरे के द्वार पर पहुँची तो देखती है कि अजना स्वय उस बुढिया के सिर पर हाथ फेर रही है। उसकी कमर सहला रही है। उसे शान्त रहने के लिए

कह रही है।

पास आते ही शुभदा ने पूछा, "इस माई को क्या रोग है?"

अजना ने कहा, "इसे मौत का रोग है। मौत आयेगी तो इस रोग से छूट जाएगी।" वह वृद्धा को छोडकर खडी हो गई और बोली, "इस जीवन मे पीडाओ के अतिरिक्त भला और क्या है? सभी पीडित है, रोगी है। तुम रोगी हो तो मै भी रोगी हूँ। इस ससार मे सब रोगग्रस्त है।"

चकित होकर शुभदा उस ओर देखने लगी, वह जैसे अजना की बात का अर्थ नही समझ सकी।

किन्तु अजना ने फिर कहा, "शुभदादेवी, तुम भी एक रोग लेकर यहाँ आई हो—पति वियोग का रोग! और इस बुढिया ने भी जीवन मे जो कुछ किया, उसका अब फल भोगती है। यह अपने यौवनकाल मे कितनी कुटिल और भयावनी रही, यह मै सुन चुकी हूँ। आज पीडित बनी है, तो रोती है, चिल्लाती है। सच ही कहा है किसी ने, जवानी आँधी के समान आती है और निकल जाती है। जब बुढापा आता है तो पीडा प्राप्त होती है। तब क्या जीवन की कहानी किसी को याद आती है।"

जैसे निर्मम भाव से शुभदा ने कहा, "याद तो आती है।"

उदास भाव मे अजना बोली, "शायद आती हो।"

शुभदा ने कहा, "पर अजना बहिन, तुम जानती हो कि यह बुढिया जवानी मे अच्छी औरत नही रही, तो तुम फिर भी इसके साथ यह सद्-व्यवहार क्यो करती हो? इसे क्यो मरने से बचाना चाहती हो?"

अपने स्वर पर जोर देकर अजना ने कहा, "इस अस्पताल के मिशन का यही उद्देश्य है। और पापी को पापी समझना मेरा काम नही। मेरा काम सेवा करना है। इस बुढिया के लिए यदि मेरे प्राणो की भी आवश्यकता पडे तो दिये जा सकते है। यही मेरी निष्ठा है।" यह कहते हुए अजना दूसरे मरीज की ओर बढ गई। शुभदा भी उसके साथ चल पडी। उस कमरे मे लगभग बीस चारपाइयाँ थी कि जिन पर बीमार पडे थे। उनमे कुछ जवान थे, कुछ बूढे थे। केवल वह वृद्धा ही उस कमरे मे महिला के रूप मे थी।

अजना ने कहा, "यहाँ अधिक बीमार नही रह सकते। एक कमरा औरतो के लिए है, एक पुरुषो के लिए। हम लोगो को आस-पास के गाँवो

मे अधिक जाना पडता है।" वह उस कमरे से निकल स्त्रियो के वार्ड की तरफ चली। शुभदा और उसके बच्चे साथ थे। वहाँ जाकर दोनो एक-एक चारपाई के पास गई। कुछ मरीज स्त्रियो को अंजना ने यह भी बताया कि ये डॉक्टर जयन्त की पत्नी है। आज ही आई है। उस कमरे से अजना अभी बाहर नही हुई थी कि उसके द्वार के पास एक चारपाई पर पडे बच्चे को लक्ष्य कर उसने शुभदा को बताया कि देखो, इस बच्चे को भी नियति का अभिशाप मिला है। गॉव मे बीमारी आई और इस बच्चे को अनाथ बना गई। मॉ-बाप उस आँधी मे उड गए। अब यह एकाकी है, बीमार है।"

एकाएक पीडित बनकर शुभदा ने कहा, "राम-राम।"

अजना ने वह कमरा छोड दिया और फिर अपने कमरे की ओर पैर बढाते हुए कहा, "इस धरती पर यही दिखता है। लोग जिसे सुख मानते हैं, मुझे तो उसके अन्तराल मे हा-हाकार सुनाई पडता है।"

सुनकर शुभदा चुप रही। कदाचित् उससे कुछ कहा नही गया।

इक्कीस

वह अजीब अवस्था थी कि शुभदा को अपने घर से दूर, उस पर्वतीय क्षेत्र मे आये कई दिन बीत चुके थे परन्तु जयन्त के साथ उसका वार्तालाप नही हुआ। जयन्त भी इस बीच में अधिक व्यस्त रहा। अस्पताल से दूर भी रहा। किन्तु उस नये क्षेत्र मे आकर शुभदा ने अस्पताल मे कार्य करने वाले व्यक्तियो का कार्य-क्रम देखा तो उसने इस बात को मान लिया कि वह जीवन का अभूतपूर्व पथ है जो उसने पहले नही देख पाया था। वह देखती रहती कि अजना और प्रोफेसर नित्य ही प्रात चार बजे उठते और अपने नियमित कार्यों से छुट्टी पाकर रोगियो की परिचर्या मे लग जाते। एक दिन सन्ध्या के समय जब शुभदा अपने बच्चो के साथ खुले मैदान मे बैठी हुई चन्द्रमा के प्रकाश मे पर्वत की शोभा देख रही थी, तो तभी,

अकस्मात प्रोफेसर अतुल उस ओर आ गए। उन्हे देखते ही शुभदा उठ खडी हुई। किन्तु प्रोफेसर ने तुरन्त ही कहा, "बैठो बैठो।" और वह स्वय भी, समीप पडी पत्थर की शिला पर बैठ गये।

तभी प्रोफेसर ने कहा, "जयन्तबाबू आज भी नही आएँगे।"

एकाएक शुभदा ने कहा, "आज भी नही! बाहर गए हुए उन्हे दो दिन तो हो गए।"

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ, बेटी! जयन्तबाबू को इस प्रकार एक-एक सप्ताह हो जाता है। यह पहाडी क्षेत्र उनका ऋणी बन गया है। पता है न, जिस गाँव मे वह गये है, वहाँ कालरा फैला है। वहाँ कई वृद्ध और जवान मौत के मुँह मे पडे हैं। यदि मरीज़ मौत से लडता है तो डॉक्टर को भी उससे कम सघर्ष नही करना पडता।"

इतना सुनकर शुभदा ने गहरी साँस खीची और छोड दी। तभी उसने कहा, "मै नौकरो पर घर छोड आई हूँ। दवाखाना भी नष्ट हो गया। जो काम इन्हे यहाँ करना है वह तो वहाँ भी था।"

सुनकर प्रोफेसर सहज भाव से मुस्कराया। उसने अपनी श्वेत दाढी पर हाथ फेरा और सिर पर खडे पर्वत की ओर देखते हुए कहा, "हाँ, काम तो वहाँ भी था। मरीज थे। जयन्तबाबू की वहाँ भी आवश्यकता थी।" यह कहते हुए उन्होने शुभदा की ओर देखा। तभी धीर भाव मे प्रोफेसर ने फिर कहा, "परन्तु बहू, वहाँ मे और यहाँ मे अन्तर है। वहाँ पैसा है, रोजगार है। वहाँ का मरीज दूसरा डॉक्टर भी प्राप्त कर सकता है। लेकिन यहाँ कौन आयेगा? यहाँ का इन्सान तो आधारहीन है।"

शुभदा बोली, "प्रोफेसर साहब, भगवान यहाँ भी है। वह देखता है। रक्षा का हाथ बढाता है।"

प्रोफेसर ने अपने श्वेत फेनिल सरीखे दाँतो मे हँस दिया और कहा, "हाँ, यह भावना देर से परिचालित है, जो सत्य भी है। परन्तु मुझे तो लगता है, जब मनुष्य की दया यहाँ नही आ पाती, तो वह भगवान भी नहीं आ पाता। इस धरती पर बसा हुआ मनुष्य कितने खानो मे बँटा है, शायद यह तुमने नही समझा। वर्ग-भेद और जाति-भेद पग-पग पर इस इन्सान का रास्ता रोकता है। तुम समझती हो कि दु ख, दारिद्र्य भगवान

देता है। मेरा तो ख्याल है, मनुष्य ही मनुष्य के लिए त्रास का कारण बनता है। और जो दुर्भाव, पीडा और अभाव हम इस जगत से पाते है उसका विकास स्रोत और कही नही, हमारा मन ही है।"

शुभदा ने कहा, "कोई आधार तो हो या कोई कारण ।"

प्रोफेसर ने बीच मे ही कहा, "बेटी, आधार हमारी दुर्बलता है, अज्ञानता है, और कुछ नही।" वह बोले, "मै अनुभव करता हूँ कि तुम भी परेशान हो। भला यह तुम्हारी कैसी विवशता है कि सुन्दर, सुशिक्षित पति पाकर भी, धनी और मातृत्वमयी बनकर भी, तुम अभावभरी हो। तुम अशान्त बनी हो।"

शुभदा ने कहा, "मेरी मन.स्थिति कठोर बन गई है, प्रोफेसर साहब! मै हीन हूँ। कायर बन चुकी हूँ।"

प्रोफेसर ने मृदु स्वर मे कहा, "पर ऐसा क्यो है ?"

शुभदा ने कहा, "मेरी यही कठिनाई है कि मैं नारी हूँ।"

प्रोफेसर बोला, "नही, तुम्हारी कठिनाई यह है कि तुम कमजोर हो, कुछ ईर्ष्यालु हो। शायद दम्भी भी!" प्रोफेसर ने कहा, "शुभदा बेटी, यह तो सत्य है कि मैं नारी का विज्ञान ठीक से नही समझता, लेकिन इतना मै भी मानता हूँ कि यदि कोई नारी या पुरुष अपने कर्तव्य को छोड केवल अधिकार की बात ले तो वह शान्त नही रहेगा। उसके पास जो आत्मानुभूति है उसे न स्वय पा सकेगा न दूसरे को दे सकेगा। इसी से कहता हूँ कि तुम मत भटको, अपना पथ प्रशस्त करो, जीवन का लक्ष्य निर्धारित करो। और इतना समझाने के लिए न ऊँची जाति की आवश्यकता है, न ऊँचे ज्ञान की। केवल चाहिए मन की भावना। और वह तुम्हारे पास है। तुम्हारे इस सुन्दर शरीर मे वह बोलती है। बाहर निकलने के लिए छटपटाती है। किन्तु कठिनाई यह है कि तुम्हारे मन मे जो जहरीला धुआँ घुट रहा है वह चारो ओर फैल गया है। उसमे कुछ दिखाई नही देता। तुम्हारा प्राण छटपटा रहा है।" यह कहते हुए प्रोफेसर ने साँस भरी और और फिर कहा, "जन्यतबाबू मेरे शिष्य रहे है। वे मुझसे कुछ नही छिपाते। उन्होने मुझे एक दिन बताया था कि उनके मन मे ग्लानि है, पश्चात्ताप का धुआँ घुट रहा है कि उन्होने तुम पर पिस्तौल चलाई।"

इतनी देर मे शुभदा की आखो मे आसू आ गये। वे उसके गालो पर बह गये। पास ही दोनो बच्चे बैठे थे। वे शान्त थे। बाते सुन रहे थे। जब प्रोफेसर ने पिस्तौल की बात उठाई, तो तभी, तडपकर शुभदा ने कहा, "वे पुरुष है, बलवान है, मुझे मार सकते है।"

प्रोफेसर ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "नही, नही, जयन्तबाबू अत्यन्त दुर्बल है। वे अपने मन मे भरे पश्चात्ताप को लिए प्राय रोते है। देखती हो न, जयन्तजी आज किस तरह परिश्रमी बन गये हैं। कैसा जीवन बना बैठे है, इस अल्पकाल मे! उनकी सेवा, उनका त्याग और परिश्रम इस क्षेत्र के लिए चिरस्मरणीय बन गया है।"

किन्तु लगता यह था कि उस सध्या के सुहावने प्रहर मे चन्द्रमा के प्रकाश मे बैठी हुई प्रकृति के विराटरूप के समक्ष नत हुई वह सुन्दर शुभदा अपने हृदय पर छाये काले धुएँ मे ऐसे खो गई थी कि जैसे सचमुच ही उस धरती पर उसका कोई अस्तित्व नही रह गया हो। प्रोफेसर अतुल जिस सद्भावना, अपनेपन और नेह भरे स्वर मे अपनी बात कह रहा था शुभदा पर उसका विपरीत प्रभाव पडा। उसे प्रोफेसर की बात से किसी भी प्रेरणा का आभास नही मिला।

लेकिन प्रोफेसर ने तभी फिर कहा, "शुभदाजी, मै देखता हूँ कि तुम अब केवल माँ हो। तुम्हारा वह समय पीछे छूट गया कि जब तुम किसी पुरुष की अनुभूति और नेहभरी आकाक्षा से अनुप्राणित होती थी। अब तो तुम्हारे मानस मे केवल मातृत्व भरा है। एक दिन मेरे भी बच्चे थे, पत्नी थी। पर आज वे सब नही रहे। किन्तु देखती हो, नियति का कैसा व्यापार है कि मैं अपने मे कोई अभाव नही मानता। मै उस नारी या नर को किसी प्राणी का जनक नही देखता कि जो उन्हे पैदा करने का दम्भ करता हो। मैं तो उस व्यक्ति को ही निर्माता मानता हूँ जो उस माँस के लोथड़े को भावना और कला के साचे में ढालता है। मैं तुमसे आज इस प्रकृति के समक्ष बैठकर कहता हूँ कि इस जयन्त के मानस मे व्याप्त भावना को जगाने के लिए मैने कम परिश्रम नही किया। और देखती हो, इस अजना को, क्या थी यह एक दिन, एक निर्धन और क्षुद्र परिवार की बालिका थी। परन्तु जयन्तबाबू ने इस अजना के हृदय मे जिस प्रकाशमयी जोत को

जगाया है वह सचमुच अलौकिक है, दर्शनीय है। यह अजना आज यौवन की भरी दोपहरी मे योग और सेवा का व्रत ले बैठी है। तनिक सोचो तो, यह क्या है ? आज अजना समर्थ है। वह कैप्टन रमाकान्त अपनी जितनी सम्पत्ति छोड गया था वह इसके लिए पर्याप्त थी। उसे भोग सकती थी। परन्तु इस भावनामयी और यौवनमयी अजना ने उस धन का अपने लिए उपयोग नही किया। उसी का प्रतीक यह अस्पताल है। देखती हो, वह दूर खडी कैप्टेन रमाकान्त की मूर्ति ! अजना उसकी पूजा करती है। जिसे जीते जी अपना मनुहार समर्पित नही किया, तो उसकी मृत्यु के बाद अपना सर्वस्व दे बैठी है।"

शुभदा ने क्षुब्ध भाव से कहा, "प्रोफेसरजी, आप जिस पथ की कल्पना करते है वह सबके लिए नही।"

"ओह, निरी भोली बच्ची। मै कल्पना ही नही करता, उसे साकार देखना चाहता हूँ। मै इस जीवन मे सच्चे इन्सानो का निर्माण करना पसन्द करता हूँ।"

उदास भाव से शुभदा बोली, "आपका यह स्वप्न भावनावादी है, यथार्थवादी नही। इस धरती पर सभी योगी नही बन सकते।"

इतना सुनना था कि प्रोफेसर ने विस्फारित बनकर सामने बैठी शुभदा की ओर देखा। आसमान पर चॉद चमक रहा था। उसका चारो ओर प्रकाश था। शुभदा उस चॉदनी मे शुभ्र और मोहक लग रही थी। परन्तु उसकी ओर देखते हुए प्रोफेसर को आभास हुआ कि इस गुलाब रूपी शुभदा मे कॉटा भी है, इस सुन्दर काया के अन्दर अन्धेरा है, अमृत घट के समीप ही विष का भरा कुण्ड है।" इन्ही विचारो मे डूबा हुआ प्रोफेसर गुमसुम बैठा रहा !

तभी शुभदा की लडकी सुधा ने कहा, "अन्दर चलो, माँ !"

लेकिन शुभदा के कानो मे बच्ची की बात नही रेगी। वह विचारो मे खोई थी। उसके मन मे तो उस समय हाहाकार था जो उस शुभदा का मन्थन कर रहा था। अतएव, उसकी यह अवस्था देख प्रोफेसर ने भी समझ लिया कि जरूर यह शुभदा अशान्त है, निर्मम है और कठोर है। यह देखते ही उसने कहा, "शुभदादेवी, नारी का विज्ञान है कि यह सदा से समर्पण

का पाठ पढती आई है। विसर्जन करना ही इस नारी का स्वभाव है। एक नारी अनेक मे बँट जाती है। अपने मानस का कुछ प्यार पति को देती है और फिर जो शेष रहता है वह सन्तानो के ऊपर समर्पित कर देती है। बोलो तो, तुमने क्या दिया। तुम्हारे पति ने तुम से क्या लिया ? क्या भोग वासना ! री, शुभदा, जीवन का यह भैरवराग तो देर से गूँजता रहा है। इस राग के प्रभाव मे जहाँ पुरुष अपने मार्ग से दूर हटा है वहाँ नारी भी ठगी गई है। मै कहता हूँ कि तुम अपने पति और बच्चो को वह सब कुछ दो जो एक विशिष्ट नारी को देना चाहिए।"

एकाएक जैसे चीखकर शुभदा ने कहा, "मै अग्निदाह मे तप रही हूँ, प्रोफेसर साहब ! आप कल्पना नही कर सकते कि मैं कितनी अशान्त हूँ।"

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ, हाँ, मै पूर्णरूप से नही समझ सकता। किन्तु कल्पना करता हूँ कि तुम "

शुभदा ने जैसे तडपकर, रोते हुए कहा, "मै भी नारी हूँ। हाड-मांस से बनी हूँ। मै पत्थर नही हूँ। आपके शिष्य क्यो यहाँ आकर बसे है, मै सहज ही उसकी कल्पना कर सकती हूँ।"

तुरन्त प्रोफेसर ने प्रश्न किया, "भला क्यो ?"

शुभदा ने तडपकर क्षुब्ध भाव से कहा, "क्यो क्या, वह इस अजना के कारण आये है। मै इतना तो देव-स्थान मे जाकर भी कह सकती हूँ।"

प्रोफेसर अतुल इतनी बात सुनते ही सहम गये। वह जैसे उस पथरीली शिला पर पहले के समान बोझीले न बन, पत्ते के समान हल्के हो गये। शुभदा की बात सुनकर वह कातर और पीडित भाव से उसकी ओर देखने लगे।

तभी शुभदा ने फिर कहा, "मै पूरे विश्वास के साथ कह सकती हूँ कि आपके शिष्य डाक्टरसाहब विवाह करके भी इस चमार की लडकी अजना को नही भूल सके। देखती हूँ कि आज वह अजना समर्थ है, विशिष्ट है, तो स्वभावत ही उसके प्रति उनका आकर्षण और बढा है।"

एकाएक काँपते स्वर मे प्रोफेसर अतुल चीख पडे, "शुभदा ··मूर्ख !"

लेकिन शुभदा ने जैसे पूर्णरूप से तत्पर बनकर फिर कहा, "मै समझती हूँ कि आपके योग्य शिष्य को आपका भी प्रोत्साहन मिला है।"

सचमुच प्रोफेसर कॉप रहा था। क्रोध उसकी छाती से सरक कर आँखो मे उतर आया था। प्रोफेसर के समीप ही पत्थर का टुकडा पडा था, उसके मन मे आया कि उसे उठा ले और सामने बैठी अप्सरा के तुल्य लगती शुभदा के मुँह पर खेच मारे। किन्तु ऐसा करना तो उसके लिए विवेकहीन था। वह इतना मूर्ख नही था।

तभी शुभदा बोली, "प्रोफेसर साहब आप मेरे पिता समान है। आपका ज्ञान और अनुभव बडा है। परन्तु आप खुद ही सोचिये कि मै अपने पति को खोकर क्या चैन पा सकती हूँ? आज मेरे बच्चे अनाथ है। मेरा घर बिगड गया है। मेरे घर मे जो प्रतिदिन की आय होती थी वह नष्ट हो चुकी है। उस गाँव के समाज मे मेरा जो सम्मान था वह धूल मे मिल चुका है। मै सभी की दृष्टि मे उपेक्षा की पात्र हूँ। अब सभी कहने लगे है, गॉव के नर-नारी मेरे मुँह पर सुनाकर बताने लगे है कि आखिर अजना की जीत हुई, मेरी हार और आप तो जानते ही हे कि मैने कोई पाप नही किया, दुराचार नही किया। मै एक पति की पत्नी हूँ। उसीसे अपना अधिकार माँगने आई हूँ। मुझे यहॉ आये चार दिन हो गए है, किन्तु उन्होने न तो मुझसे बोलने की इच्छा की और न ही बच्चो को दुलारने की। बताइए, क्या मै पत्थर हूँ? आपको मेरी बात असगत तो लगेगी, परन्तु कहे देती हूँ कि ऐसे तिरस्कृत जीवन से तो मैं मौत श्रेयस्कर मानती हूँ। अब मैं वही पाना चाहती हूँ।"

यह सुनते ही प्रोफेसर खडा हो गया। उसने हाथो की मुट्ठियॉ बॉध ली और घूमने लगा। उस समय सर्दी बढ चली थी। फिर वह धीरे-धीरे अपने शयन-कक्ष की ओर बढ गया। उसके पीछे ही शुभदा ने बच्चो को साथ लिया और कमरे मे चली गई।

बाईस

उस रात प्रोफेसर अतुल की मानसिक स्थिति जितनी भयावह और करुण दिखाई दी उतनी कभी देखने को नही मिली थी। आधीरात से पूर्व ही अजना और जयन्त अस्पताल मे लौट आये थे। जयन्त कई दिन का थका था। रातो-रात जागा भी था। अतएव, अपने डेरे पर आकर कटी डाल की तरह वह पड गया और सो गया। परन्तु अजना जब अपने कमरे मे पहुँची तो वह यह देखकर चकित हुई कि शुभदा उस रात के भरे प्रहर मे भी जाग रही है। वह अपने विस्तर पर बैठी हाथ की हथेली पर ठोढी रखे थी और सामने जलते हुए दीपक की ओर एकटक निहार रही थी। वहाँ पहुँचते ही अजना ने उसे टँकोरा तो वह चौक गई, जैसे पहाड से नीचे गिर गई हो।

यह देख सहज भाव से मुस्कराकर अजना बोली, "क्यो शुभदाजी, तुम्हारे मन मे कोई गहरी बात है ? रात तो अधिक हो गई है, लेकिन आप अभी सोई नही !"

इतनी बात सुनकर भी शुभदा मौन बनी रही। उसने साँस भरी और अपना मुँह अजना की ओर उठा दिया। उसने देखा कि वह अजना साधुनी का वेश धारण किये कितनी अलौकिक है। अब जाने कितनी दूर से आई है, फिर भी चेहरा चमक रहा है। यौवन का तेज छलक रहा है। तभी उसके मन मे बात आई कि एक वह है जो यौवन की भरी दोपहरी मे ही मुरझा गई। बुढिया हो गई। भला ऐसा क्यो ?

शुभदा कुछ कहती कि तभी अजना ने बताया, "जयन्त बाबू भी आ गए है। अपने कमरे मे गये है।" वह बोली, "इस बार जयन्तजी ने बडा परिश्रम किया है। मौत से भी भयभीत नही हुए। गाँव के कई व्यक्तियो को मौत के मुँह से निकालकर सच्ची मानवीयता का परिचय दिया। मै कल उन्ही के साथ गई थी। मै सोचती थी कि तुम आई हो, तो जाने क्या कहोगी कि मैं आई और मेरा पति बाहर भेज दिया गया। खैर अब तुम आई हो तो उन्हे वापिस ले जाना। जयन्तबाबू के जाने से अस्पताल का काम तो विगडेगा, लोगो का एक बडा सहारा छूटेगा, पर किया क्या जाए।

उन पर अधिकार तुम्हारा है, वे तुम्हारे है। तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध चलकर क्या वह अपने सकल्प मे पूरे उतर सकते हैं, कभी नही !"

उसी समय अस्पताल का कर्मचारी दौडा हुआ आया और अजना से बोला, "प्रोफेसर साहब की हालत खराब है। उनकी छाती मे दर्द उठ रहा है। चलिए, शीघ्र चलिए !"

सुनते ही अजना चीख पडी, "प्रोफेसर साहब " तुरन्त प्रोफेसर के कमरे मे पहुँची, तो देखती है कि जयन्त ने प्रोफेसर को एक इन्जेक्शन लगाया है। अजना को देखते ही उसने कहा, "इनके दिल मे दर्द हुआ है। चिन्ता की बात नही।"

अजना ने कहा, "यह तो चिन्ता की बात है। इनका नया रोग है।"

लेकिन जयन्त ने कोई उत्तर नही दिया।

उसी समय प्रोफेसर ने आँखे खोली, सभी की ओर देखा। अजना के पीछे शुभदा खडी थी, वह उसी को लक्ष्य करके बोले, "आओ बेटी ! बैठो।"

शुभदा पास आ गई और बैठ गई। उसने पूछा, "आपको क्या हुआ ?"

प्रोफेसर ने धीरे मे कहा, "कुछ नही। दिल घबडाया था। मै आज अनजाने ही पीडित बन गया था। तुम अभी सोई नही ?"

अजना ने कहा, "मै जब आई थी तो ये जाग रही थी।"

उसी समय प्रोफेसर ने जयन्त की ओर देखा। उसका हाथ पकड लिया और कहा, "जयन्तजी, एक बात कहनी है। अवसर की बात है कि तुम सभी यहाँ हो। सुख का विषय है कि मेरे प्रति तुम लोग अनुराग रखते हो। सो भाई, अच्छा यह है कि तुम अपने गाँव लौट जाओ। सेवा का क्षेत्र वहाँ भी है। समझते हो न, यह शुभदादेवी तुम्हे लेने आई है। इनका तुम पर अधिकार है।"

जयन्त ने कहा, "यह बताइये कि इस समय आपकी तबीयत कैसी है ? यह एक गोली भी ले लीजिए।"

प्रोफेसर ने कहा, "भैया, मै अब बूढा हूँ। कभी भी जा सकता हूँ। मुझे इसकी चिन्ता नही कि कैसे मरूँगा।"

जयन्त ने कहा, "मरने की चिन्ता करना व्यर्थ है।"

प्रोफेसर ने कहा, "लेकिन मनुष्य इसी भय से उत्पीडित रहता है। वैसे तो मनुष्य एक दिन मे जाने कितने बार मरता है।" वह बोले, "अब तुम सभी सो जाओ। आराम करो। शुभदा बेटी तुम भी !"

शुभदा ने कहा, "ये लोग जा सकते है। थके है। मैं बैठती हूँ !"

तब जयन्त और अजना चले गए। जब शुभदा उस कमरे मे अकेली रह गई तो प्रोफेसर ने तकिये के नीचे से निकालकर उसके हाथ पर बटुआ रखा और कहा, "इस अस्पताल का जमादार ईमानदार है। यह बटुआ तुम्हारे कमरे के सामने पडा था। उसे मिल गया। देख लो, इसमे रखे रुपये पूरे तो है ?"

शुभदा ने बटुआ देखा, तो ले लिया।

किन्तु प्रोफेसर ने तभी एक पुडिया दिखाते हुए कहा, "और यह पुडिया भी इस बटुए मे थी। भाग्य से मै डाक्टरी पढा हूँ तो सहज ही समझ सकता हूँ कि इस पुडिया मे क्या है। बोलो, तुम्हारे मन मे क्या आया था। क्या अपने पति को यह जहर देना चाहती हो, या अजना को, या स्वय अपने को ।"

एकाएक शुभदा चीख पडी, "प्रोफेसर साहब "

प्रोफेसर ने कहा, "चिन्ता न करो, शान्त बनो। मैं तुम्हारे मन की स्थिति समझता हूँ। लेकिन तुम इतनी कातर, भयावह और कठोर बन सकती हो, मै इसकी कल्पना नही कर सकता था। एक सुन्दर नारी ऐसा दुस्साहस कर सकती है, मै सोच भी नही सकता। बोलो, यह विचार कैसे आया, तुम्हारे मन मे !"

शुभदा ने कहा, "प्रोफेसरजी, मैं मरना चाहती हूं।"

प्रोफेसर ने कहा, "देखो, मेरे दिल को पीडा मिली है। अभी कुछ क्षण पूर्व मौत मेरे जीवन का द्वार खटखटा कर लौट गई है। पर यह बताता हूँ कि इस जहर की पुडिया ने मुझे सब कुछ बता दिया है कि तुम्हारे मन मे क्या है।"

शुभदा का सिर प्रोफेसर के पैरो पर गिर पडा। उसने रोना आरम्भ कर दिया।

यह देख, तत्क्षण ही, प्रोफेसर उठ खडा हुआ और शुभदा के सिर पर

हाथ रखकर उसे सहलाता हुआ बोला, "तुम सरीखी कोमल और मनोरम मेरी बिटिया भी थी। सच, तुम वही हो। मेरी रमा की आत्मा तुम मे है। मैं तो तुम्हारे पिता की आयु से भी बडा हूँ। इसलिए मुझमे दुराव क्यो ! मुझे लगता है कि भगवान तुम्हारा सहायक है। तुम अपने जीवन मे एक भयानक अपराध करने जा रही थी, पर उस प्रभू ने रोक दिया। इन दोनो मे से यदि एक भी तुम्हारे द्वारा मारा जाता तो नि सन्देह, तुम्हारा जीवन नष्ट हो जाता। भले ही कानून की तलवार तुम्हारी गर्दन पर न पडती, परन्तु जो भगवान तुम्हारे मन मे बैठा है वह नित्य-प्रति धिक्कारता, तुम्हारे जीवन का प्राण तोडता।"

"मै क्षमा माँगती हूँ, प्रोफेसर साहब ! अपना अपराध स्वीकार करती हूँ।" अपनी वे पीडित और कातर आँखे ऊपर उठाते हुए शुभदा ने कहा।

किन्तु प्रोफेसर ने उन्ही आँखो को देखते हुए नितान्त सदय भाव से कहा, "न बेटी ! चिन्ता न करो। भूचाल उतर गया। तुम्हारे मन मे जो कुछ आया, वह भी स्वाभाविक था। ईश्वर की कृपा है कि मै भी बच गया। तुम्हारे पति ने बचा दिया। जयन्त योग्य और अनुभवी है। कुछ चुनी हुई दवाएँ रखता है। वह डाक्टर बनकर ही जन-सेवा का व्रत पूरा करता है।'

शुभदा ने कहा, "प्रोफेसर साहब, मैं अब उनसे कुछ नही कहूँगी, उन्हे बाँधकर नही रखूँगी। आज रात मैने यही निश्चय किया है।"

इतना सुनकर भी प्रोफेसर के मुँह पर प्रसन्नता नही आई वह मौन बना रहा।

शुभदा ने कहा, "मै सोचती थी कि जल्दी यहाँ से लौट जाऊँगी। परन्तु अब तो मन मे आता है कि मै भी कुछ करूँ। जन-सेवा मे लग जाऊँ।"

किन्तु प्रोफेसर तो गम्भीर बना था। उसके माथे मे सलवटे पडी थी। दुर्बल और पतले होठ भी सूखे थे। वे बार-बार हिल रहे थे।

शुभदा बोली, "सध्या समय आपको जो कुछ कहा उसका भी मुझे दुख है।"

प्रोफेसर ने कहा, "अब मुझे कुछ याद नही। जाओ, तुम आराम करो। तुम स्वय निर्णय करो कि तुम्हारा उचित कर्म क्या है।"

शुभदा खडी हो गई और अपने कमरे की ओर चल पडी। किन्तु जब वह अपने कमरे के समीप पहुँची तो उसके मन की ऐसी स्थिति बनी कि जैसे अपराधिनी के रूप मे अब उस अजना के समक्ष जाएगी। अतएव, उसके पेर लडखडाए, मन मे भय पैदा हुआ। श्वास भी अवरुद्ध हुआ। आखो के आगे अँधेरा हो गया। अपने मन की इस अवस्था को लिए जब वह कमरे मे प्रविष्ट हुई तो देखती है कि अजना उसके बिस्तर पर बैठी हे और उसकी लडकी के भूरे और मुलायम बालो पर हाथ फेर रही हे।

देखते ही अजना बोली, "मुन्नी जाग पडी थी। अभी-अभी सोयी है।"

शुभदा ने कहा, "तुम्हे कष्ट हुआ। इतना समय भी जागने मे कट गया।"

अजना अपने बिस्तर पर जा बैठी, फिर पड गई। तभी वह बोली, "जाने कतनी राते मैने खडे पलको पर बिता दी हे। अब मेरा ऐसा ही स्वभाव बन गया है।" उसने कहा, "तुम्हे पता नही इन चार दिन की रातो मे जयन्तबाबू को भी आराम नही मिला।" यह कहते हुए अजना ने अपने ऊपर चादर डाल ली और सोने का प्रयत्न करने लगी।

किन्तु अपने बिस्तर पर पडी हुई शुभदा जाग रही थी। उसकी आँखो मे नीद नही थी। जब वह देर तक बिस्तर पर पडी रही तो बलात् उठ बैठी और चादर ओढ कर कमरे के बाहर चल पडी। रात मे वह जिस पत्थर पर जाकर बैठी थी उसी पर गई। उस समय आकाश मे चन्द्रमा नही था। वह पहाड की ओट मे हो चुका था। इसलिए चारो ओर अन्धेरा था। किन्तु प्रातः की अरुणिमा पूरब की ओर से उभर आई थी। दूर पर प्रवाहित नदी या झरने के पास चकवा-चकवी बोल रहे थे। उस समय शान्त और सुहावना मौसम था। ठण्डी और भीनी-भीनी हवा चल रही थी। यद्यपि शुभदा ने गरम दुशाला ओढ रखा था, परन्तु उसे ठण्ड लग रही थी। वह ठण्ड बाहर की भले ही न हो, अन्दर की अवश्य थी। फलस्वरूप, शुभदा के मन मे कम्पन था। प्रोफेसर अतुल ने उसके बटुवे से जिस पुडिया को निकाल कर देख लिया, मानो वही शुभदा के मन का चोर था। उस चतुर प्रोफेसर ने सहज ही इस बात को समझ लिया कि उस पुडिया मे रखे जहर का उपयोग

किसी-न-किसी पर अवश्य होता शायद अजना पर···

किन्तु अजीब बात थी कि उस ठण्डी हवा के चलने से छाती के नीचे कम्पन की हिलोरे आने के बाद भी, शुभदा के माथे पर पसीना था। उसका सिर घूम रहा था। उस अवस्था मे ही उसने होठ फडफडाये और अपने आप कहा, तो इसमे झूठ ही क्या था। मैं इस अजना को विषबेल समझ बैठी थी, इसे जड से उखाडना था।

"शुभदाजी!" एकाएक प्रोफेसर का स्वर सुन पडा। शुभदा ने पीछे फिर कर देखा कि वह वृद्ध तथा सन्यासी के समान लगता हुआ प्रोफेसर उसके पीछे आकर खडा है। वह मुस्करा रहा है।

प्रोफेसर ने कहा, "लगता है, रात तुम्हे नीद नही आई। मन की बात मन मे ही रही, जो तुम्हे परेशान करती रही!"

शुभदा उठ खडी हुई। उसने सिर झुका लिया, कुछ बोल नही सकी।

प्रोफेसर ने कहा, "आओ, कुछ आगे चले। चल सकोगी न, उस नदी तक।"

शुभदा ने कहा, "चलिये।"

प्रोफेसर के हाथ मे डण्डा था। उसका वह समय घूमने का था। जब वह शुभदा को साथ लेकर आगे बढा तो बोला, "कैसे सयोग की बात है कि अन्य दिन जयन्तबाबू साथ होते थे आज तुम हो। यह भी शुभ बात है। निश्चय ही रात तुम्हे नीद नही आई। मुझे यह देखकर सुख मिला कि तुमने अपनी भूल को स्वीकार कर लिया। और बेटी, भूल करना इसान का ही काम है। वह आदमी अन्धा और मूर्ख है कि जो रात भर अपने कर्म को अकर्म समझकर भी सचेत न हो जाये। इस रात जगने का अर्थ ही यह है कि तुमने अपने को सचेत कर लिया है। तुमने यह समझने का प्रयत्न किया होगा कि अब तुम्हारा कर्तव्य क्या है। देखो, बचकर चलना। नीचे खाई गहरी है। पथ अँधियारा है। इस सँकरी पगडण्डी पर चलता हुआ अभी कुछ दिन हुए एक मुसाफिर इस खड्ड मे गिर पडा था। और जानती हो, वह मुसाफिर कौन था, प्रसिद्ध चोर! खूनी। उस दिन भी वह कही से चोरी और खून करके बहुत सा माल ले आया था। देखो, कैसी विवशता है इस इसान की कि कानून और समाज से बचकर भी मनुष्य भगवान के

नियन्त्रण से नही छूट पाता। यही सबकी बात है। मेरी और तुम्हारी बात है। आओ, इस रास्ते से चलो। वह सामने नदी है। इस नदी का पानी भी बडा निर्मल है। जाने हिमालय पर्वत की किस ओट से निकलकर इस नदी मे जल आता है। यह नदी जाने कितने मानवो का उद्धार करती है, नया जीवन प्रदान करती है। पर एक मनुष्य है, हम-तुम है, ऐसे अनेक है कि जो जीवन के निपट अन्धकार मे पडे नित-नित खोते जा रहे है, भटके पथिक के समान अन्धकार मे ही विलीन होते जा रहे है, हम लोग।"

वे दोनो नदी-तट पर पहुँच गए। आकाश निखर आया था। पक्षी उडने और चहचहाने लगे थे। कुछ पक्षी उस नदी के जल मे डुबकियाँ लगाकर परस्पर किलोल करने लगे थे। उसी निर्मल जल की अजलि भरकर, पीते हुए और मुँह तथा आँखे धोते हुए शुभदा ने कहा, "बडा ठण्डा जल है, एकदम बर्फ के समान है।"

प्रोफेसर मुसकराया, "यही इसकी विशेषता है।"

शुभदा ने फिर कहा, "प्रोफेसर साहब, पर यह आदमी गरम है, ईर्षित है, आग का अगारा है।"

सुनकर प्रोफेसर गम्भीर बन गया और बोला, "हा, यही इन्सान की हीनता है।"

"परन्तु क्यो ? किसलिए ?" एकाएक शुभदा ने प्रश्न किया।

प्रोफेसर ने सीधे-स्वभाव मे कह दिया, "अपने से पूछो। तुम भी तो आग हो, जलना और जलाना जानती हो।"

तेईस

प्रोफेसर से वह अप्रत्याशित बात सुनी, तो शुभदा का चेहरा लाल हो गया। उसकी आँखे चढ गई, मुँह सुर्ख हो गया। उससे एकाएक कुछ कहते नही बना। उसने नितान्त कातर भाव मे, अपने मुँह मे आया

थूक सटक लिया। उस अवस्था मे ही, शुभदा ने तेज धारवाली नदी पर अपनी आँखो को पसार दिया।

किन्तु प्रोफेसर ने फिर कहा, "बिटिया, झूठ नही कहता, नारी भी आग है, ईर्ष्या का भण्डार है। मै रात देर तक इसी बात पर टिका रहा। मैं सोचता रहा कि भगवान ने तुम्हारे ऊपर बडी कृपा की। तुम जीवन मे एक भयानक पाप करने चली थी लेकिन भगवान के आदेश पर तुम्हारी वह इच्छा व्यर्थ गई। इस धरती के दो सुन्दर प्राणी बच गये। उनसे समाज को जो कुछ मिलता था अब भी मिलता रहेगा। बोलो तो, तुम्हारी उस ईर्षा-मयी आग मे क्या अजना न जलती वह जयन्त नही "

एकाएक चीखकर शुभदा ने कहा, "प्रोफेसर साहब, मै अपराधिनी हूँ। कहे तो इस नदी मे डूब जाऊँ। जो बात आपने रात मे कही, वह अब भी ·· ओह! कितनी निर्मम और कठोर प्रतारणा है, आपकी!"

प्रोफेसर सूखे भाव से मुस्कराया, "बेटी, मैं जानता हूँ, तुम मरना नही चाहती, अभी तुम्हे जो कुछ भोगना है वह तो भोगना ही पडेगा। इस प्रभात की बेला मे, रात की बात फिर कहने का मेरा मन्तव्य यह है कि तुम्हारे मन की ग्लानि धुल जाए। तुम अपने हृदय की बात कहो कि तुम्हारी क्या आकाक्षा है। बोलो, जयन्त क्या अजना की मौत ·।"

मानो तडपकर शुभदा ने कहा, "प्रोफेसरजी, मै कुछ नही चाहती · सच, अब कुछ नही।"

किन्तु प्रोफेसर ने तब भी कहा, "नही, तुम्हारे मन मे कुछ है। अपने अधिकार की बात है। यह दुनिया अपना अधिकार पाने के लिए सभी-कुछ करती है। और मुझे पता है, जहाँ तरल है, वहाँ वज्र के समान कठोर भी है।"

शुभदा ने साँस भरकर कहा, "अब मैं शान्ति चाहती हूँ। मर जाना भी पसन्द करती हूँ।"

"ओह, नादान औरत! तू इस सुन्दर काया को मिट्टी मे मिला देने की बात करती है!" प्रोफेसर ने क्षुब्ध भाव मे कहा, "कभी सोचा, इस काया को सँजोने के लिए तुम्हारे माँ-बाप ने कितना कष्ट उठाया होगा! भगवान ने किस ममता से इस सुन्दर ढाँचे का निर्माण किया होगा। जब जीवन

तुम्हारा नही तो मौत भी तुम्हारी नही।"

शुभदा ने कहा, "तो मै क्या करूँ ! मै परेशान हूँ। सचमुच, मै अपने मन की आग मे ही जल जाना चाहती हूँ।"

बात सुनी तो प्रोफेसर इच्छा करके भी हँस न सका, अपितु नदी की गहराई मे आँख गडाकर उसने कहा, "मै कहता था न, तुम्हारे मानस मे शीतलता नही, आग भरी है। वह तुम्हे झुलसा रही है। वह आग किसी दूसरे को भी अपनी लपटो मे समेट लेने के लिए नागिन की तरह जीभ लपलपा रही है।"

शुभदा देर से खडी थी। वह थक गई। पास के पत्थर पर बैठकर नदी के पानी मे हाथ देती हुई उसे खलबलाने लगी।

प्रोफेसर ने कहा "शुभदारानी, तुम्हे उदार बनना चाहिए। तुम्हारा पति यदि किसी दूसरी नारी के सम्पर्क मे पहुँचता है, तो जाने दो। तुम अपना मार्ग देखो। यद्यपि तुम्हारी जो शका है, वह निर्मूल है, लेकिन यदि ऐसा हो तो तुम्हे आपत्ति क्यो ! दो हृदय यदि अपनी भावना एक-दूसरे के समक्ष रखना पसन्द करते है, तो तुम्हे उससे विराग क्यो ! ईर्ष्या क्यो !"

शुभदा ने कहा, "मै आपत्ति नही करती। क्षोभ या ईर्ष्या भी नही।"

प्रोफेसर ने कहा, "करती तो हो, परन्तु करनी नही चाहिए। तुम्हे देखना चाहिए कि यह विश्व आत्म-समर्पण की एक कहानी हे। चिरपुरातन से यही चला आया है। बोलो तो, जिस समाज मे तुम पैदा हुई उसे अब तक क्या दिया, शायद कुछ नही। और जानती हो, लो और दो के व्यापार पर ही यह ससार टिका है। तुमने पत्नित्व और मातृत्व पाया है तो इसके प्रतिरूप मे दिया कुछ नही।"

शुभदा ने अपना सिर घुटनो पर रख लिया और कहा, "मै क्या करूँ, प्रोफेसर साहब ! मै असहाय हूँ, दुखी हूँ।"

प्रोफेसर आगे बढा और शुभदा के झुके हुए सिर पर हाथ रखकर बोला, "शुभदारानी, यह दुख तुम्हारे मन से पैदा हुआ हे। तुम भी वही रास्ता अपनाओ कि जो तुम्हारे पति और अजना ने स्वीकार किया है। वह सेवा का मार्ग सरल है, निस्पृह है, मानवता का प्रतीक।"

शुभदा ने कहा, "तो मुझे भी उस मार्ग पर ले चलिए, मेरे मन मे भी

वह प्रकाश फैला दीजिए।"

प्रोफेसर ने कहा, "तुम्हारे लिए अजना अधिक सहायक बनेगी। वह उदार है। उसकी आत्मा कोमल है, प्रकाशमान है।"

उसी समय प्रोफेसर ने देखा कि अजना और जयन्त उसी ओर बढे आ रहे है। वे दोनो शुभदा के बच्चो को भी गोद मे उठाये ला रहे हैं। वे पास आ गये।

अजना ने कहा, "मै समझती थी कि आप यही होगे।" उसने बैठी हुई शुभदा की ओर देखकर कहा, "और तुम शुभदाजी, बच्चो को सोता छोड़ आई। ये उठे और माँ-माँ करके रोने लगे।"

हॅसकर प्रोफेसर ने कहा, "तो इसमे आपत्ति क्या! तुम तो थी।"

अजना ने कहा, "हाँ मै थी, पर इतनी सिद्धस्थ कहाँ कि रोते बच्चे को चुप करा दूँ। यह तो जयन्तजी थे, अपने पिता को देख बच्चे चुप हो गये।" यह कहते हुए उसने लडकी सुधा को गोद से उतारा और शुभदा के पास खडी कर दिया। जयन्त ने भी लडके ललित को उतार दिया।

उसी समय प्रोफेसर ने कहा, "अब बना है हमारा पूरा ससार। बिना बच्चो के क्या कुछ अच्छा लगता है? बडा आदमी तो अपनी बुद्धि का उपयोग करता है, गलत दिशा चुनता है। वह दूसरो के लिए तो परेशानी पैदा करता है, अपने लिए भी खाई खोदता है। पर ये बच्चे ये सरल · ये परमात्मा के रूप "

दोनो बच्चे खेलने लगे, भागने लगे। वे हँसने और शोर करने लगे।

जयन्त ने कहा, "यह सभी माया है। जीवित मोह है।"

प्रोफेसर बोला, "सो तो है ही। परन्तु इससे अरुचि क्यो! इन्ही बच्चो मे तो विश्व के नियन्ता के दर्शन होते है। और यह अजना भी क्या जाने कि बच्चो के पालन-पोषण मे कितना कष्ट मिलता है, कितना सुख।"

हँसकर अजना ने कहा, "जी, यह तो तथ्य है। मै अनभिज्ञ हूँ।"

प्रोफेसर ने कहा, "इस ज्ञान का पाठ तुम शुभदा से प्राप्त कर सकती हो। वह माँ है। इस रहस्य को समझती है।"

उसी समय बच्चे खेलते हुए दूर निकल गये थे। जयन्त ने आवाज दी, "अरे, कहाँ जाते हो! इधर आओ।"

प्रोफेसर ने कहा, "खेलने दो, भागने दो।"

किन्तु उमी समय दूर पर गई लडकी सुधा चीख उठी, "मा!"

शुभदा चिल्लाई, "अरी, क्या है!"

उसी समय जयन्त के मुंह से बरबस ही फूट पडा, 'ओह, सुधा!" और वह प्रोफेसर के हाथ से डण्डा ले उसी ओर दौड पडा। क्षणभर मे बात सभी ने समझ ली और प्रोफेसर ने सहमे हुए स्वर मे चीत्कार किया, "अजगर!"

नि:सन्देह एक बडा अजगर उन बच्चो को देख एक बडी चट्टान के नीचे से निकला और उनकी ओर बढा। उसी को देखकर सुधा ने चिल्लाया था। अजगर ने उस सुधा को पकडकर अपने मुँह मे ले लिया होता कि उसी समय जयन्त ने डण्डे का भरा हाथ उस अजगर के मुँह पर दे मारा। अजना ने एक बडा पत्थर उठाया और अजगर पर पटक दिया। उसी समय शुभदा ने दौडकर लडकी को उठा लिया और छाती से चिपका लिया। इतनी देर मे चुटीला बना अजगर फिर पत्थर की शिला के नीचे सरक गया। किन्तु उस एक क्षण मे जो कुछ वहाँ हो गया उसकी विपमता को सहज भाव से सभी ने अनुभव किया। अजगर का भयानक मुँह उस नालिका से दो-तीन फुट की दूरी पर रह गया था। यदि एक क्षण और बीतता तो वह उस बच्ची को पकड लेता और अपने विशाल मुँह मे देकर सटक जाने का प्रयत्न करता।

उसी समय एक लम्बी साँस लेकर प्रोफेसर ने कहा, "इस ससार मे सभी एक-दूसरे के शत्रु हैं। इस प्रभातकाल मे हमे एक बार फिर यह समझने और देखने का अवसर मिला कि होता वही है,जो भगवान कराता है। हमारी आँखो के समक्ष ही एक बडा काण्ड हो जाने वाला था कि उस परमपिता ने समय पर रक्षा की। यह बेचारी अबोध बालिका बच गई।"

जयन्त ने देखा कि शुभदा की आँखो के आँसू उसके मुंह पर उतर आए है। वह कातर है। इतना प्रोफेसर और अजना ने भी देखा। तभी पास आकर अजना ने कहा, "अब उठो, चलो।"

जयन्त मौन था। गम्भीर बना था। उसने लडके ललित की उंगली पकड ली और चल दिया। प्रोफेसर सबसे पीछे था। हाथ मे डण्डा लिए

वह धीरे-धीरे चल रहा था। जब शुभदा और अजना आगे बढ गई तो तभी जयन्त को टकोर कर प्रोफेसर ने रुकने को कहा। पास आकर उन्होने जयन्त के कन्धे पर अपना हाथ रखा और कहा, "जयन्तजी, भला यह कैसी अशुभ बात है कि शुभदा आई और तुमने एक बार भी कुशल-समाचार नही पूछा। अच्छा यही है कि अब तुम अपने गॉव जाओ। शुभदा की उपेक्षा करना न उचित है, न माननीय है। सामाजिक रूप से तुम उससे बँधे हो। यह तो समझते ही हो कि वह यहाँ क्यो आई है?"

जयन्त ने कहा, "सब समझता हूँ।"

प्रोफेसर ने फिर पूछा, "तो निर्णय क्या किया? यह पत्नी ये बच्चे तुम्हारा ससार तो सचमुच ही जुदा बन गया है, जयन्तजी!"

जयन्त ने कहा, "मेरी दुनिया बदल गई है।"

सुनकर प्रोफेसर ने एकाएक अपनी राय ज़ाहिर नही की। किन्तु जब वे पहाड पर चढने लगे तो तभी प्रोफेसर ने रुककर जयन्त को रोकते हुए कहा, "जयन्त भाई, मे अनुभव करता हूँ कि सभी समान नही बनते। शुभदादेवी का अपना स्थान है, उसकी अपनी परम्परा है। तुम्हे यो सेवाभाव मे लिप्त होना था, तो ऐसी ममतामयी शुभदा को अपनी अर्द्धांगिनी बनाने का प्रयत्न नही करना चाहिए था। अब तो एक सरल और ममताभरे जीवन के साथ धोखा होगा। तुम अपने अधिकार और स्वार्थ की बात जहाँ सोचते हो, वहाँ यह भी तो देखो कि उसका भी कोई अधिकार है। नारी रूप मे उसकी भी कुछ आकाक्षाएँ है, मान्यताएँ हे। जयन्तजी, तुम इस बात को छुपा नही सकते कि तुम्हे नारी की भूख थी। अब वह भूख तृप्त हुई, तो उस नारी के पास से भागते हो।"

जयन्त ने कहा, "प्रोफेसर साहब, मै दलदल मे फँस गया हूँ। मैं सोचता हूँ कि मुझे विवाह नही करना चाहिए था।"

प्रोफेसर ने अपने स्वर पर जोर देते हुए कहा, "नही, नही. विवाह तुम्हे करना था। और जानते हो, मेरे मन मे यह भी बात है कि यह अजना तुम्हारे द्वारा तिरस्कृत न की गई होती तो आज इसका जीवन भी कितना सुखमय होता। तुम समझते हो न, यह नारी वसुन्धरा है। यह अपनी कोख से ककड भी उगलती है और हीरा भी। आज तुम्हारी बच्ची जिस समय

अजगर के मुँह के सामने पडी, तो मैने यह भली प्रकार देखा कि शुभदा के समान, यह अजना भी मर्माहत बन गई थी। उसकी चीख बडी भयावह थी। पर तुमने अजना के साथ तो पाप किया ही, अब शुभदा के साथ भी करने चले हो। भला क्यो? किसलिए? इसलिए कि अजना आज तम्हारी दृष्टि मे श्रेष्ठ है। यहाँ अजना है तो तुम यहाँ रहना पसन्द करते हो। इस सन्यासिनी कुमारी के पास! मै समझता हूँ यह भी तुम दोनो की मूक वासना की एक प्रकार से पूर्ति है। सन्तोष करने का अवलम्ब है। परन्तु इसकी जो प्रतिक्रिया है, जो कि भयकर है,वह क्या अभी दिखती है? उसकी क्या सहज मे कल्पना हो सकती है? न, अभी नही।" यह कहते हुए प्रोफेसर चल पडा।

आश्चर्य कि उस अवस्था मे जयन्त मौन था जैसे पत्थर हो। वह यह सुनकर भी चकित नही बना कि वृद्ध प्रोफेसर ने ठीक वही बात कही जो जयन्त के मन मे थी। मानो उसके मन का वह चोर जयन्त ने पकड लिया हो। इसलिए वह एक अभियुक्त के समान, प्रोफेसर के साथ चला। जब वे दोनो अस्पताल के समीप पहुँचे, तो तभी अपने कमरे की ओर जाते हुए प्रोफेसर ने कहा, "जयन्तजी, मै अब यहाँ से जल्दी चला जाऊँगा। लेकिन जाने से पूर्व, मैं यह देखकर सुख मानूँगा कि शुभदा बहू के मन को कष्ट न हो। वह सुखी हो। आज उसे जिस प्रकार की पीडा मिली, एक क्षण मे उसकी आत्मा जिस प्रकार दर्द से कराही, वह हम सभी के लिए शिक्षादायक बात थी। मुझे यह देखकर भी सन्तोष नही होता कि अजना ने जो मार्ग चुना है, वही उसके लिए शुभ है। वह विषम तथा कठोर है। ऐसी कोमल युवती ने असमय ही अपने आपको सेवा और योग की भट्टी मे झोक दिया है। यह त्याग इस युवती से निभे, अब यही श्रेयस्कर है। कभी मेरे मन मे यह बात भी आती है कि इस अजना का किसी योग्य डाक्टर से विवाह करा दिया जाए। परन्तु अभी इस अजना के मन मे ऐसा नही आता। उसे नही रुचता। मैने समझ लिया है, तुम्हारे अतिरिक्त उसे किसी मनुष्य मे अनुराग नही लगता।"

जयन्त ने कहा, "अजना विवाह नही करेगी।"

प्रोफेसर ने फिर अपनी वाणी पर जोर दिया, "वह क्यो नही करेगी,

यह भी जानते हो ? उसका कोई और कारण हो या नही, परन्तु एक तुम अवश्य हो। तुम्हारी उपेक्षा ने अजना के मन को चोट पहुँचाई है। तुमने उसके हृदय मे जिस भावना का अकुर बोया, उसे स्वय ही उखाड दिया। जिसने उसे जीवन दिया उसी ने उसका सर्वस्व छीन लिया।

एकाएक जयन्त बोल पडा, "नही प्रोफेसर साहब। मैने अजना को ठगा नही। उसने स्वय मुझे छोडा। मेरा त्याग किया। मै समझता हूँ, उसके माता-पिता ने भी बाध्य किया।" उसने कहा, "पर अब अजना ने जो मार्ग ग्रहण किया है, उसमे पीछे लौटना भी अशुभ होगा। उसे स्वीकार नही होगा।"

"हाँ, हाँ, यही तो। नियति ने स्वत. ही उसे अँधकार से निकालकर प्रकाश दिखाया है। उसकी छाती के नीचे दबी हुई भावना और अनुभूति को जागृत किया है। अब तुम भी उसकी सहायता करो। तुम्ही ने अजना के निर्माण मे योग दिया, तो आगे भी सहायक बनो। उसके मिशन को फेल मत होने दो। मेरा खयाल है कि तुम यहाँ मत रुको। अजना की दबी हुई वासना को मुँह उठाने का अवसर मत दो।" यह कहते हुए प्रोफेसर ने साँस भरी और कहा, "यदि तुम दोनो पति-पत्नी का रूप स्वीकार करते तो निश्चय ही दोनो का जीवन सुखमय बनता, परन्तु नियति को यह स्वीकार नही था। समाज के समक्ष तुम्हे झुकने के लिए बाध्य होना पडा। मै अनुभव करता हूँ अजना के मन मे यही कसक है, पीडा है। इससे वह भी परेशान हो उठती है। मुझसे कह चुकी है कि जयन्तजी यदि ब्राह्मण के घर मे न पैदा होते तो मेरे प्रति अधिक अनुराग रखते, मुझे अपने समीप पाते। वह तुम्हारे प्रति आज भी कितनी अनुरागमयी बनी है, इसका मुझे पता है। तुम्हारे लिए मैने उसे रोते देखा है।"

जयन्त कुछ कहने चला था कि तभी अजना वहाँ आई और बोली, "लडकी डर गई है, बिस्तर पर चुप पडी है। उसके पास आप दोनो चलिए न, शुभदा रो रही है।"

और इतना सुनते ही प्रोफेसर और जयन्त उसी ओर बढ गये।

चौबीस

निस्सन्देह शुभदा चाहती थी कि जो कुछ उसके मन मे है उसे निकाल दे। परन्तु अन्तत वह नारी थी। अपने अधिकार की माग करती थी। और जयन्त उन दिनो सचमुच ही उन्मुन था, थका था। वह किसी से भी अधिक न बोल पाता। प्राय अस्पताल के काम मे लगा रहता। कभी किसी मरीज को उसके गाँव मे जाकर देखने की बात आती तो देख आता। एक दिन सन्ध्या के समय जब वह अपने कर्म से निवृत्त होकर कमरे से बाहर निकला तो सीधा एक पहाड की ओर चल दिया। उस समय अन्धेरा बढ चला था। जयन्त एक पत्थर पर बैठ गया। वहा से अस्पताल के कमरो का प्रकाश अच्छा लग रहा था। उस पर्वतीय भू-क्षेत्र मे बना वह अस्पताल इतने दिनो के बाद जयन्त को श्रेष्ठ सकल्प प्रतीत हुआ जिसके चारो ओर शान्त वातावरण था। उस अवस्था मे ही उसने देखा कि वह कैप्टेन रमाकान्त की पत्थर की प्रतिमा भी जैसे अनायास दर्शको का आवाहन कर रही थी। उस समय सदा की भाति सन्ध्या का दीपक उस प्रतिमा के समक्ष भी रखा था। वह दीपक अपने शीतल प्रकाश से उस प्रतिमा के चरणो को पखार रहा था।

तभी जयन्त ने एक लम्बी साँस ली और छोड दी। उसे लगा कि वह कैप्टेन, बन्दूक से आदमी का कलेजा भेदने वाला सैनिक, जाने कितना अच्छा भाग्य पा गया, किस सस्कारवश इस अजना को मिल गया कि मरते समय न केवल अपने जीवन का समस्त प्यार इस कुमारी को भेट कर गया, अपितु अपना धन भी दे गया। और यह भी कैसी अजीब बात कि इस अजना ने उस कैप्टेन के नाम पर ही योग धारण कर लिया। उसकी स्मृति में अपना जीवन समर्पित करना स्वीकार किया। और एक मै हूँ ”

“जयन्तबाबू !” एकाएक पीछे से स्वर सुन पडा। चौककर जयन्त ने देखा कि अपने मधुर होठो पर मुस्कान लिये अजना वहाँ आ पहुँची है। वह अपनी प्यारी आँखो से भी हँस रही है। पास आते ही उसने कहा, “इस एकान्त मे क्या सोच रहे है आप ! क्या कोई नई बात है ?”

जयन्त ने साँस भरी और बड़े याचक तथा दीन भाव मे अजना को देखकर कहा, "कुछ नही, अजना! थका था तो इधर चला आया। आओ, बैठो।"

अजना ने कहा, "आज गाँव का गडरिया गोधू कहता था कि इस पहाड पर भी कुछ जानवर उतर आए है। उसने एक दिन शेर देखा, फिर रीछ देखा, लकडबग्घे तो यहाँ आते ही रहते है।"

जयन्त ने बात सुन ली, किन्तु उसने कोई उत्तर नही दिया। वह पहाड की ऊँचाई को देखता रहा।

अजना फिर बोली, "शुभदादेवी गाँव लौटने की बात कहती थी।"

जयन्त ने कहा, "ठीक तो है, उसे जाना चाहिए।"

"और आप?" अजना ने कहा, "आपका क्या विचार है? आप भी जाइए गाँव!"

जयन्त ने कहा, "फिर तुम्हारा यह मिशन कौन चलाएगा।"

अजना ने कहा, "शहर से एक डाक्टर आ रहा है। सरकार ने देना स्वीकार किया है। आज पत्र मिला है।"

तो मै चला जाऊँगा। गाँव न गया तो कही भी चला जाऊँगा।

इतनी बात सुनी तो अजना सहम गई। वह स्वय कातर बन गई। सहज मे बोल नही सकी।

किन्तु जयन्त ने फिर कहा, "मैं बडी स्थिरता से इस विचार पर टिका हूँ कि अपनी दिशा चुन लूँ। मेरा और शुभदा का सम्बन्ध स्थायी नही रहेगा। निभ नही सकेगा। हम दोनो के विचारो मे भेद है, जीवन को देखने मे भेद है।"

एकाएक अजना ने प्रश्न किया, "आखिर क्यो? कोई कारण तो हो? मैं तो शुभदा बहिन मे कोई कमी नही देखती।"

जयन्त ने पर्वत की सघनता की ओर देखते हुए कहा, "तुम मेरी आँखो से नही देखती। मेरे मन से नही समझती कि मैने जीवन मे एक भूल की, तो आज उसी के प्रायश्चित्त के रूप मे मेरा मन ग्लानि से भरा है। मुझे आज अपना जीवन ही ।"

एकाएक अजना सचमुच ही अधीर बन गई। वह और अधिक जयन्त

के समीप हो गई। उसके मुँह के समीप अपना मुँह ले जाकर और उसकी आँखो पर अपनी आँखे टिकाकर बोली, "जयन्तबाबू, मुझे बार-बार पागल न बनाओ। तुम अपना एक आधार पाकर शाति नही पाना चाहते तो मुझे यह अवलम्ब प्राप्त कर लेने पर पथ से न भटका दो। कुछ मेरे मन की अवस्था भी समझो। मेरी विनय है शुभदा का जीवन कष्टमय मत बनाओ।"

जयन्त ने कहा, "ऐसा मै नही समझता। वैसे मुझसे कल ही प्रोफेसर ने कहा है कि मै यहाँ न रहूँ। तुमसे दूर हो जाऊँ। सो, मै चला जाऊँगा। मै तुम्हारे योग मे, इस त्याग-भाव मे अवरोध न पैदा करूंगा।"

जैसे अनजाने अजना बोली, "तुम्हारे इस प्रस्थान का स्वागत करके भी, मै इतना समझती हूँ कि तुम जाओगे तो भला फिर मेरे पास क्या रहेगा, मुझे कौन उद्‌बोधना प्रदान करेगा। इस सेवा और त्याग की प्रेरणा कौन देगा।"

जयन्त ने उदास स्वर मे कहा, "वह तुम्हारे पास है। अब तुम्हे प्रेरणा की आवश्यकता नही है।"

अजना ने कहा, "न, जयन्तजी! मुझे अब भी प्रेरणा चाहिए। तुम यहाँ हो, तो मै समझती हूँ कि अकेली नही, साथी के रूप मे तुम मेरे पास हो। मुझे दिशा प्रदान करते हो। और क्या मुझे यह भी कहना पडेगा कि जब से तुम यहाँ आये हो तो मुझमे काम करने का अधिक उत्साह आ गया है। लगता है कि यह सब तुम्हारे लिए हे, तुम्हारे सहयोग से है।"

इतनी बात सुनी तो जयन्त मूक-वधिक के समान, अपने-आप मे सहम गया। उसे लगा कि अजना अभी वही हे जो कुछ वर्ष पूर्व थी, यह नही बदली। बच्ची मे जवान नही हुई। कहने को इसने गेरुए वस्त्र धारण कर लिए है, परन्तु मन नही रगा हे। मन मे इतनी बात आते ही उसने कहा, "प्रोफेसर का आदेश है कि मे जबतक यहाँ रहूँगा तुम्हारी साधना को बल नही मिलेगा। प्रोफेसर को भय हे कि मैं ।"

सुनते ही अजना ने तेज स्वर मे कहा, "मै आज भी समाज को सुना सकती हूँ कि शरीर से भले ही तुमसे दूर रहूँ, पर मन से, अपनी भावना से मैं तुम्हारे पास हूँ।"

जयन्त बोला, "तब तो प्रोफेसर का कहना ठीक है। मुझे सगत लगता है कि मै यहाँ से चला जाऊं। तुमसे दूर हो जाऊँ।"

अजना ने कहा, "तुम जाओगे तो यह अस्पतालरूपी शरीर क्या खडा रहेगा ? उसमे आत्मा का निवास नही रहेगा। ऐसे ही एक मै मुझे अब इस सत्य का उद्घोष करने मे आपत्ति नही लगती कि तुम्हे देखकर मुझे लगता है कि मै अधिक काम करूँ, मैं तुम्हे बताऊँ कि जो कुछ मुझे सिखाया गया उसका शक्तिभर पालन करती हूँ।"

जयन्त बोला, "लेकिन अब मै अपने को तुम्हारा पथ-निर्देशक नही मानता। वह स्वर्गीय कैप्टेन रमाकान्त तुम्हे कहाँ से कहाँ पहुँचा गया है। वह आँधी के समान तुम्हारे जीवन मे आया और तिरोहित हो गया। वह बेचारा सैनिक वह मानवी प्रेम का प्यासा "

अजना ने कहा, "जयन्तजी, मैने उस कैप्टेन के साथ न्याय नही किया। क्या ही अच्छा होता कि मै उसे नारी का विसर्जन और स्नेहदान देती। परन्तु मै तो उससे घृणा करती रही। वह आता, तो फटकारती, उपेक्षा दिखाती।

जयन्त बोला, "वह तुम्हारा पाप था।"

उदास भाव मे अजना ने कहा, "हाँ, वह मेरा पाप था। उसी कैप्टेन से मुझे यह अभिशाप मिला कि मै आज भी शान्त नही हूँ। अभिशप्त बनी इस अस्पताल के रोगीयो और गाँव वालो की सेवा मे लगी अपने को भुला देना चाहती हूँ। पर जब भी मै एकान्त मे होती हूँ तो सोचती हूँ कि मै तो निकम्मी बनी, अदूरदर्शी और अविचार अपने मानस मे लिये-लिये इस धरती पर आ गई, परन्तु बताइये तो, तुमने इतनी शिक्षा-दीक्षा पाकर भी क्या पाया। मुझे समीप लाकर भी क्या दिया ! अच्छा होता कि मैं अपने जीवन के अन्धेरे मे होती। आज इस प्रकार भावनावादी बनकर त्रास तो न पाती।"

जयन्त एकाएक चीख पडा पडा, "अजना।"

किन्तु अजना तो जैसे अपने मन का सभी जहर निकाल देना चाहती थी। वह बोली, "आप नही समझते, मै आज अभिशप्त हूँ। समाज मुझे योग की पुजारिन समझता है। पर मै क्या हूँ, उसे खूब समझती हूँ।

आपने जिस जिस सेवा, त्याग और भावना की चादर ओढ कर मेरा आवाहन किया, वही तो आज मुझे सान्त्वना है। मेरा मन छटपटाता है। भला क्यो ? इसलिए न कि मै प्रेम की पुजारिन बनी। मैं आपकी भावना के समक्ष जीवन मे एक बार ही आँख मूँदकर नतमस्तक हो गई।"

बलात् जयन्त के मुँह से निकला, "मै तुम्हारे लिए आज भी प्रस्तुत हूँ, अजनादेवी।"

अजना सीधी खडी थी, तुरन्त बोली, "अब देर हो गई है हवा आई थी, निकल गई। आपने जातिवाद और अपने विशिष्टवाद पर मेरे प्रेम की हत्या की तो मैने उस मृत कैप्टेन की कुरूपता को देख अपने हृदय की समस्त घृणा प्रदान की। हाय मेरी यह कैसी विवशता थी, कितनी हृदयहीनता की बात थी कि वह कैप्टेन, वह देश और समाज के लिए अपने प्राण न्यौछावर करने वाला इन्सान, मुझ नारी का सदय भाव पाने के लिए सदा आकाँक्षित रहा। वह नित-नित ही मुझे प्रसन्न करने के लिए सुन्दर भेटे लाता, परन्तु मै उनका कोई महत्व न आँकती। बताइए तो, मेरे प्रति उस कैप्टेन के मन मे कितना अथाह सागर खलबला रहा था, पर मेने उसमे एक बार भी गोता नही मारा। मैं तुम्हारी कल्पना करती रही, मे नित्य ही इस बात की कल्पना करती रही कि तुम तुम मेरे हृदय के उज्ज्वलतम भाव ' पर तुम्हारा धर्म तुम्हारी जाति हे राम। इतने कठोर बने तुम कि एक बार भी नही आये मेरे पास ! मानो तुम्हारे लिए शुभदा ही सब कुछ थी। तुम्हारा सर्वस्व थी। इसलिए न कि वह ब्राह्मण की लडकी थी। धनिक की पुत्री थी। तुम्हारे घर मे आने के साथ दहेज मे धन लाई। मुझसे अधिक अपने शरीर पर सौन्दर्य लाई।"

जयन्त ने अपना सिर पकड लिया और कहा, "मै अभागा निकला, अजनादेवी, अब और क्या कहोगी आज तुमने सभी कुछ कहा। सक्षेप मे कहूँ कि जो तुमने समझा, वह मैने नही पाया। मैने अपना जीवन खो दिया। सोने की जगह ताँबा पा गया।"

साँस भरकर अजना बोली, "वस्तुत. हम दोनो अपराधी है। इसानीयत के शत्रु है। हमने एक-दूसरे को धोखा दिया है। देखती हूँ कि मै सन्तप्त हूं, तो तुम भी उसी मे घुल रहे हो।"

जयन्त बोला, "मेरी कठिनाई है कि मै शुभदा को अपने से दूर पाता हूँ, उससे आत्मीयता का भाव नही पा सकता। मै आज इस सन्ध्या के समय केवल तुम्हारे समक्ष एक ऐसे रहस्य को खोलना चाहता हूँ कि जिसे मेरे अतिरिक्त और कोई नही जानता। और वह बात है इस शुभदा की। इसकी आत्महीनता की। विवाह से पूर्व इसका एक युवक से प्रेम था। यह शुभदा उस युवक को प्रेम करती थी या नही, यह तो राम जाने, परन्तु वह युवक अवश्य ही इसके प्रति अपना आत्म-समर्पण कर चुका था। वह दूसरी-जाति का था। निर्धन भी था।" यह कहते हुए जयन्त ने साँस भरी और कहा, "जब शुभदा का विवाह हुआ तो वह युवक पागल हो गया। आदमियो ने उपचार कराया। अन्त मे पागलखाने पहुँचा दिया। एक बार जब मैं उस नगर मे शुभदा को साथ लेकर गया तो सयोग से अपने मित्र डॉक्टर से मिलने पागलखाने भी पहुँच गया। इस डॉक्टर ने हम दोनो को पागलो से मिलाया। वहाँ कुछ पागल खुले मे घूम रहे थे और कुछ बन्द सीकचो मे थे। एक कोठरी के सामने जब हम पहुँचे तो देखा कि वह पागल युवक शुभदा को देखते ही चीख पडा और रो पडा। तभी मैने यह भी देखा कि स्वय शुभदा उस पागल को देख सहम गई थी। उसके मुँह पर पसीने आ गये। वह तुरन्त ही वहाँ से हट गई।"

अजना ने साँस भरकर कहा, "इसमे नई बात क्या है? यह तो होता ही है। नारी भी हृदयहीन है। मेरा उदाहरण प्रस्तुत है।"

किन्तु तभी जयन्त ने फिर कहा, "मेरे उस मित्र डाटकर ने एक वर्ष हुआ तब मुझे एक पत्र लिखा था। पत्र बडा था। उसी मे उसने बताया कि मेरी पत्नी शुभदा और उस पागल युवक का किसी समय प्रेम था। वह युवक अब मर गया है। परन्तु मरने से पूर्व शुभदा के नाम एक पत्र लिख गया है। निश्चय ही, उस पत्र को देखकर कोई यह नही कह सकता कि उसको लिखनेवाला कोई पागल होगा। वह बड़ा विचारपूर्ण पत्र था। डाक्टर ने मेरे पास भेज दिया था।"

अजना ने कहा, "तो उस पत्र की बात शुभदा से कही क्या आपने?"

जयन्त बोला, "नही।"

अजना बोली, "तो तभी शुभदा के प्रति उपेक्षा और घृणा की बात

तुम्हारे मन मे आई ?"

जयन्त ने कहा, "मै ऐसा नही मानता। सचाई यह है कि मेरे और शुभदा के मध्य विचारो का भेद है। वह मिजाज की उग्र है, ईर्ष्यालु है। बडे बाप की बेटी का अभिमान उसके खून मे मिला है।"

अजना ने कहा, 'नही, नही, वह केवल मॉ है, तुम्हारी पत्नी है।"

जयन्त ने कहा, "शुभदा का कोई भाई नही है। पिता की सम्पत्ति इसी को मिलने वाली है। इसलिए वह सोचती है कि उसके पास जीवन-निर्वाह का अभाव नही। वह जीवन को केवल भोगवाद की दृष्टि से देखती है।"

अजना बोली, "जयन्तजी, तुम्हे अपने बच्चो के लिए उनकी मा चाहिए। शुभदा बहिन का एक महत्व है, इसे मत भूलिये।"

जयन्त ने कहा, "मै किस महत्व को आँकूँ, यह अभी मुझे समझना है। मेरे जीवन का अध्ययन अभी शेष है। जीवन बहुत गहरा है। इसमे उतरना आसान नही। मेरे लिए क्या यथेष्ट होगा, यही मुझे जानना है।"

वे दोनो चल दिये। किन्तु जब वह आगे बढे तो देखकर चकित हो गए कि चन्द्रमा के प्रकाश मे एक छाया पेडो के झुरमुट मे आगे बढी और तिरोहित हो गई, और वह शुभदा थी, जो देर से उनकी बाते सुनने मे लगी थी।

पच्चीस

सध्या के समय शुभदा के मन का चोर और अधिक विक्षुब्ध बना जब वह अशान्त और असहाय की स्थिति मे पहुँचकर अपने कमरे मे लौटी। जिस तेज गति से शुभदा वहाँ पहुँची, उस अवस्था मे एकाएक ही, वह कमरे की चौखट से टकरा गई। निश्चय ही उस समय वह मानसिक और आत्मिक पीड़ा से भरी थी। इस प्रकार वह अपना सन्तुलन भी खो बैठी

थी। जिस चौखट से टकराई उसी मे एक कील लगी थी, वह शुभदा के माथे मे चुभ गई। खून निकला, शुभदा चीखकर बैठ गई, उसकी साडी और ब्लाउज खून से तर हो गये थे।

उसी समय अजना और जयन्त वहाँ पहुँचे, वे दोनो देखकर चकित रह गए कि यह क्या हुआ। जयन्त ने तुरन्त ही शुभदा को पकड लिया।

हतप्रभ बनकर अजना बोली, "यह क्या हुआ! कैसे हुआ?"

जयन्त ने कहा, "दिखता है कुछ लग गया है।" वह शुभदा से बोला, "तुम ड्रेसिग-रूम मे चलो। तुम्हारा माथा फट गया है। लगता है कि तुम्हारा मानसिक स्तर क्षुब्ध हो चुका है।"

किन्तु इतना सुनकर शुभदा ने कराहने के अतिरिक्त मुँह से और कुछ नही कहा। अजना ने उसे उठाया। ड्रेसिंग-रूम मे जाकर जयन्त ने माथे मे टाँके लगाए, पट्टी बाँधी और तब वह गम्भीर भाव से ड्रेसिंग की मेज पर पडी शुभदा की ओर देखने लगा। उसी समय वहाँ प्रोफेसर आगये। देखकर बोले, "चोट कैसे लगी? क्या मार लिया?"

जयन्त ने कहा, "जब मन भागता है तो आदमी भी भागता है। मन अन्धा होता है तो आदमी भी अन्धा हो जाता है।"

इतनी बात सुनकर प्रोफेसर मुस्कराए नही, उन्हे हँसी भी नही आई, वह जयन्त के समान गम्भीर बनकर बोले, "इसके लिए कोई कारण तो हो।"

जयन्त कमरे से बाहर जाने लगा और बोला, "मनुष्य का सबसे बडा शत्रु उसका मन है, प्रोफेसर साहब। जब मन मे चोर होता है तो शका भी होती है। दूसरे के प्रति सन्देह भी पैदा किया जाता है।" जयन्त वहाँ से चला गया। किन्तु कमरे मे रह गए प्रोफेसर ने अजना से कहा, "इस शुभदा को उठाओ। कमरे मे ले चलो।"

जैसे झाँककर अजना ने कहा, "जी।"

प्रोफेसर ने कहा, "शुभदा बेटी की देखभाल तुम्हे ही करनी होगी, यह कोमल है। जरूर इसके मन पर कोई बात है।"

अजना ने कहा, "लेकिन जिस बात का कोई सिर-पैर न हो, उसे अपने मन मे लिये रखना क्या अच्छा है? ऐसे तो रोगी बनना है।" उसने

अजना ने कहा, "जयन्तजी में न समझने की कोई बात नही। तुम धीरज से काम लो।"

प्रोफेसर ने कहा, "जयन्त अब यहाँ नही रहेगा। गाव जाएगा।"

अजना ने कहा, "उन्हे यही करना चाहिए।"

शुभदा ने फिर अपनी आँखे बन्द कर ली। उसके होठ फडफडाने लगे जैसे अपने-आप ही कुछ कहने लगी हो।

उसी समय प्रोफेसर ने खडे होकर कहा, "शुभदा को दूध दो। बच्चो को सुला दो, आराम करने दो।" कहते हुए वह वहा से चल दिये। लेकिन प्रोफेसर इस कमरे से बाहर जाकर अपने कमरे मे नही गए। वह बीमारो के उस वॉर्ड मे पहुँच गए कि जहा एक दिन पूर्व ही एक व्यक्ति घायल अवस्था मे भर्ती हुआ था। उसका किसी ने सिर फोड दिया था, शरीर के कई स्थानो पर भी आघात किया गया था। जाकर देखा कि वह व्यक्ति जाग रहा है। उसने प्रोफेसर को देखकर हाथ जोडे, प्रोफेसर ने पास जाकर कहा, "कहो, कैसी तबीयत है, जख्मो मे पीडा तो नही है ?"

उस व्यक्ति ने धीर भाव से कहा, "जी नही।"

प्रोफेसर और पास आ गये और बोले, "कहो तो यह चोट कैसे लगी ? किस बात पर तुम्हारी फौजदारी हुई ? क्या किसी पडौसी ने चोट मारी ?"

उस व्यक्ति ने कहा, "बाबा, जमाना बेईमान है। एक आदमी को रुपया दिया था। जब माँगा तो मार-पिटाई कर बैठा। मुझे सोते मे "

"ओह, ऐसा था वह आदमी ! इतना क्रूर !" प्रोफेसर ने कहा, "तो तुम रुपये का लेन-देन करते हो ? सूद लेते हो ?"

बात सुनी तो वह व्यक्ति चुप हो गया। और दिन मे ही, उस बीमार के गाँव के एक अन्य व्यक्ति ने प्रोफेसर को बताया था कि वह आदमी पक्का सूदखोर है। मूल से ब्याज अधिक लेता है। जिस आदमी ने इसके साथ मार-पिटाई की वह दबी हुई चीटी के समान तिलमिला गया था। इस सूदखोर ने उसकी जमीन छीन लेनी चाही थी और उसकी लडकी पर भी अधिकार करना चाहा था।"

दिन मे सुनी बात को याद करके ही प्रोफेसर ने अब उस बीमार की बात सुनी तो बोले, "भैया, यह पैसा भी झगडा कराता है। एक और भी

झगडे की जड है, जिसका नाम है, नारी। मुझे लगता है कि तुम भी इससे छूटे नही हो।"

बीमार ने कहा, "बाबा, रुपया लेना आसान है, देना कठिन।"

प्रोफेसर ने पूछा, "तो तुम अपने रुपये के लिए उस किसान की ज़मीन लेना चाहते थे ? मैने सुना है कि तुम उसकी लडकी पर भी निगाह रखते थे ?"

घायल बोला, "बाबा, जब लेने वाला रुपया वापिस न करे तो जमीन ली जाएगी। और रही उसकी लडकी की बात, यह तो उसकी इच्छा की बात थी। मेरी घरवाली मर गई तो मैने सोचा कि वह रुपया देने से छूट जाएगा और मेरे घर का अभाव पूरा हो जाएगा।"

खिन्नभाव मे प्रोफेसर ने कहा, "राम-राम ! तुम इतने निकृष्ट हो। गॉव की लडकी जो तुम्हारी बेटी के समान है उसी के प्रति ऐसे भाव ! और जितना रुपया तुमने उसे दिया, मैने सुना है, तुम उससे सूद भी वसूल कर चुके हो। अरे, कैसे पत्थर हो, भाई तुम ! इतने कठोर ! इतने निर्मम। तुम तो कसाई बनकर इन्सान के शरीर की खाल उतार लेना चाहते हो।"

इतनी बात सुनकर वह घायल प्रोफेसर की ओर देखने लगा। निश्चय ही, उसे प्रोफेसर का कहना कुछ अच्छा नही लगा था। परन्तु वह असहाय था, नि शक्त बना था। वह भीमकाय व्यक्ति जैसे घायल बने सर्प के समान तडप कर रह गया था।

लेकिन प्रोफेसर ने उसके मन की उस अवस्था पर ध्यान नही दिया। उन्होने सीधे स्वभाव से फिर कहा, "देखो भाई, मै तुम्हारे मन के विपरीत कुछ कहकर तुम्हे परेशान या दु खी नही करना चाहता। परन्तु तुम जिस तरह चारपाई पर डालकर यहॉ लाये गए हो उससे स्पष्ट है कि तुम्हारा शरीर भले ही बलिष्ठ हो परन्तु आत्मा मर चुकी है। तभी तुमने यह चोट खाई। किसी ने ठीक ही कहा हे कि आत्महीन व्यक्ति जीवित नही रह सकता। तुम जिस समाज मे रहते हो उसकी विवशता से लाभ उठाना तुम्हारा सबसे बडा अपराध है, पाप है। लगता है कि तुम 'जियो और जीने दो' के सिद्धान्त को नही मानते। सुबह तुम्हारे साथ जो आदमी आये थे उन्होने मुझे बताया कि जिसने तुम्हे चोट पहुँचाई वह अतिशय दुर्बल

आदमी है। परन्तु उसने तुम पर आघात किया तो इससे स्पष्ट होता है कि वह अपनी आत्मा मे बल रखता है। आदमी बनो भाई ! इन्सानियत का सबक पढो। जब भगवान सब पर दया करता है तो क्या तुम इस जीवन को पाकर दयाभाव नही दिखा सकते ? तुम भी तो भगवान के रूप हो।"

बीमार ने फिर हाथ जोडे और कहा, "मै शर्मिन्दा हूं, बाबा !"

प्रोफेसर ने कहा, "यह अस्पताल भी इन्सान की दया पर टिका है। यदि तुम कुछ अनुभव करो तो समझो। पाप तुम्हारा था, उस निर्बल किसान का नही। इस अस्पताल से अच्छे होकर जाओ तो उससे क्षमा माँगना। प्रतिशोध का भाव मन मे हो तो उसे भुला देना। अब तक तुम जहर उगलते आये अब तनिक अमृत भी दो। इन्सान को दया दो, सहानुभूति दो। तुम अनुभव करो कि जो कुछ तुम्हारे पास है वह समाज का है, तुमने प्राप्त किया है। तब भला समाज का अधिकार क्यो छीनते हो। यह चोरी है, अन्याय है।" यह कहते हुए प्रोफेसर वहा से चल दिए।

वह अभी उस वार्ड से निकलकर अपने कमरे की ओर चले ही थे कि तभी देखते है कि महिला वार्ड की एक महिला अतिशय दीन और याचक बनी पास खडी नर्स और अजना से कह रही है, "मै मरना चाहती हूँ, मै मौत..."

इतना देख, सुन प्रोफेसर भी उस कमरे मे पहुँच गए। उन्होने जाते ही अजना से प्रश्न किया, "क्या तकलीफ है इस नारी को ?"

अजना ने कहा, "इसे जीवन की तकलीफ है। यह कई बच्चों की माँ है। पति गरीब है। अब फिर इसके पेट मे बच्चा है।"

प्रोफेसर ने कहा, "दुर्बल भी अधिक है।"

अजना बोली, "यही तो ! पेट का बच्चा भी दुर्बल है। पीडा होती है, पर बच्चा पैदा नही होता। मुझे लगता है कि..."

इतनी बात सुनकर, प्रोफेसर वहा से चल दिए। अजना भी चल पडी। नर्स वही रही। जब वे दोनो उस कमरे से बाहर निकले तो प्रोफेसर ने अपनी दुर्बल आँखो से ऊपर के तारो भरे आकाश को देखकर कहा, "यह भी कैसी विवशता है इस इन्सान की कि यह निर्धन है, इसे रोटियो का अभाव है, परन्तु विषय-वासना का दास तब भी बना है। यह बेचारी औरत

भी इसी से ग्रसित है ।"

खिन्न भाव मे अजना ने कहा, "आदमी कुत्ता है ।"

जल्दी से जैसे आतुर बनकर प्रोफेसर ने कहा, "हॉ, हाँ, यही तो । स्वय तो पतन के मुँह मे जाता ही है, इस बेचारी नारी को भी ले डूबता है ।"

किन्तु अजना ने तुरन्त ही फिर कहा, "प्रोफेसर साहब, औरत भी पुरुष के जीवन मे अपना रूप देखती है, अपनी आस्था पहचानती है । औरत स्वय अन्धेरे मे पडी है । मूर्ख बनी है ।"

प्रोफेसर बोले, "यह दोनो की विवशता है । पेट की भूख तो परेशान करती ही है, यह शरीर की भूख भी आदमी को पागल बना देती है ।"

एकाएक अजना ने कहा, "ओह ! निरी सडॉद दुर्गन्धपूर्ण "

प्रोफेसर ने जैसे बेजाने कह दिया, "हॉ, सडॉद जीवन का पाप "

और जब प्रोफेसर अपने कमरे की ओर जाने लगे तो बोले, "शुभदा का ध्यान रखना ।"

अजना ने कहा, "शुभदा सो गई है, उसके बच्चे भी सो गए है ।"

उसी समय जयन्त घोडे पर चढा हुआ गॉव मे लौट आया । वह सीधा शुभदा के कमरे की ओर बढ गया ।

छब्बीस

एक दिन जब एकाएक गॉव के व्यक्तियो ने जयन्त और शुभदा को अपने निकट पाया तो अडौस-पडौस के नर-नारी उनके घर पर आ पहुँचे । सभी ने जयन्त से नानाप्रकार के प्रश्न किए । उसी समय पडौसी मलखान ने अवसर पाकर कहा, "भैया, राधा का क्या हाल है ?"

चकित बनकर जयन्त ने कहा, "कौन राधा !"

"अरे वही कृष्ण की दुलारी राधा ! वह अजना "

इतनी बात सुनी तो जयन्त हँस दिया। उस बात ने दूसरो को भी हँसा दिया।

किन्तु मलखान सीधे-स्वभाव फिर बोला, "यह तो देखता हूँ कि रुक्मणीदेवी अपने कृष्ण को मथुरा से द्वारका ले आई है, पर कृष्ण का मन तो अपनी उस राधिका के पास ही होगा हा, वह अजना "

वहाँ पर आए एक प्रौढ व्यक्ति ने कहा, "अरे, मलखान! तू तो आज बडी बुद्धिमानी की बात कहता है, रे! जयन्त की पत्नी शुभदा को बनाता है रुक्मीण और इस गाँव की लडकी अजना को उपमा दे बैठा है राधा की वाह-वाह!"

मलखान ने कहा, "चाचा मुझे यह उपमा सही लगती है। कृष्ण भगवान राधा की ओर इसीलिए तो झुके थे कि वह उनके रग मे रग गई थी, कृष्ण की बाँसुरी के स्वर मे ही अपनी सुध-बुध खो बैठी थी, अपने पति को भी भूल चुकी थी। और रुक्मणी अपने कृष्ण पर इसलिए अधिकार दिखाती थी कि वह उसके पति थे। इसी तरह देखो न उस अजना को, इस भरी जवानी मे योगिनी बनी है, सेवा-भाव की डगर पर झोंक बैठी है अपने-आपको! मै कहता हूँ, वह अजना आज भी जयन्तबाबू की कल्पना करती है। रुक्मणी और राधा के समान, इन जयन्तजी को एक ने अपना शरीर दान दिया है, तो दूसरी ने अपनी भावना और अनुभूति प्रदान की है, क्यो मानते हो न, तुम?"

प्रौढ व्यक्ति ने कहा, "सचमुच, दोनो का अपना अपना विशिष्ट स्थान है, महत्व है।

मलखान ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "मै भावना को महत्व देता हूँ।"

तभी एक व्यक्ति ने कहा, "नही रे! शरीर का समर्पण भी ऊँचा है। उसका मूल्य भी बडा है। वह सामाजिक धर्म है।"

मलखान तेज स्वर मे बोला, "बिल्कुल नही। वह तो अपने स्वार्थ की बात है। इच्छापूर्ति की बात!"

"ओह!" वह व्यक्ति जो पास के कस्बे मे सस्कृत के अध्यापक थे, बोले, "अरे, मूर्ख! स्वार्थ दोनों का है। भावना का आदान-प्रदान करना

काम चौपट हो गया। घर बन्द हो गया। गाव मे किसी के घर दु ख-तकलीफ हो तो कोई देखने वाला नही रहा। उस अजना मे तू अपने आदमी को जितना दूर रखेगी उतना ही तेरा भला है। वह सापन है, अवसर पाते ही डस लेगी।"

शुभदा ने सास भरकर कहा, "चाचीजी, यह मेरी शक्ति की बात नही। मेरे भाग्य मे जो कुछ हे, वह मुझे मिलेगा।"

चाची ने कहा, "अरी बहू ! भाग्य के साथ लड़ना भी पडता हे। प्रयत्न करना ही आदमी का काम हे। और तेरा पति तो हीरा हे। ऐसे नग को भला कौन न पाना चाहेगा। मै जानती हूँ कि वह अजना बडी चालाक है। है तो चमार की बेटी न ! जाति का स्वभाव क्या सहज मे जाता है ? जरूर वह अब भी जयन्त को पाना चाहती होगी। इसीसे कहती हूं कि तू सावधान रहना। चोर चारो तरफ है, अपने पति की चौकसी करना तेरा ही काम है। तू इस घर की चौकीदार हे। तेरे ऊपर बडा उत्तरदायित्व हे। इस घर का बोझ है। जानती नही, औरत बच्चे तो पैदा करती ही है पर अपने नटखट पति को भी सुधारती हे। उसकी पुरानी आदतें दूर करती है, नई पैदा करती है। हॉं, तभी तो वह अपने घर के लिए, बच्चो के लिए उस पति को उपयोगी पा सकती है।" यह कहते हुए वह चाची उठकर चली गई।

तभी वहॉं पर बैठी रह गई शारदा ने सहज भाव से कहा, "यह चाची बड़ी समझदारी की बात कह गई है।"

उसी के पास बैठी नर्वदा नाम की लडकी ने कहा, "तू इस चाची का इतिहास नही जानती। इसने जो कुछ कहा, ठीक कहा है। इस चाची ने अपना अवारा और कामचोर पति आदमी बनाया है। विवाह के बाद ही जेठ जिठानी ने इसे जुदा कर दिया था। इसका पति रामलाल नशेबाज़ था, जुआरी था, और निठल्लू था। लेकिन इस चाची ने उस पर ऐसा जादू किया कि वह कुछ ही दिन मे मेहनती बन गया। आज इसका घर जेठ-जिठानी से अधिक हरा-भरा है। बच्चे है। घर इसने सम्भाला, पति ने बाहर का कार्य सम्भाला !"

शारदा ने कहा, "काम ऐसे ही चलता है।"

नर्वदा बोली, "मेरी माँ बताती थी कि पति को परिश्रमी बनाने के लिए यह स्वय उसके साथ काम करने लगती थी। रात को भरी शीत मे गाँव के लोग सोते तो यह चाची अपने पति के साथ घर से दूर जाकर खेत मे पानी देती, खेत की रखवाली करती। काम के लिए उसने न दिन देखा, न रात देखी। यह तो मैने भी बहुत बार पाया कि गर्मी की भरी दोपहरी मे यह नारायणी चाची अपने आदमी के साथ खेत काटती पाई गई।"

शारदा ने साँस भरकर कहा, "ऐसे ही काम चलता है। तभी घर बनता है। इस जिन्दगी को निभाने के लिए सभी-कुछ किया जाता है।"

नर्वदा ने हँसकर कहा, "तू अपनी बात बता! तेरा पति तो ठीक है?"

शारदा ने कहा, "अरी, घर-घर यही हाल है। दूर का ढोल सुहावना लगता है। अब तो जमाना यह है कि न तू अपनी कह, न मै अपनी कहूँ। गुम-सुम जिन्दगी चलती रहे। अपनी जो समस्या है वह अपने मन मे ही अटकी रहे तो अच्छा है। दूसरा सुनता है तो उपहास करता है। एक की चार बाते बनाता है।"

नर्वदा ने कहा, "यही बात है। आज अपना कोई नही है।"

शारदा बोली, "मेरा विवाह क्या हुआ, जीवन ही बदल गया। विवाह के साल भर बाद ही सास-ससुर ने जुदा कर दिया। रहे पति महाशय, उन्हे दुनिया की कोई खोज-खबर नही थी। जब सिर पर रोटियो की चिन्ता सवार हुई तो लगे जिस-तिस को नौकरी के लिए कहने।"

नर्वदा ने कहा, "तेरा पति तो समझदार है। सलीकेवाला है!"

शारदा बोली, "अरी, दूसरे क्या जाने पेट का हाल! हाँ, ऐसे क्या जिन्दगी का यह पहाड उठता है। वह तो यह कहो, भाग्य ने साथ दिया, काम अच्छा मिल गया। चार पैसे आने लगे। नही तो, बाबूजी को दिन मे ही तारे गिनने पड जाते।"

उसी समय कुछ देर पूर्व आई हुई एक बहू ने कहा, "यह शारदा बीबी चतुर है। मैंने सुन लिया है कि यह घर चलाना जानती है।"

शारदा ने कहा, "जब आदमी चार पैसे न लाये तो औरत की चातुरी भी धूल मे मिल जाती है।"

वह बहू बोली, "यह तो ठीक है, पर ग्रादमी चार पैसे भी लाये ग्रौर घरवाली उनका ठीक से उपयोग न करे तो भला उस घर को क्या भगवान ग्राकर संवारेगा ? तुम्हारी माँ कहती थी कि तुम चतुर हो।"

नर्वदा ने कहा, "शारदा बहिन ने यह गुण अपनी माँ से लिया है। इसकी माँ भी होशियार है।"

उसी समय शारदा ने बात बदली ग्रौर शुभदा से कहा, "तो खूब पहाडो की सैर की, भाभी ! मन लगा ?"

शुभदा उस समय कुछ ग्रनमनी थी। बैठी-बैठी थक चली थी कि जयन्त के लिए चाय तैयार करे ग्रौर ट्रे मे लगाकर बाहर भेज दे। इसलिए जब ग्रौरतो का ग्राना-जाना बन्द नही हुग्रा तो यह काम उसने नौकर को बताया। तभी उसने शारदा की बात सुनकर कहा, "वहाँ की जलवायु तो ग्रच्छी थी। मै तो रात मे कम्बल ग्रोढती थी।"

एक ग्रौरत ने पूछा, "तो ग्रजना ग्रब गाँव मे नही ग्रायेगी ?" उसने स्वय कहा, "ग्रब क्या ग्राएगी। उसका यहाँ कौन हे। मा-बाप भी भगवान के घर गये।"

तभी नर्वदा ने चुटकी ली, "वाह, उसका इस गाँव मे हे क्यो नही कोई ये जयन्तबाबू ।"

उस ग्रौरत ने कहा, "ग्ररी नही री। तू जिस लकीर को पीटती हे उसका ग्रब कोई ग्रर्थ नही। जयन्तबाबू का ग्रपना रास्ता है, ग्रपना घर है।"

नर्वदा ने कहा, "इस ग्रादमी का कोई भरोसा नही।"

उस प्रौढा ने कहा, "भरोसा क्यो नही। जो ग्रादमी कल था वह ग्राज नहीं ग्रौर ग्राज वाला कल नही। जानती नही कि ग्रादमी भी नित-नित बदलता है। यह दुनिया तो ऐसा साँचा है कि जिसमे सभी को ढाल दिया जाता है। देखती नही कि उस ग्रजना का रास्ता ग्रौर है, ग्रौर इस जयन्त का ग्रौर।"

उसी समय एक-एक कर ग्रौरते खडी हुई ग्रौर उस घर से लौट चली। जब शारदा चली, तो वह बोली, "भाभी, फिर ग्राऊँगी। देखती हूँ तुम दुबली होकर ग्राई हो। सच, कुछ बदली लगती हो।"

शुभदा ने सूखी मुस्कान के साथ कहा, "मै वहाँ बीमार हो गई थी"

मुस्कान भरकर शारदा बोली, "शरीर से या मन से ?"

शुभदा सहज भाव से बोली, "समझ लो दोनो से ।"

शारदा जाती हुई बोली, "मैं समझती हूँ, मैं भी औरत हूँ न, तुम्हारे मन की पीडा पहचानती हूँ, फिर बाते करूँगी ।"

शुभदा ने कहा, "हाँ, आना। अब मै भी थकी हूँ। तुम्हारे भैया ने अभी सुबह से चाय भी नही ली है। घर की हालत भी बेढगी है ।"

शारदा बोली, "हाँ-हाँ, बच्चो को भी बुलाओ, उन्हे दूध दो ।" वह चली गई ।

शुभदा रसोईघर की ओर बढ गई ।

उसी समय जयन्त बच्चो के साथ घर मे आया। वह घर के आँगन मे चारपाई पर बैठ गया। बच्चे रसोई मे गए, माँ से दूध माँगने लगे।

शुभदा ने स्टोव पर चाय का पानी रख दिया था। बच्चो की बात सुनकर उसने कहा, "हाँ-हाँ, अभी देती हूँ। तुम पापा के पास चल कर बैठो।"

बच्चे फिर पप्पा के पास लौट आए। चारपाई पर चढ गए। ललित जयन्त की गोद मे बैठ गया।

उसी समय बाहर से आवाज़ आई, "जयन्त बाबू ।"

जयन्त ने कहा, "कौन, हरीश ! आओ, भाई !"

हरीश अन्दर आ गया, साथ मे मलखान था। घर मे आते ही मलखान ने ऊँची आवाज मे कहा, "भाभी तुम्हारे हाथ की चाय पीये बहुत दिन हो गए है सो आज ऐसा मौका हाथ आया है।" और वह हरीश के साथ चारपाई पर बैठ गया।

उसी समय शुभदा कुर्सी उठा लाई।

मलखान ने कहा, "तुम क्यो लाई, मैं ले आता !"

शुभदा मुस्कराई, "नही, ऐसी कोई बात नही।"

जयन्त ने हरीश की ओर देखकर कहा, "कहो, कब आये ? अब तो छुट्टियाँ होगी कालेज की ?" हरीश प्रोफेसर था।

उसने कहा, "हाँ छुट्टियाँ है। यहाँ आकर देखा तो तुम नही थे। भाभी भी नही थी। घर बन्द था। घर के नौकर मलादू से पूछा तो पता चला कि

तुम्हारे लौटने का उसे भी कोई ज्ञान नही कि कब आओगे ।"

मलखान ने कहा, "अजी, रूठे हुए पति मनाकर लाए गए है। रुक्मणीदेवी को स्वय मथुरा जाना पडा ।"

सुनकर हरीश हँस दिया। जयन्त भी मुस्कराया।

उसी समय ट्रे मे चाय, मिठाई लेकर शुभदा वहाँ आई।

मलखान ने कहा, "भाभी, मै तुम्हारी वकालत कर रहा हूँ ।"

हरीश ने कहा, "तभी तो यह मिठाई मिल रही है ।"

शुभदा बोली, "यह मिठाई तो कभी भी खाते है। जब मन मे आई, अपनी इस भाभी का सिर आ चाटते है। इतनी बाते करते है कि मेरा दिमाग खप जाता है ।"

मलखान बोला, "तो भाभी, मै क्या करूँ। जयन्त भाई को तो फुरसत नही अपने मरीजो से, तब तुमसे ही क्यो न बात करूँ ?"

शुभदा ने कहा, "हाँ-हाँ, तुम खूब बाते करो। देखो, चाय ठण्डी हो रही है, उसे उठाओ। मिठाई खाओ।" और वह फिर रसोई घर की ओर बढ गई।

सत्ताईस

यो कई मास बीत गये जयन्त गाँव मे आकर फिर अपने काम पर लग गया। सभी कुछ सुचारू रूप से चलने लगा। किन्तु स्थिति यह थी कि जयन्त पहिले के समान अब न तो शुभदा से खुलकर बोल पाता था, न हँस पाता था। मानो वे दोनो एक बार हृदय से जुदे हुए तो फिर जुडने के लिए उद्यत नही है। इस बीच मे जयन्त ने एक नई बात यह अवश्य की कि उसके पास जितनी चल और अचल सम्पत्ति थी, वह सभी शुभदा के नाम लिख दी। जिस दिन जयन्त नगर से उस वसीयत का कागज़ लेकर गाँव लौटा तो उस कागज़ को देखकर शुभदा ने एकाएक कहा, "मेरे लिए

इसका उपयोग क्या है। औरत को पति चाहिए वही उसका सम्बल है !"

सुनकर सीधे-स्वभाव से जयन्त ने कहा, "जब सभी को धन-सम्पदा चाहिए तो तुम्हे क्यो नही ! मेरे ख्याल से तुम्हे भी चाहिए।" वह बोला, "और रही पति की बात, वह तो तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत है। तुमसे बँधा है।"

तुरन्त ही, शुभदा ने कहा, "नही-नही, पति मुझसे नही बँधा। मेरा नही !" वह साँस भरकर बोली, "औरत को क्या चाहिए, कदाचित् तुम नही समझते। यदि जानते हो, तो कहना नही चाहते।"

सहज भाव मे जयन्त मुस्करा दिया, "सचमुच, मै औरत का विज्ञान नही जानता। किसी और को समझ सकूँ या नही, परन्तु तुम्हे पहचानने की शक्ति नही पाता।"

उसीक्षण उसके मन मे आया कि कह दे, तुम्हारे मन की स्थिति ठीक नही है। तुम्हे प्रमाद का रोग है। और तभी वह शुभदा को यह बताने के लिए व्यग्र हो उठा कि पहाड पर तुमने जिस प्रकार मेरी और अजना की छुपकर बाते सुनी उसीका यह प्रतिफल है कि तुम्हे चोट लगी। आखिर तुम्हे छुपने की क्या आवश्यकता थी। मेरे पास ऐसी कोई बात नही कि गुप्त हो। अजना अब भी मेरे समीप है, मेरी आत्मा के कोने मे स्थित है।

किन्तु जयन्त देखता था कि कदाचित् मेरी और अजना की बात सुनकर ही यह शुभदा अब अधिक स्नेहमयी और अनुरागमयी बन चली है। हाँ, इसने समझ लिया है न कि इसके मन का चोर पकडा गया है। इसका पत्नित्व-पद खण्डित हो गया है। उस क्षण के समान यह बात पहले भी उसके मन मे आई, परन्तु अपने विचार और स्वभाव के अनुरूप उसने तब भी कहा, नही, नही, इस शुभदा का भी स्थान है। सभी जीवन मे भूल करते हैं। यो इस शुभदा की किसी बीती दुर्बलता को कुरेदना, उसका प्रतिशोध लेना मेरे लिए अनैतिक है, अविचार है। अब यह शुभदा दो बच्चों की माँ है ! पति के रूप मे क्या मेरी यह भ्रष्टता नही कि मैं आज भी उस अजना के प्रति झुका हूँ, उसी के स्मरण मे आनन्द पाता हूँ। भला क्यो ?

उसने शुभदा के सिर पर हाथ रखा। उसकी वेदना से भरी आँखो को देखकर बोला, "शुभदाजी, मै अपराधी हूँ। तुम समझो कि तुम्हारे

प्रति मेरे मन मे कुछ नही है,—हाँ, सच !"

शुभदा भी उस समय अपने मन का चोर प्रगट करना चाहती थी, अतएव अश्रुपूर्ण होकर बोली, "मै समझती हूँ, तुम मेरी हीनता को पाकर ही " और उसने तडप कर अपना सिर जयन्त के घुटनो पर पटक दिया।

जयन्त बोला, "मैं तुम्हारा कोई अपराध नही मानता. शुभदा ! परिस्थिति सभी कुछ कराती है। एक मुझे देखो न, मेरा यह अपराध कम नही कि पत्नी के रहते हुए उस अजना के प्रति मै आकर्षित हूँ।"

शुभदा ने कहा, "नही, नही, वह अजना इसी योग्य है। वह कल्याणी है। उसे तुम्हारी आत्मानुभूति चाहिए।"

जयन्त बोला, "तुम्हे भी ! तुम्हे भी मेरा प्यार और ममता चाहिए, शुभदादेवी ? विश्वास रखो, मैं तुम्हारा हूँ, तुम्हारा ही हूँ।"

किन्तु इतनी सांत्वना पाकर भी शुभदा के मन का चोर अडिग था, वह काँप रहा था। अभियुक्त के सदृश खडा था। यदि जयन्त अपने मुँह से उस पागलखाने की बात कह पाता तो नि सन्देह शुभदा को सन्तोष होता। तब वह भी अपनी बात कहती। साफ बता देती कि हाँ, वह मेरी विवशता थी। पिताजी की प्रतिष्ठा और कुलीनता की समस्या ने मेरे समक्ष वह स्थिति पैदा कर दी थी।

उसी समय जयन्त ने कहा, "शुभदाजी, मैंने समझ लिया है, हम दोनो एक ही प्रकार के तीर से घायल हुए हैं। जातिवाद और धर्मवाद हमारे पथ मे पहाड बनकर खडे हैं। नि सन्देह यह हमारी मानवीय दुर्बलता है, उसी का प्रतीक है। इस बार पहाड पर जाकर मैंने यही समझा है।" यह कहते हुए जयन्त उठा और बाहर चल दिया। उसे जाता देख, बरबस, शुभदा ने अपनी आकुल और पीडित बनी दृष्टि को उसकी ओर उठा दिया।

यो भी वह किसी बहस में नही उलझना चाहती थी। जयन्त ने कोई बात स्पष्ट नही कही, यह भी शुभ रहा। क्योकि जबसे शुभदा पहाड से लौटकर आई तभी से उसकी यह आस्था थी कि बहस करना, पति के मार्ग में पत्थर बनना उसका काम नही था। पहले वह पति से लडती

थी, अपना विरोधरूप प्रकट कर पाती थी। लेकिन अब यदि उसे अधिक क्षोभ होता तो उसे बच्चो पर उतारती। शुभदा गुस्सैल और अभिमानिनी थी, यह बात स्वय भी समझती हो, ऐसा तो कैसे कहा जाए, परन्तु यह उसकी कमजोरी अवश्य थी। इसीलिए जब वह पति के साथ गाँव मे लौटी तो यह विचार जयन्त पर भी कई बार प्रगट कर चुकी थी कि कुछ दिन के लिए वह अपने पिता के घर जाएगी। यद्यपि, जयन्त को इसमे आपत्ति नही थी, परन्तु शुभदा किस विचार पर टिककर पिता के घर जाना चाहती है, इतना उसने समझ लिया था। और जयन्त की अवस्था यह थी वह कुछ समय के लिए बाहर क्या गया, गाँव मे पहले से और अधिक चर्चा का विषय बन गया। उस चर्चा को प्रसारित करने मे शुभदा का योग रहा हो या नही, परन्तु जो लोग जयन्त की सामाजिक और आर्थिक उन्नति को देख ईर्ष्या करते, उन्होने अवश्य ही, इस अवस्था से लाभ उठाया। इसका परिणाम यह हुआ कि जयन्त या तो सुबह-शाम मरीजो के मध्य रहता अथवा एकान्त मे रहता। वह गाँव के लोगो से कम-से-कम मिलने का प्रयत्न करता। गाँव मे जो मन्दिर का वृद्ध पुजारी था वह कुछ परिवारो से सहायता पाकर मन्दिर मे दीप जलाता और अपना निर्वाह करता था। जयन्त भी उसे कुछ दे देता। किन्तु इधर कुछ समय से जयन्त ने उसे कुछ न दिया था। उस ओर कोई ध्यान भी नही था।

एकदिन जब जयन्त सन्ध्या के झुटपुटे मे, अपने घर से दूर, मन्दिर की ओर गया तो सीधा प्रतिमा के सामने जा खडा हुआ। कदाचित् उसदिन कोई जातिगत पर्व था, इसलिए पुजारी ने मन्दिर का आँगन साफ किया था। प्रतिमा को भी सजाकर उसके समक्ष दीया जला रहा था। उस दीपक के प्रकाश मे जयन्त ने देखा कि कृष्ण की वह प्रतिमा, जिसके हाथ मे बन्सरी है, सिर पर मुकुट है, और नीचे से ऊपर तक सुन्दर वस्त्रो से सुसज्जित है, तो उसे लगा कि जैसे समाज ऐसे सुकुमार और राजकुमार रूप मे बने कृष्ण की प्रतिमा को सजा कर अपने भगवान की कल्पना करता है। कुछ क्षण के लिए समाज उसी भावना मे डूब जाना चाहता है। जीवन की समस्याओ मे फँसा इन्सान जब हार मानता है, शान्ति और आत्म-चेतना की चाहना करता है, तो वह ऐसे ही एक भगवान को देख पाने की इच्छा

करता है। यों उस प्रतिमा की ओर देखते हुए, जयन्त ने सोचा कि भावना का रूप ही भगवान है। उस कृष्णरूपी मानव की आत्मा ऊँची थी, परम और सात्विक थी, तो वह मानव महामानव बन गया। जन-जन का पथ-वाहक! शान्ति और प्रेरणा का दूत! वह अमर और अमरत्व का जीवन-स्रोत!

जयन्त की आँखे भर आई। उस दिन उसने काफी परिश्रम किया था। थका हुआ था, पेट भी खाली था। किन्तु फिर भी वह दवाखाने से उठकर घर नही गया, मन्दिर पर पहुँच गया।

उसी समय पुजारी वहाँ आया। उसकी गर्दन हिल रही थी, पैर काँप रहे थे। पुजारी ने अपने शरीर पर जो कपडा धारण कर रखा था वह अत्यन्त जीर्ण और कई स्थानो से फटा था। उस अवस्था मे पुजारी को देख जयन्त का मन चीख उठा, "हाय! ऐसा है, यह पुजारी! भगवान की सेवा करने वाला भी अभावग्रस्त है!'

किन्तु पास आते ही पुजारी ने कहा, "अरे, तुम जयन्त भैया!"

जयन्त ने कहा, "नमस्कार, पुजारीजी।"

पुजारी ने कहा, "नमस्कार बाबू! आज तो बहुत दिनो मे आये। मन्दिर का रास्ता भी भूल गये। कभी आते थे जब वह चेता की लडकी अजना थी। पर अब वह भी इस गाव को छोड गई। पता नही अब कहा है। सुनता हूँ कि वह उपकार के काम मे लगी है। उसके मन मे भगवान बोलता है। कोई घर से दूर जाकर गगा मे गोता लगाता है, पर उस अजना के हृदय मे ही गगा फूट निकली है। वह उसी मे गोता मारती है। मलखान मुझे बताता था कि वह अजना दु:ख को देखकर रोती है, भगवान की असली पूजा तो वही करती है।"

पुजारी से इतनी बात सुनी तो जयन्त अनायास ही गद्‌गद् हो उठा। उसने कहा, "तो पुजारीजी, आप भी इस बात को स्वीकार करते है? यह मानते है कि इन्सान की सेवा ही भगवान की सेवा है?"

अपने स्वर पर ज़ोर देकर पुजारी ने कहा, "हाँ, भैया! वही असली पूजा है। यह मन्दिर मे दीया जलाना, चढावा चढाना तो दिखावा है। भला पत्थर मे क्या रखा है? केवल भगवान की कल्पना है। पर इन्सान मे

तो भगवान है। इन्सान रोता है, तो भगवान राता है। इन्सान हँसता है, तो भगवान भी हँसता है।"

जयन्त उस समय सचमुच ही प्रसन्न हो उठा। उसका रोम-रोम पुलकित हो गया। उसकी जेब मे मरीजो से प्राप्त फीस के रुपये पडे थे, जो लगभग सौ रुपये थे, वे सभी उसने निकाले और पुजारी की ओर बढाकर कहा, "मैं बहुत दिन से नही आया। अपना हक लीजिये।"

उन रुपयो को देखकर पुजारी ने कहा, "ले लूँगा, भैया! अब तो तुम आ गये हो।"

जयन्त ने कहा, "नही, नही, लीजिये। आपके कपडे भी फट चले हैं।"

पुजारी मुस्कराया, "इस पुजारी के कपडे क्या, यह स्वय फट चला है, भैया! अब यह शरीर देर तक नही रहेगा। तुम सभी प्रसन्न और सुखी रहो, यही मेरी आकाक्षा है।"

जयन्त ने पुजारी को रुपए दे दिए और बोला, "पुजारीजी, मैने तो धर्म-ग्रन्थ नही पढे, परन्तु यह अवश्य सुना है कि इन्सानी समाज की सेवा करना ही सबसे बडी पूजा है।"

पुजारी बोला, "भैया, इससे बडी और कोई पूजा नही।"

जयन्त बोला, "मैने यह भी सुना है कि पूजा करने का यह अर्थ नही कि उस आदमी के पास बडी सम्पदा आ जाए। वह सुखी बन जाए। उसका सम्बन्ध तो आत्मा से है जिसमे प्रकाश होता है। ऐसे इन्सान का दृष्टिकोण ऊँचा और सात्विक बनता है।"

पुजारी ने कहा, "हाँ, भैया, यही बात है।"

जयन्त मुस्कराया, "इस गॉव के मन्दिर की सेवा करते आपका जीवन बीत गया, पुजारीजी! जाने कितनो को आपने आशीर्वाद दिया, कितनो का भला चाहा। पर बताइए, आपको क्या मिला? केवल सन्तोष! वैसे लोगो को यह भी नही पता कि आप कहॉ के है, धरती के किस छोर पर पैदा हुए है। मेरी माँ ने एक बार मुझे बताया था कि आप यहाँ से दूर महाराष्ट्र मे पैदा हुए। वही आपका विवाह हुआ। पर किसी एक बीमारी मे वे सब समाप्त हो गए।"

पुजारी ने कहा, "अब तो वे सब पुरानी बातें हो गई है, भैया ! कभी याद आती है तो छाती पर एक लकीर-सी खिच जाती है। सभी की तरह अब मेरा भी यही स्थान बन गया है। राहगीर की तरह, इस मन्दिर के कुएँ पर थका और प्यासा आ बैठा था कि फिर यही बैठा रह गया। ससार के अधिकाँश मनुष्यो का यही हाल है, पैदा कही होते है और जाकर कही बसते है। इस मनुष्य-समाज के डेरे सदा उखडे रहते है।

जल्दी से जयन्त ने कहा, "हाँ-हाँ, यही बात है, पुजारीजी !"

पुजारी बोले, "मनुष्य स्वय अपना एक समाज है। जहाँ बैठता है वही अपने अभाव की पूर्ति कर लेता है। एक दिन न यहाँ मेरी भाषा बोलने वाले थे, न समझने वाले। मुझे भी अपनी बात कहने मे कठिनाई होती थी। पर अब ऐसा हुआ कि सभी कुछ सम हो गया है।"

जयन्त ने कहा, "मलखान आपके पास अधिक आता-जाता है। आज ही वह मुझे बताता था कि आप बीमार पडे थे।"

पुजारी ने कहा, "मलखान भला है। वह दु ख-सुख पहचानता है, तुम्हारी और अजना की सदा तारीफ करता है।"

जयन्त ने कहा, "वह मेरा बचपन का साथी है। मेरी भलाई चाहता है।"

"बडा अल्हड है, बडा बातूनी !" पुजारी ने कहा और हँस दिया।

जयन्त ने हाथ जोडे और चल दिया। जब वह अपने घर गया तो देखता है, मकान के बाहर चबूतरे पर पडी चारपाई पर मलखान पडा है। वह जाग रहा है। जयन्त को देखते ही वह उठ खडा हुआ और बोला, "तुम कहाँ गए थे, भैया ! मैं देर से बैठा हूँ।"

जयन्त ने कहा, "क्यो, खैर तो है ? जब तुम आते हो तो मुझे बुखार चढ आता है। लगता है कि जरूर तुम्हारे पास कोई समस्या है।"

मलखान हँस दिया, "अरे, भैया ! समस्याओ से तो यह ससार भरा है। शायद यही जीवन है। आदमी इसी में उलझता है। और मुझमे तो किसी समस्या या किसी की आपदा को सुलझाने की शक्ति है नही। इसलिए तो क्यो न तुम सरीखे समर्थ व्यक्तियो का सहारा लिया जाए।"

जयन्त ने कहा, "हाँ-हाँ, मुझे कब इन्कार है।"

मलखान बोला, "अगर तुम अधिक भूखे न हो, तो मेरे साथ चलो। शुभदा भाभी मुझ पर नाराज़ होंगी तो सुन लूँगा।"

जयन्त चारपाई पर बैठ गया और बोला, "कहाँ ले चलना है, रे!"

मलखान बोला, "चमारो के पुरवे मे! धनपत चमार का जवान लडका जाने कैसे बीमार पड गया। दो दिन से बोल भी नही रहा है। उसके पास कुछ भी देने को नही, है दवा के साथ जो पथ्य बताओगे, उसका पैसा भी "

जयन्त हँस दिया, "वाह-वाह! तेरा भला मरीज़ है, रे! अच्छा, चल! दवाखाने से पेटी ले।"

दोनो उठ पडे। दवाखाने से दवा की पेटी के साथ जयन्त ने मेज की दराज से कुछ रुपए भी निकाल लिये और वह मलखान के साथ चल दिया। जब वह गाँव का पूरा चक्कर काटकर चमारो के पुरवे मे पहुँचा तो धनपत चमार के घर मे प्रविष्ठ होते ही उसे लगा, सचमुच, कहने को इन्सान धरती पर आ पडा है, परन्तु जाने क्यो नाबदान के कीडों के सदृश यह इन्सान सड रहा है। उसने देखा कि धनपत का लडका जिस कोठरी मे पडा है वह छोटी सी है। आले मे रखे मिट्टी के दीया से धुआँ चारो ओर फैल रहा है। बदबू उठ रही है। कोठरी के बाहर जो गली है, निश्चय ही, वह वर्षों से साफ नही की गई है। उसकी बदबू उस कोठरी मे भी आ रही है। जिस चारपाई पर बीमार पडा है, वह भी टूटी पडी है। बीमार की कमर धरती को छू रही है, चारपाई पर ठीक से कपडा भी नही बिछा है, शायद उस घर मे किसी के बदन पर शऊर का कपडा नही है। बीमार की बहू जो जवान है, दो-तीन वर्ष की विवाहिता है, घूँघट काढे वही बैठी है। उसका एक बच्चा वही जमीन पर पडा बिलख रहा है और कदाचित् दूसरा पेट मे ." बीमार की परीक्षा करने से पूर्व जयन्त ने इतना सब देखा तो वह अनायास सहम गया। उसे लगा कि भगवान दरिद्रता मे और बोझ बढाता है, विभिन्नता फैलाता है। उसने बीमार की परीक्षा की। नब्ज़ देखी, छाती देखी, आँखे देखी। उसने पूछा, "इसे कब से बीमारी है?"

बूढे धनपत ने कहा, "सरकार, दस दिन हो गए।"

"और दवा नही दी? बीमारी बढा दी। इसका मियादी बुखार बिगड़

गया है। सावधानी चाहिए।"

धनपत गिडगिडाया, "डाक्टरसाहब, मैं गरीब बूढा "

आतुर बनकर जयन्त ने कहा, "हाँ-हाँ, गरीब होना कोई पाप नही। मन से गरीब मत बनो।" उसने पेटी खोली और कुछ गोलियाँ दी। बीमार को एक इन्जेक्शन लगाया। तभी वह जेब से दस रुपये का नोट उस धनपत के हाथ पर रखता हुआ बोला, "इस बीमार को दूध देना और कुछ नही। दिन मे चारपाई भी बुनवा लेना। कल शाम को मुझे बताना।"

उसी समय मलखान ने पेटी उठा ली और चलने लगा। धनपत बोला, "भगवान तुम्हारा भला करे।"

जयन्त ने कहा, "चिन्ता न करो। भगवान ठीक करेगा।" वह चल दिया।

रास्ते मे मलखान ने कहा, "देखा भैया, कितना गरीब है। रहने को भी ठीक से स्थान नही।"

जयन्त ने दुखित मन से कहा, "सचमुच ! इन्सान दु खी है। मोहताज है। धनपत की कोठरी मे रहना तो मौत को निमन्त्रण देना है।"

मलखान बोला, "सडे हुए नाबदान के कीडे भी इसी तरह जिन्दगी बिताते है।"

तेज़ चाल से चलते हुए जयन्त ने कहा, "यह इन्सान भी कीडा है नाबदान मे सडता हुआ निरा बेचारा और दीन।"

अट्ठाईस

गाँव मे आकर भी जयन्त इस बात को नही भूला था कि जिस समय वह उस पहाडी क्षेत्र के अस्पताल से चला तो वहाँ के स्टेशन पर बिदाई देते समय अजना देर तक अपनी आँखो के आँसू रोके रही थी। निश्चय ही, वह उन आँसुओं का प्रदर्शन करने के लिए तत्पर नही थी। किन्तु जब गाडी छूटी

तो वह अश्रु-जल आँखो के द्वार पर आया और उसके गोरे गालो पर बह गया।

उसी समय प्रोफेसर ने सुनाया, "यह क्षेत्र तुम्हे याद करेगा। तुम्हारा ऋणी रहेगा।"

जयन्त ने कहा, "मै याद रखूँगा कि यहाँ के वासियो की सद्भावना पाई, प्यार पाया। मैं अपना समय यहाँ आकर भली प्रकार बिता सका। हर्ष है कि यहाँ के लोगो की सेवा करने का अवसर पा गया।"

उस समय अस्पताल का वृद्ध चौकीदार और जयन्त के साथ काम करने वाली नर्से भी रो पडी थी। उन्ही मे एक गौरी नाम की नर्स भी थी। वह अतिशय अल्हड और चचल थी। जब वह अपने आँचल मे मुँह डालकर सुबक पडी तो जयन्त ने कहा, "अरे तू भी रोती है, गौरी। तेरा कोई काम हो तो मुझे लिखना। कभी-कभी अपने कुशल समाचार देती रहना।"

प्रोफेसर ने कहा, "मैं आऊँगा। तुम्हारे गाँव मे पहुँचूँगा।"

जयन्त ने कहा, "आप आएँ तो मेरा सौभाग्य होगा। पर आपका वहाँ आना कठिन लगता है। क्योकि आप पर यहाँ का उत्तरदायित्व है।"

प्रोफेसर ने कहा, "नही। मैं भी स्वतन्त्र बनूँगा। यहाँ का सब काम अजना का है।"

जयन्त ने कहा, "अजना अभी दुर्बल है। उसे आपकी सहायता चाहिए।"

प्रोफेसर ने कहा, "हाँ, यह तो मैं देख ही रहा हूँ। इसकी आँखो मे भरे ये आँसू भी सिद्ध करते है कि मन की ममता अभी नही गई। तुम्हारा आना इस अजना के लिए बहुत सहायक बन गया था।"

जब गाडी छूट चली तो अनायास अजना ने जयन्त के पैरो को हाथ लगाया और कहा, "कुछ कहा हो तो भूल जाना। आ सको तो आना।"

उस समय जयन्त स्वय इतना आकुल और गम्भीर बन गया कि बोल नही सका। यही अच्छा हुआ कि वह रो नही सका। उसी समय गाडी ने प्लेटफार्म छोड दिया।

किन्तु गाँव मे आकर जब भी जयन्त एकान्त मे होता तो वह प्राय सोचता कि वह अजना भिक्षुणी भले ही बन गई, परन्तु जो भावना बचपन

से उसे आलोडित करती रही, वह आज भी जीवित है। जब किसी मरीज को देखने के लिए जयन्त उस हरिजनो के पुरवे मे जाता, तो अजना का मकान देखकर प्राय ठिठकता और सोचता, एक दिन था कि वह यहाँ आकर बैठता था, मधुर भावना का सृजन करता था। अब वह मकान टूट-फूट गया है। किसी पडौसी के ढोर उसमे बँधे रहते है। जनहीन बनकर वह मकान भी खण्डहर हो गया है। इसके विपरीत जयन्त का मकान पहले की अपेक्षा अधिक शानदार है। वह नये सिरे से बना है। किन्तु उस खण्डहर बने मिट्टी के ढेर को देख जयन्त के मन मे आता कि वह उसे नमस्कार करे, क्योकि वहाँ पर बैठकर उसने जीवन की नई अनुभूति पाई थी और जाने किस जन्म के सस्कारवश उस अपरिचित अजना को अपनी पा सका था।

इस प्रकार जब से जयन्त गाँव लौटा, तो वह पहले की अपेक्षा न तो डाक्टरी के काम मे अधिक समय देता और न ही पहले के समान रुपया उपार्जित कर पाता। कोई मरीज पैसा न देना चाहता तो वह टाल देता। यो फुरसत के समय वह घर पर भी कम बैठता। वह या तो जगल मे घूमता या अपने बैठकखाने मे बैठा हुआ किसी किताब को पढता रहता। उन दिनों उसका अध्ययन का क्रम भी बदल गया था। वह कभी उपन्यास न पढता, कहानी भी नही, या तो इतिहास पढता अथवा दार्शनिक ग्रन्थ।

ऐसी अवस्था मे ही एक दिन शुभदा ने कहा, "मैं अपनी माँ के पास जाऊँगी।"

सुनकर जयन्त ने तुरन्त कह दिया, "हाँ, हाँ, क्यो नही।"

निश्चय ही, उस समय कदाचित् शुभदा यह सुनने की आकाक्षित थी कि जयन्त उसे जाने से रोके। कह दे, ऐसी क्या आवश्यकता है। किन्तु उसने जब तुरन्त ही दो शब्दो मे अपनी सम्मति प्रकट कर दी तो शुभदा फिर बोली, "हाँ, मैं सोचती हूँ, इस अवस्था मे मेरा इस घर से भी दूर रहना अच्छा है। कुछ समय के लिए जरूर तुम्हे अकेले रहना पसन्द आ सकता है। माँ ने मुझे बुलाया भी है। पिताजी को कुछ तकलीफ है।"

अपने स्वभाव के अनुरूप शुभदा ने जिस स्वर मे बात कही थी उससे जयन्त चकित नही बना, अतएव वह कुछ नही बोला। वह घर के आँगन

से उठकर बाहर की ओर चल दिया। वह उस समय दवाखाना बन्द करके ही घर मे गया था। अतएव फुरसत मे था। किन्तु उस अवस्था मे, जिस प्रकार शुभदा ने अपनी बात कही थी, जयन्त अनायास ही विषम और गम्भीर बन गया। उसका मानसिक स्तर भी त्रस्त हो उठा। अत वह एकान्त चाहता था। उन दिनो जगल मे हरियाली थी। चारो ओर खेतो मे कुछ-न-कुछ दिखाई देता था। लेकिन अभी जयन्त अपने घर से कुछ दूर ही चला था कि तभी पीछे से हरीश नाम का युवक समीप आ गया। उसने कहा, "मै तुम्हारी तरफ जा रहा था। कहो, किधर जाने का विचार हुआ है ?"

जयन्त ने कहा, "निरुद्देश्य !" वह बोला, "सुनाओ, तुम्हारा कालेज कब खुलेगा ?"

हरीश ने कहा, "अभी एक सप्ताह और है। यहाँ समय नही कटता। जब कालेज मे जाता हूँ तो छुट्टी की इच्छा होती है, परन्तु इन छुट्टियो मे तो "

बात तोडते हुए जयन्त ने कहा, "आदत की बात है। बेकारी मे समय नही बीतता।"

दोनो गाँव से बाहर निकल चले। उस समय सन्ध्या का समय था, इसलिए किसान खेतो से लौट रहे थे। जो व्यक्ति भी सामने पडता वह जयन्त का अभिवादन करता क्योकि उन दिनो वही उस गाँव का विशिष्ट व्यक्ति था। उससे लोगो का स्वार्थ पूरा होता था।

यह देखकर ही हरीश हँसा, "देखो जयन्त, अब तुम इस गाँव के मुखिया हो, सम्पन्न हो।"

जयन्त मौन रहा। वह सामने से आते हुए आकाश मे उडते बगुलो के एक दल को देखने लगा जो दिन-भर के बाद अपने घर की ओर लौट रहा था।

किन्तु हरीश ने फिर कहा, "भैया, इस जगत् मे जिसका जिससे स्वार्थ पूरा होता है वही सिर झुकाता है। यह स्वार्थ की दुनिया है।"

जयन्त ने कहा, "तो इसमे आपत्ति क्या ?"

हरीश बोला, "आपत्ति तो है, ससार मतलबी है।"

जयन्त हँस दिया। वह एक खेत के डौले पर खडा हो गया।

तभी हरीश ने फिर कहा, "मै तुम्हारे पास आ रहा था, एक नई बात सुनाने के लिए। कालेज के साथी एक प्रोफेसर का पत्र मिला हे। उसी मे एक व्यक्ति का उल्लेख है। वह व्यक्ति अपनी पत्नी के कारण दुखी है, त्रस्त है। उसने अधिक शिक्षा-दीक्षा पाई है। बडे घर की लडकी से उसका विवाह हो गया। लेकिन सासारिक जीवन मे वह इतना उपार्जित नही कर पाता कि जितना उसकी पत्नी को चाहिए। वह फैशनेबिल है, अतिशय महत्वाकाक्षिणी। और वह बेचारा दर्शन का प्रोफेसर! छुट्टियो मे वह पहाड की कन्दराओ मे घूमता है, साधु-सन्यासियो के बीच बैठता है। मेरे साथी ने लिखा है कि ऐसी अवस्था मे वह मर जाएगा, देर तक जीवित नही रह सकेगा। हाँ, एक दिन मलखान बताता था कि तुम्हारा भी शुभदा भाभी से "

जयन्त ने कहा, "नही,-नही," मै इसे पुरुष की दुर्बलता मानता हूँ। तुम्हारे उस दर्शन के प्रोफेसर की कमी को अनुभव करके, मै अपने को भी दोषी पाता हूँ।"

हरीश ने कहा, "नही, भैया! घर की औरत को, जो पत्नी है, पति के विचारो से सहमत बनना ही चाहिए। उसका यही कर्तव्य है।"

जयन्त ने बात सुनी तो हरीश की ओर देखकर उसने कहा, "तुमने एम ए किया है न, तो लगता है अभी कम पढा है। औरत के लिए तुम्हारा उदारपक्ष निर्बल है। लगता है कि तुम्हारे विचार भी दकियानूसी हैं।" वह बोला, "हरीशबाबू, पुरुष के साथ नारी का भी कोई अधिकार है। आवाज उसकी भी है। जब वह पुरुष के लिए अपना आत्म-समर्पण करती है तो क्या इतना अधिकार नही रखती कि पुरुष से माँग करे! वह उसकी शारीरिक इच्छाओ के साथ मानसिक और आत्मिक इच्छाएँ भी पूरी करे! उसके लिए भौतिक पदार्थों की उपलब्धि करने का प्रयत्न करे!"

हरीश ने कहा, "इस प्रकार समन्वय नही होता, भैया!"

जयन्त ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "होता है। दोनो को एक मध्यवर्ती मार्ग चुनना पडता है। वह प्रोफेसर भला क्यों बडे घर की लडकी से विवाह करने के लिए तैयार हुआ? यही अवस्था मेरी भी है। शुभदा बडे

बाप की बेटी है। लाड-प्यार मे पली है।"

हरीश मुस्कराया, "पैसा तो तुम्हारे भी पास है। प्रतिष्ठा है। ऐसा पति क्या सुगमता से मिलता है ?"

क्षुब्ध भाव से जयन्त ने कहा, "नही, नही, मै वास्तविकता देखता हूँ। मेरे पास अभी पैसा आया है। मै एक न्यौता खाने वाले ब्राह्मण का लडका हूँ जिसके बाप ने सूद लेकर रुपया उपार्जित किया। दमडी जोड-जोडकर मुझे पढाया। मेरे माता-पिता कितने अभावग्रस्त थे, उसे मै आज भी याद करता हूँ। लेकिन शुभदा ने तो कभी अभाव नही देखा। इसलिए वह पति के घर आकर अधिकतम भोगो की कल्पना करती है। कौमार्य मे उसकी अपने पति के लिए जिस प्रकार की कल्पनाएँ थी, जब उन्हे नही पाती तो क्षुब्ध बनती है, विद्रोह से परेशान होती है। निश्चय ही उस दार्शनिक प्रोफेसर की पत्नी भी इसी विद्रोह से भरी होगी। परेशान होगी।"

साँस भरकर हरीश बोला, "तो अब क्या हो! उसकी पत्नी भी अतिशय सुन्दर है। अपने नगर के एक सम्पन्न एडवोकेट की लडकी है।"

जयन्त बोला, "अब क्या होगा? वह प्रोफेसर या तो मर जाएगा या कुढ-कुढकर जीवन बितायेगा।"

हरीश ने कहा, "सचमुच, वह दुखी है। उसकी मानसिक गति बदल चुकी है। अब वह पत्नी से दूर रहने की चेष्टा करता है। उसकी वह मधुर और सलोनी पत्नी अपने पिता के यहाँ से एक विलायती कुत्ते का बच्चा ले आई थी, तो वह उसी को अपना प्यार प्रदान करती है। आये दिन किसी-न-किसी बात पर वह पति से लडती है। मैने तो उस प्रोफेसर को सलाह दी है कि वह पत्नी से त्याग कर ले। पर वह ऐसा नही मानता। वह पत्नी की इच्छाओ को अशोभनीय भी नही देखता। वह कुछ कहती है, तो सुनता है, मुस्कराता है।"

जयन्त ने कहा, "तो वह धीर है, गम्भीर है।"

हरीश बोला, "पूरा दार्शनिक है। वह जब एकान्त मे होगा तो बड़-बडाएगा, कभी रो भी पडेगा।"

यह सुनकर जयन्त ने साँस भरी और छोड दी, उसने कहा, "नि सन्देह

वह प्रोफेसर सीधा है, सरल है ।

हरीश ने उल्लास के साथ कहा, "सभी उसको स्नेह करते है। कालेज के विद्यार्थी भी उसका अपेक्षाकृत अधिक सम्मान करते दिखाई देते हे ।"

उस समय अँधेरा अधिक बढ गया था। गॉव मे मन्दिर पर आरती होने लगी थी। शख-घडियाल बज रहा था।

हरीश ने कहा, "अब लौटे ?"

जयन्त ने कहा, "हॉ, चलो ।"

दोनो गॉव की तरफ चल पडे। रास्ते मे वे दोनो बाते करते जाते। हरीश बोला, "जयन्त भैया, यह भी विषम समस्या है। पत्नी का विपरीत मिल जाना आदमी के लिए घातक है ।"

जयन्त ने कहा, "यही पत्नी के लिए है। मैं ऐसी अनेक स्त्रियों को जानता हूँ कि जिनके पति अच्छे नही, दुर्व्यसनी है, तो वे नारियां रोती है, आँखो के आँसू भी छुपाती है, जिन्दगी के अँधेरे मे पडी सिसकती है ।"

हरीश ने कहा, "मुझे लगता है कि विवाह की परम्परा मिट जाएगी। समय जिस तेजी से बदल रहा है, समाज की पुरानी परम्पराएँ अब देर तक नही टिक सकेगी ।"

जयन्त बोला, "ऐसा मुझे भी लगता है ।"

हरीश ने कहा, "लेकिन यह अनुभूति, यह भावना ऐसे क्या रह सकेगी ? यह भी मिट जाएगी ।"

जयन्त मौन ही रहा।

गॉव आ गया था। सामने आते हुए मलखान ने जयन्त को कहा, "कहाँ थे भैया, घर पर एक तार आया है। वह मैंने शुभदा भाभी को दे दिया है ।"

सुनकर जयन्त घर की ओर बढ गया।

उन्तीस

तार अजना द्वारा भेजा गया था। उसमे लिखा था कि प्रोफेसर बीमार है। जयन्त को बुलाया था।

उसी समय नौकर ने सूचना दी कि भोजन तैयार है। उस समय जयन्त को भूख तो लगी थी, किन्तु उस तार को पढकर वह एकबारगी प्रोफेसर की सीमा मे पहुँच गया। क्योंकि प्रोफेसर का वह आभारी था। जो कुछ उसके पास था वह सब प्रोफेसर से प्राप्त हुआ था। अब प्रोफेसर वृद्ध हो चुके थे, कभी भी इस धरती से उठ सकते थे। किन्तु उन्होने अपने एक जीवन मे कितने विद्यार्थियो, समाज के व्यक्तियो का उपकार किया। यद्यपि इसका लेखा-जोखा तो जयन्त के पास नही था, तो भी प्रोफेसर के विषय मे उसका ज्ञान अपरिमित था। प्रोफेसर बीमार है तो उसे वहाँ जाना अवश्य चाहिए। किन्तु वह अब शुभदा से यह नही कह सकता था कि उसे जाना है, प्रोफेसर बीमार है, अजना ने बुलाया है।

जयन्त बैठा यह सोच ही रहा था कि तभी शुभदा स्वय वहाँ आई। उसने पूछा, "किसका तार आया है?"

जयन्त ने सीधे-स्वभाव कह दिया, "अजना का! प्रोफेसर बीमार है।"

शुभदा ने इतना सुना, तो आतुर स्वर मे कहा, "तो तुम्हे बुलाया है!" वह बोली, "बुलाया हो, तो तुरन्त जाओ। उस देवता को बचाना तुम्हारा सबसे बडा कर्तव्य है।"

जयन्त ने बात सुनी, तो चुप हो रहा। वह शुभदा की ओर देखने लगा।

शुभदा बोली, "सच, वह प्रोफेसर वीतरागी सन्यासी है।"

जयन्त ने साँस भरकर कहा, "सो तो है ही! प्रोफेसर परम सात्विक है। उसके लिए मै अपना विसर्जन भी कर सकता हूँ।"

शुभदा बोली, "माँ का पत्र मिला है, बीमार है। कहोगे, तो मैं भी दो-चार दिन उधर हो आऊँगी। माँ को देख आऊँगी।"

जयन्त ने कहा, "हा-हाँ, तुम्हे भी माँ की सेवा करना श्रेयस्कर है। तुम्हारा वही पुण्य-तीर्थ है।" वह साँस भरकर बोला, "मेरे तो माता-पिता अब रहे नही कि जिनकी सेवा करता। मै अब भी अपनी माँ को याद करता हूँ। मै इस बात को क्या भूल सकता हूँ कि मेरी माँ ने मेरे लिए अपूर्व त्याग किया। उसने मेरे लिए जीवन ही विसर्जित कर दिया।"

शुभदा ने कहा, "मेरी माँ की कोई और सन्तान होती तो ठीक था। एक मैं ही हूँ जिसके लिए उसके प्राण सदा भटकते है। पर अब ललित और सुधा को देखने के लिए उसका मन छटपटाता है। उनके लिए मुझसे लडती है, फटकार देती है।"

जयन्त ने कहा, "मै कल जाऊँगा। जल्दी न लौटा तो तुम चली जाना। माँ से मिल आना।" यह कहते हुए जयन्त प्रसन्न भाव से घर के बाहर चल दिया।

वह अपने दोनो बच्चो को साथ लेता चला। वहाँ से जब वह मन्दिर के समीप पहुँचा तो उसने तारो भरे आकाश की ओर देखकर कहा, "जो बात आज शुभदा ने प्रसन्न भाव से कही, इस प्रकार पहले नही कहती थी। इतनी प्रफुल्ल नही दिखाई दी थी। सचमुच, यह नारी जहाँ कठोर है, सरल भी है। निश्चय ही, सभी के समान यह शुभदा भी परिस्थितियो से घिरी है, उनकी दास है। यदि यह शुभदा एक बडे जमीदार की पुत्री न होती तो इसके हृदय की भावना यो मोड न लेती, इस सरल और भावनामयी नारी को अव्यवस्थित न बनाती। और आज इस शुभदा की कठिनाई है कि वह पत्नी है, माँ है। इन दो स्थितियो मे घिरी है। यो मन मे आते हुए और विलोडित हुए विचारो के फलस्वरूप, जयन्त के मन मे आया कि वह अभी घर लौट जाए और उस स्नेहमयी, स्वाभिमानिनी शुभदा को जाकर सुनाए, री शुभदा! सच, तू मेरी बात पर भरोसा कर, मेरी दृष्टि मे तू अनुपम है, गगा का पवित्र जल है। इच्छा होती है कि मैं तेरे चरणो को पखारूँ, तेरा अभिवादन करूँ।

उसी समय मन्दिर के चबूतरे पर खडे पुजारी ने कहा, "कौन जयन्त बाबू! अरे, तुम वहाँ कैसे खडे हो! यहाँ आकर बैठो। बच्चो को बुला

लो।" और वह स्वय खेलते हुए बच्चो की ओर बढ गया ।

सुधा ने कहा, "पुजारीजी, प्रसाद दोगे ?"

पुजारी ने गदगद् हो कहा, "हाँ बिटिया, क्यो न दूँगा ।"

ललित बोला, "मैं भी लूँगा ।"

पुजारी ने कहा, "हाँ, तुम भी ।" उसने जयन्त को लक्ष्य किया, "अँधेरे मे रास्ते पर खडे थे । क्या देख रहे थे, बाबू !"

जयन्त ने कहा, "आकाश की ओर देख रहा था । आज का निकलता हुआ चाँद सुन्दर और कलात्मक लग रहा था ।"

पुजारी ने कहा, "त्रियोदशी का चाँद है । छोटा निकलता है, भला लगता है ।"

जयन्त बोला, "लेकिन इस धरती पर रहने वाला इन्सान ऊपर क्या पाएगा । आकाश के तारो को गिन भी नही सकेगा ।"

सुनकर पुजारी मुस्कराया, तनिक हँसा । उसने कहा, "बाबू, तुम तो अधिक पढे हो । पर मेरा ख्याल है कि आदमी दूर की वस्तु को देखकर आनन्द पाता है । उसी मे सुख की कल्पना करता है । दूर से चाँद भी शीतल लगता है, पर उसके उदर मे भी आग है ।"

जयन्त ने कहा, "सर्वत्र यही लगता है ।"

पुजारी बोला, "अभी तो यही अवस्था है । समीप की वस्तु से सन्तोष नही होता । आदमी अपने को जाने कितनी परिस्थितियो मे ढालता है । इस एक जीवन को अनेक रास्तो पर चलाता है ।"

सुनकर जयन्त मौन रह गया । तभी पुजारी ने फिर कहा, "बाबू, इस दुनिया मे यही होता है । धोखा, छल और ईर्ष्या का धुआँ सभी ओर घुटा दिखता है । प्रणय-भोग के साथ जो समर्पण की परिपाटी है, यह जीव-जगत् उसी की आराधना मे लीन बना है । सर्वत्र माया का जाल फैला है, स्वार्थ बढ गया है । सदा के समान आज भी आदमी अकेला है ।"

यद्यपि किसी और समय भले ही जयन्त पुजारी की उस बात को ध्यान से न सुन पाता, परन्तु उस समय तो स्वय मन लगाता हुआ बोला, "पुजारीजी, रहस्य से पूर्ण है यह इन्सान का जीवन, सच, प्रभावपूर्ण ! देखो तो, सर्वत्र समर्पण का बोलबाला है । हाँ, इस सजे हुए ससार मे क्या

कुछ नही दीखता ? इस भावभरे इन्सान मे सदा ही आत्मानुभूति का आभास मिलता है। तुम्हारे मन्दिर की देव-प्रतिमा को जब मै देखता हूँ तो उसमे भी यही पाता हूँ। समर्पण और आत्म-त्याग के अतिरिक्त भला क्या है, इस जगत मे, इस विश्व के कोलाहल मे।"

पुजारी ने कहा, "सत्य है, बाबू!"

जयन्त बोला, "पुजारीजी, फिर भी मनुष्य असन्तुष्ट है।"

पुजारी ने कहा, "यह मन की दुर्बलता है। मनुष्य दुर्बल है। तुरन्त हँसता है, तुरन्त रोता है, परावलम्बी है। एकात्मीय नही।" वह बोला, "देर से इस मनुष्य मे जडता है, दम्भ है।"

अपने स्वर पर जोर देकर जयन्त बोला, "अन्तत मनुष्य पशु है। शिक्षित और बुद्धिजीवी भी इससे ऊपर नही उठा है।"

इसी समय सुधा ने पास आकर कहा, "पापा, चलो घर!"

जयन्त ने कहा, "हाँ, चलेगे।"

पुजारी ने एक डिब्बा उतारा और उसमे से बताशे निकालकर सुधा और ललित को दिये। वह उनके सिर पर हाथ फेरने लगा।

उसी समय जयन्त बोला, "पुजारीजी, सर्वत्र ममता और प्यार का प्रसार है। इस नर और नारी के जगत ने निरन्तर ही नई-नई अनुभूतियो और प्रगतियो का विकास किया है। देखिए तो, मनुष्य बर्बर है, क्रूर है, आततायी है, तो नारी ने अपना समर्पण करके नई और अनोखी दिशा पर फेक दिया है।"

एकाएक पुजारी ने प्रश्न किया, "बाबू, अब तो बहूरानी से झगडा नही होता ? एक बार मलखान कहता था कि शुभदारानी बडे घर की है, तो ..."

तुरन्त ही जयन्त बोला, "पुजारीजी, मै अपनी भी कमजोरी समझता हूँ। सच, शुभदा से मेरा सम्बन्ध नही होना था। उसे किसी बडे घर जाना था। मै एक देहाती, यो सीधा-सादा, बचपन के सस्कारो से निर्मित महत्वा-काक्षिणी शुभदा को यह सब नही रुचेगा। भला नही लगेगा।"

"पुजारी ने कहा, "यह स्वाभाविक है।"

जयन्त ने कहा, "भूल मेरी थी। मुझे उसका प्रायश्चित्त करना ही

पडेगा। लोग समझते है कि औरत झुकती है, पर मेरा ख्याल है कि आदमी झुकता है। मुझे भी शुभदा के समक्ष अपनी आकाक्षा को मार देना होगा। यह सच ही है कि मै भी नारी की कल्पना करता हूँ, धन की इच्छा रखता हूँ। आज तो मुझे लगता है कि मै सेवा और आत्म-त्याग का झूठा स्वाँग रचता हूँ। मै स्वय दम्भी हूँ।"

साँस भरकर पुजारी ने कहा, "नही बाबू! तुम्हारी तो लोग बडाई करते है। तुम्हारी भावना को समझते है।"

क्षुब्ध बनकर जयन्त बोला, "यदि मैं अपनी पत्नी को अपने अनुरूप नही पाता, उसे अपना स्वरूप नही दिखा पाता, तो सब बेकार है। मेरी असफलता है। यदि मेरी पत्नी ही मुझसे असन्तुष्ट हो तो मेरे पास जो कुछ है वह सब बेकार है।"

लडके ललित ने कहा, "पापा "

जयन्त ने कहा, "हॉ-हाँ, अभी चलते है बेटा!" वह पुजारी से बोला, "मैं फिर यहाँ से जाना चाहता हूँ। मुझे अनुभूति चाहिए, प्रेरणा भी। कल चला जाऊँगा, प्रोफेसर बीमार है। तार आया है।"

पुजारी बोला, "बाबू, जाओ तो जल्दी लौटना। अपने इस समाज को न भूलना। यह गाँव तुम्हारा है। उसीने तुमको पैदा किया है। इसका तुम पर अधिकार है। शुभदा बहू से भी दूर न रहो।"

जयन्त ने कहा, "नही, नही, मैं उस शुभदा के सदा समीप रहूँगा। उसके प्रति अपना कर्तव्य न भूल सकूँगा। मैं जल्दी लौट आऊँगा।" यह कहते हुए वह खडा हो गया। उसने कुरते की जेब मे हाथ दिया तो अजना के तार के साथ अन्य लिफाफा भी उसके हाथ मे आ गया। वह उसी को उलटता-पुलटता बोला, "पुजारीजी, ये सभी जीवन के धन्धे है, कच्चे धागे हैं, जो कभी टूटते है, कभी जुडते है। मेरे तो मन मे है कि यदि मेरी पत्नी मुझे त्यागना पसन्द करे, किसी अन्य व्यक्ति का वरण करे, तो मैं आपत्ति नही करूँगा। मैं सहर्ष शुभदा के प्रस्ताव का स्वागत कर सकूँगा!"

एकाएक इतनी भारी बात सुनकर पुजारी बोला, "नही, नही, शुभदा परम है, पवित्र है।

जयन्त बोला, "हॉ-हाँ, मै उसे पवित्र मानता हूँ। परन्तु पत्नी की

इच्छा के प्रति उपेक्षित बनना मै अशुभ मानता हूँ ।"

बात सुनी तो पुजारी मौन रह गया । वह तारो भरे आसमान की ओर देखने लगा । उसने सहज ही अनुभव किया कि जरूर इस जयन्त के मन मे कुछ है, प्रतिशोध है, प्रतिक्रिया का भाव है । यह अपने मानस के अन्दर भरे जहरीले धुएँ मे छटपटा रहा है । उसने सहज भाव से कहा, "नही बाबू, तुम गृहस्थ हो, बाल-बच्चेदार हो । तुम्हारे ये फूल सरीखे बच्चे "

जयन्त ने कहा, "इन पर शुभदा का अधिकार है, मेरा नही ।"

पुजारी बोला, "नही, तुम्हारा भी है । क्या तुम इन बच्चो को प्यार करना नही चाहते ? इनसे ममता नही रखते ? बोलो, इन्हे समाज का विशिष्ट व्यक्ति नही देखना चाहते ? अब तुम्हारी यही भूख है । केवल एक यही आकाक्षा । चिर पुरातन से चली आई यही परम्परा है । अब तुम्हारी बारी है ।"

जयन्त ने कहा, "जी हाँ, यह भी है । परन्तु इन बच्चो के समान, मै समाज के अन्य बच्चो को भी देखता हूँ । क्या मै किसी और का नही हू ? पुजारीजी, मैं एक से अनेक मे मिल जाना पसन्द करता हूँ ।"

पुजारी ने कहा, "यह महान आदर्श है । मनुष्य का ऊँचा विचार है ।"

जयन्त ने कहा, "आप मुझे आशीष दे कि मै इसी परम्परा का अनुकरण करूँ । मै समाज के अन्धकार मे खो जाऊँ ।"

सुनकर पुजारी एकाएक अपना मत नही दे सका । वह अपना सिर झुकाये खडा रहा ।

जयन्त ने कहा, "एक बार कुछ दिन हुए आपने कहा था कि जब आपके स्त्री-बच्चे मर गए तो अपना घर और प्रान्त छोड दिया । जीवन के दरिया मे बहते हुए इस गाँव मे आ गए । मैं बचपन से देखता हूँ कि इस गाँव के सभी आपके बन गए । सभी घरो के बच्चे आपके हो गए । मुझे आप परम और सुखी लगते है ।"

पुजारी ने फिर अपनी दुर्बल दृष्टि ऊपर उठाई और कहा, "इन्सान का स्वभाव है कि अपने मन का अभाव किसी प्रकार भरता है, पूरा करता है । यह सच है कि जाने किस सस्कारवश मै यहाँ आ गया । हजार कोस का फासला लाँघकर यहाँ आ पहुँचा ।" वह बोला, "भैया, बडा रहस्यपूर्ण

ससार है यह ! आदमी कही भी खो जाता है। किसी को भी अपना बना लेता है। यह सच है, जोर-जबर्दस्ती से कोई अपना नही बनता, आत्म-समर्पण नही कर पाता। यह तो सस्कारो की बात है। शुभदा बहू और तुम्हारा मेल रहे। तुम्हारा यह सलोना ससार फलता-फूलता रहे, यही मेरी आकाक्षा है।"

प्रसन्न बनकर जयन्त बोला, "आपका आशीर्वाद चाहिए। समाज जिस लीक पर चल रहा है, मैं देखता हूँ कि इस बदलते समय मे वह अर्थहीन है, सारहीन है। उसका उपहास होता है। आज परिवार और बच्चो को कौन महत्व देता है। बोझ समझा जाता है।"

पुजारी ने कहा, "अब लोगो मे धर्म के प्रति निष्ठा नही रही। किसी को आत्मवत् बनना भी पसन्द नही है। समर्पण और आत्मानुभूति के नारे तो लगाये जाते हैं, लेकिन व्यवहार मे उसका कोई अस्तित्व नही है।" पुजारी ने साँस भरी और कहा, "देखता हूँ कि ससार सज रहा है, भौतिक पदार्थ बढ रहे है। नारी सज रही है तो नर भी सज रहा है, परन्तु लोग जितने ऊपर से उजले है, मन उनका उतना ही मैला है, घिनौना है !"

जयन्त ने साँस भरी और बोला, "नि सन्देह ! मनुष्य अन्धा है। विवेकहीन है। समाज का अध पतन हो चुका है। पुरुष के समान नारी ने भी अपना महत्व दूसरे अर्थो मे अभिव्यक्त करना आरम्भ कर दिया है।"

जयन्त चल दिया। पीछे से पुजारी ने कहा, "बाबू, नासमझी मे कोई कार्य न करना, बच्चो का ध्यान रखना।"

जयन्त ने कहा, "पुजारीजी मै भी मनुष्य हूँ, दुर्बल हूँ। इन बच्चो मे अपना अस्तित्व पाता हूँ।"

पुजारी ने कहा, "भगवान तुम्हारा भला करे।"

जयन्त चला गया। जब वह घर पहुँचा तो देखा, शुभदा अपने बिस्तर पर पडी जाग रही थी। बच्चे उससे जाते ही चिपट गये। माँ-माँ पुकारकर शोर करने लगे।

जयन्त ने कहा, "शुभदा, भूख लगी है।"

शुभदा बोली, "खाना तैयार है। यही भेजूँ या कमरे मे ?"

जयन्त ने कहा, "यही खा लूँगा।"

ललित ने कहा, "मैं पापा के साथ खाऊँगा।"

शुभदा ने कहा, "तुम दोनो अलग खाओ। पापा को खाने दो। एक तो वह ठीक से खाते नही और फिर तुम शऊर से न खाओगे न खाने दोगे।"

जयन्त ने कहा, "नही-नही! मेरे साथ खा लेगे।"

शुभदा बोली, "आप कहा गए थे? कई आदमी आये, लौट गये। मलखान भी आया था। वह तो एक-दो जगह आपको देख भी आया।"

सुधा ने कहा, "पापा मन्दिर गये थे।"

ललित बोला, "हमने प्रसाद खाया था। भगवान को देखा था।"

शुभदा हँस दी और कमरे से जाती हुई बोली, "तो तुम भी भगवान को जानने लगे, शैतान!"

जयन्त ने सुधा के सिर पर हाथ रखा और उसे अपने पास बैठाकर कहा, "क्यो बेटी, तू भी भगवान को जानती है?"

सुधा ने सिर हिला दिया और कहा, "हाँ, मै भगवान को जानती हूँ। हाथ मे मुरली, सिर पर मुकुट, बाल घुंघराले"

सुनकर जयन्त हँस दिया। उसने ममत्व भरे भाव मे उस सुधा को और अधिक अपने समीप खीच लिया।

खाना आ गया। देखा कि उस दिन एक-दो व्यजन अधिक थे, खीर थी। देखकर जयन्त बोला, "वाह-वाह, खीर भी है!"

शुभदा बोली, "हाँ, सोचा, तुमने बहुत दिन से खीर नही खाई। और खीर तुम्हे प्रिय लगती है।"

जयन्त हँस दिया, "प्रिय तो बहुत कुछ लगता है, पर क्या वह सभी कुछ मिलता है?"

शुभदा बोली, "लगन सच्ची हो, तो जरूर मिलेगा।"

बलात् जयन्त के मुँह से निकला, "एक तुम्ही लो न अपनी बात, क्या तुम मेरे प्रति अनुरागमयी बन सकी हो? मै कितना तुम्हे प्रसन्न करना चाहता हूँ, पर तुम हो कि मठ की देवी के समान कभी भी रूठ जाती हो।"

बात सुनी तो शुभदा अपने मधुर होठो से मुस्करा दी।

तीस

दूसरे दिन के प्रात जयन्त चला गया। उसी समय वह पहले दिन आया हुआ अजना का पत्र उसे दे गया। किन्तु भूल से वह पत्र जयन्त ने खोल लिया और पढ लिया था, इसके लिए खेद भी प्रदर्शित कर गया।

वहाँ से जाने के तीसरे दिन ही शुभदा को जयन्त का पत्र मिला। कदाचित् वह पत्र उसने रास्ते मे लिखा था। सक्षिप्त था। घर से चलते समय वह कुछ आवश्यक बाते शुभदा को बतानी चाहता था, वे सभी उस पत्र मे लिखी थी। अन्त मे शुभदा के नाम आए पत्र को पढने की भूल पर पुनः पश्चात्ताप प्रगट किया और लिखा, "शुभदादेवी, एक पति अथवा व्यक्ति के रूप मे मुझे यह कहना अशोभनीय नही लगता कि तुम अपने इस सुन्दर और भावभरे जीवन मे पत्नित्व का भले ही आदर न करो, परन्तु भाग्य से जो मातृत्व तुम्हे प्राप्त हुआ है उसकी रक्षा अवश्य करो। यदि मानवीय दुर्बलताओ ने तुम्हे ऐसा न करने दिया, तो तब, मैं नही समझता, फिर तुम्हारे पास क्या रह जाएगा। पत्र की आत्मा को मैने समझ लिया है। भरोसा रखो, सदा के समान अब भी मेरे ऊपर कोई विपरीत प्रभाव नही पडेगा।"

देर हुई कि जयन्त का पत्र पढ लिया गया। वह कब शुभदा के हाथ से छूटकर धरती पर गिर पडा, इसका भी उसे ध्यान नही रहा। तभी लडकी सुधा आई तो शुभदा को रोती देख वह एकाएक बोली, "मम्मी रोती हो, तुम!"

शुभदा नही बोली। वह सामने दीवार पर आँख लगाए थी, वह उधर ही देखती रही। आश्चर्य कि उसी समय घर के नौकर हरखू से चाय की प्लेट टूट गई तो उसकी आवाज सुनकर भी शुभदा कुछ नही बोली। अपने स्वभाव के अनुरूप उसपर नाराज नही हुई।

किन्तु बच्ची सुधा अपने भैया ललित को भी बुला लाई और शुभदा के पास आकर बोली, "ललित भैया, देखो, मम्मी रोती है।" और उसने तब

स्वत ही अपनी ममी की गोद मे सिर रखकर कहा, "न रो, ममी मेरी माँ!"

उसी समय ललिता ने कहा, "माँ, पापा कब आएँगे ?"

तब शुभदा ने साँस भरी और बच्चे के सिर पर हाथ रखकर बोली, "जल्दी आएँगे, बेटा !" शुभदा खडी हो गई और कमरे मे जाकर चारपाई पर गिर पडी। वहाँ जाते ही वह फिर फफककर रो पडी।

उसी अवस्था मे उसने अपने-आप कहा, "जिसके भाग्य मे दु.ख और पीडा लिखी हो, उसे कौन मेट सकता है। मेरा भाग्य ही ऐसा है। और तभी उसे याद आया, एक बार जयन्त ने कहा था, 'भाग्य बनाया जाता है। बना हुआ बिगाडा भी जाता हे।" उसी समय हरखू ने पास आकर कहा, "बहूजी तुम सो रही हो बोलो, अब क्या बनेगा !"

शुभदा ने कह दिया, "कुछ बना ले !" और वह तब उस नौकर की ओर देखकर बोली, "क्यो हरखू, तू भी मुझे अशुभ समझता है ?" और उसने अपने-आप कहा, "हाँ, समझता ही होगा। मैने सदा ही तुझे झिडकियाँ दी फटकारे "

चकित बनकर हरखू बोला, "नही मालकिन, जब कोई कसूर करूँगा तो तुम कहोगी ही।"

शुभदा ने कहा, "नही रे ! आदमी तू भी है। तेरा भगवान है। पर मैं तो ऐसे घर में पैदा हुई कि जहाँ इन्सान का सम्मान करना नही देखा। शक्ति का प्रदर्शन करना ही वहाँ देखा गया है।"

हरखू पढा नही था, परन्तु नासमझ भी नही था। उसने सहज ही अनुमान लगाया कि जरूर कोई बात है। बहूजी दोषी है और तभी आज इतनी उदार और अधीर दिखाई देती हैं। इसी से, वह शुभदा की बात सुनकर बोला, "बडे घरो मे यही होता है, बहूजी !"

जैसे झुँझलाकर शुभदा ने कहा, "नही रे ! यह तो इन्सानियत का खून है।"

हरखू ने कहा, "हमारे बाबूजी नाराज नही होते। कभी हुए भी, तो बाद मे समझाते है, जैसे स्वय ही पश्चात्ताप करते है।

इतना कहकर, अभिवादन करके वह उस कमरे से लौट पडा। उसके

बाद शुभदा को भी घर के कामो मे लग जाना पडा ।

और जयन्त जब घर से चला तो उसके अगले दिन ही पहाड पर अस्पताल मे पहुँच गया । वह सीधा प्रोफेसर के कमरे मे गया । वहाँ अजना बैठी थी । देखते ही अजना ने कहा, "आगये तुम ! प्रोफेसरजी ने कई बार तुम्हारा नाम लिया था ।"

जयन्त बैठ गया, प्रोफेसर की ओर देखने लगा वह । अचेत थे, बोल नही सकते थे ।

अजना ने कहा, "अभी चलकर आये हो, आराम कर लो ।" उसने पास खडे चपरासी को लक्ष्य किया और कहा, "चाय और कुछ जलपान का सामान लाओ । मेरे कमरे मे रखो ।" तभी वह जयन्त से बोली, "आओ उठो, कपडे बदलकर मुँह-हाथ धो लो । चाहो तो स्नान कर लो ।"

जयन्त उठ खडा हुआ । अजना के साथ चल दिया । जब वह उसके कमरे मे जाकर बैठा, तो तभी अजना ने कहा, "बच्चे तो ठीक है न, बच्चो की माँ कैसी है ?"

जयन्त ने सहज भाव से कह दिया, "हाँ, सभी ठीक है ।"

तभी अजना ने कहा, "मैंने इतने बीमारो की सेवा की, परन्तु कभी नही घबडाई । लेकिन प्रोफ़ेसर की बीमारी से मै चिन्तित हो उठी हूँ । अपने को अकेला भी समझने लगी हूँ । तभी तुम्हे तार दिया था । सोचा, तुम आ जाओगे तो मुझे सहारा मिलेगा । वैसे प्रोफेसर ने कई बार तुम्हारा नाम पुकारा था । कदाचित् उस बेहोशी मे अपने आत्मीय का नाम अनायास निकल आया होगा । आत्मा ने पुकारा होगा ।"

जयन्त मुस्कराया और बोला, "तुम भी अजीब हो । एक प्रोफेसर बीमार पडा तो घबडा गई । और जानती हो, इस धरती पर आने वाले सभी बीमार पडते है, रोगी है । कोई शरीर का रोगी, तो कोई मन का ।" वह स्नान के लिए बाहर जाता हुआ रुक गया और बोला, "तुम समझती हो कि मै स्वस्थ हूँ । मैं भी रोगी हूँ । अन्तर यही है कि मैं चल-फिर रहा हूँ । मैं शरीर से नही मन से बीमार हूँ ।" वह चला गया । पीछे कमरे मे बैठी रह गई अजना ने एकाएक ही कहा, "सचमुच, रोगी है जयन्तबाबू ? सुखी नही हैं, लगता है कि घर जा

कर भी उस शुभदा से मधुर सम्बन्ध नही बना। उसने जयन्त की अटैची खोली और उसमे से पहनने के लिए खद्दर का कुरता और पाजामा निकाला। देखा कि कुरते के बटन टूटे है। शायद धोबी ने तोड दिये होगे। यह देख अजना ने तुरन्त ही कमरे की अलमारी मे एक डिब्बा निकाला और उसमे रखी सूई-डोरा और बटन लेकर उस कुरते पर टाँकना आरम्भ कर दिया। उसी अवस्था मे उसने अपने-आप कहा, 'यह काम शुभदा का था, घरवाली का। पर लगता है कि वह पति के प्रति सद्इच्छा नही रखती, उपेक्षा का भाव ही अपने मन मे लिए है।' बटन टाँक दिये और कुरता रख दिया। फिर पाजामा देखा कि उसका कमरबन्द ठीक है या नही। उसी समय जयन्त स्नान करके लौटा। उसने पाजामा और कुरता पहन लिया, तभी जलपान आ गया। जब वह खाने बैठा तो अजना से बोला, "तुम भी कुछ खाओ न!"

अजना ने कहा, "मै खा चुकी हूँ।" यह कहते हुए वह चाय बनाने लगी। उसी अवस्था मे वह बोली, "अब मुझे लगता है कि सचमुच, मनुष्य सामाजिक प्राणी है। अकेला नही रह सकता। तुम गये तो मैने अनुभव किया कि मेरे पास से कुछ चला गया है। मुझसे कुछ चीज दूर हो गई है।"

जयन्त ने चाय का घूँट भरा और कहा, "यह कमजोरी है। तुम्हारा समाज तो विस्तृत है। तुम्हारे सिर पर काम भी बहुत है।"

अजना ने कहा, "हाँ, काम तो है। वे भी इतने है कि फुरसत नही। रात भी मैं दस बजे के लगभग लौटी थी। प्रोफेसर बीमार न होते तो क्या यहा दिखाई देती?"

जयन्त हँस दिया, "वह अवस्था मुझ पर भी लागू होती है। शुभदा को अपने पिता के घर जाना था। नौकर से कह आया हूं कि वह रुकना चाहे तो रुक जाये, अन्यथा चली जाये?"

अजना ने कहा, "तो बताकर नहीं आये कि कहा जा रहे हो।"

जयन्त ने कहा, "बताया तो था। उसे तार का हवाला दिया था।"

उसने चाय पी ली और खडा हो गया। अपनी अटैची से स्टेथिस्कोप निकाल लिया। जब वह प्रोफेसर के पास चलने को प्रस्तुत हुआ तो बोला,

"अजनादेवी, कुछ सम्बन्ध मजबूरी मे बनते है, वे कठिनाई से निभते है। मेरा और शुभदा का भी यही हाल है। शुभदा भी रोगिणी है, मन की रोगिणी। उसे जो एक नया रोग लगा, उसका मुझे अभी पता चला है। भले ही वह असाध्य न हो, पर रोग का आरम्भ अवश्य है।"

चकित बनकर अजना ने पूछा, "वह क्या हाँ "

जयन्त ने कमरे के बाहर पैर रखा और कहा, "उसका एक दूर का सम्बन्धी बैरिस्टर किशोर है। वह कुछ दिन पूर्व ही विलायत से पढकर लौटा है। शुभदा का और उसका पत्र-व्यवहार होता है। अभी मैने उसका एक पत्र देखा तो मुझे लगा कि उस युवक बैरिस्टर को शुभदा से बाते करना अच्छा लगता है। वह कुछ समय के लिए शुभदा को अपने पास चाहता है।"

एकाएक जैसे चीखकर अजना ने कहा "तो, जयन्तबाबू "

जयन्त ने कहा, "चिन्ता न करो, इससे मेरे सोचने मे कोई अन्तर नही पडेगा। मुझे पता है कि यह रोग शुभदा को कहाँ से लगा है। उसका पिता जमीदार और सम्पन्न रहा है। उसने अपने जीवन-काल मे घर की औरत के अतिरिक्त बाजार की नारियो पर भी रुपया लुटाया है। हा, अजना, पैसे का इसी प्रकार उपयोग आदमी करता है। पैसे का सदुपयोग करना तो विरला व्यक्ति ही जानता है।" वह बोला, "तुम सोचती होगी कि इससे मै उस शुभदा को घृणा करूँगा या त्याग दूँगा। न, न, ऐसा अपराध मैं नही कर सकूँगा। मेरा छोटा-सा तो जीवन है, इसमे कितना बोझ उठाऊँगा। तुम्हारे साथ मैने पाप किया ही, तो अब उस शुभदा के साथ भी ऐसा करूँ? हाँ, अजना, मुझमे उस नारी के प्रति रोष होता, प्रतिक्रिया का भाव आता तो उस पागलखाने से लौटकर ही और उस युवक की मृत्यु का समाचार पाने के बाद ही उस शुभदा का गला घोट देता। पर मैं कुछ नही करूँगा। मै सदा ही उस नारी को क्षमा करता रहूँगा।"

रुकी हुई साँस छोडकर अजना बोली, "हाँ, यही मेरा कहना है। मेरी भी यही विनय है।"

जयन्त बोला, "तुम निश्चिन्त रहो। मै अब यहाँ आया तो हूँ, पर जल्दी लौट जाऊँगा।"

वे दोनो प्रोफेसर के कमरे मे पहुँच गये। उन्हे देखकर पास बैठी नर्स ने हाथ जोडे और कहा, "मुझे अभी पता चला कि आप आये है। सभी को प्रसन्नता हुई है।"

जयन्त कुर्सी पर बैठ गया। उसी समय अस्पताल का डाक्टर वहाँ आया। उसने जयन्त से हाथ मिलाया। जयन्त प्रोफेसर की परीक्षा करने लगा। नब्ज देखी, छाती देखी और तब आँखो की पुतलियाँ देखकर उसने डाक्टर से कहा, "चिन्ता की कोई बात नही हे, प्रोफेसर साहब ठीक हो जाएँगे। अभी और आपको सहयोग देगे।" वह बोला, "आपके अस्पताल मे तो दवा होगी नही, वह कीमती है। लेकिन वह दवा मै लाया हूं, इन्हे दीजिएगा। भगवान ने चाहा तो आज शाम तक उनका कफ बाहर आ जाएगा। ठण्ड लगी है। छाती मे जकडन है। आज बोले भी सकेगे।" उसने नर्स से कहा, "मेरी अटैची मे लाल रग की शीशी होगी, वह ले आओ, उसमे से एक गोली प्रोफेसर को दो।" यह कहते हुए जयन्त उठ खडा हुआ।

जयन्त डाक्टर के साथ अस्पताल के वार्डो मे घूमने चल दिया। वही पर उसने नर्सों से और अन्य कर्मचारियो से भेट की। सभी के कुशल-समाचार पूछे। जब दो घण्टे के बाद वह फिर प्रोफेसर के कमरे मे पहुँचा तो देखता है अजना प्रोफेसर की ओर झुकी है और उनकी किसी बात को सुन रही है। प्रोफेसर ने आँखे खोल दी है।

जयन्त ने अपना सिर प्रोफेसर के चरणो मे झुकाया और तब कुर्सी पर बैठता हुआ बोला, "मै आपकी सेवा मे उपस्थित हूँ, प्रोफेसर साहब! आदेश दीजिए!"

प्रोफेसर ने हाथ उठाया, लेकिन मुँह से कुछ नही कहा।

जयन्त ने अजना से कहा, "दवा ने असर किया है। अब एक गोली और दे देना।"

अजना बोली, "पेट खाली है। पूरे सप्ताह से कुछ नही दिया गया।"

जयन्त बोला, "आज दूध देना।"

अजना ने कहा, "मैंने अभी तुम्हारे आने की बात कही तो बोले, क्यो उनको कष्ट दिया। उन्हे नही बुलाना था।" वह बोली, "भला ऐसी अवस्था मे तुम्हे खबर न देती तो क्या यह मेरा अपराध न होता? मुझे यही करना

चाहिए था।"

जयन्त हँस दिया, "तुमने ठीक ही किया, अजनादेवी !"

अजना बोली, "तुम आये हो तो मुझे सहारा मिल गया। वैसे अस्पताल का डाक्टर भी अच्छा है, उत्साही है। लालची नही है।"

जयन्त ने कहा, "डाक्टर योग्य और सम्भ्रान्त है। उसके ऊँचे विचार है। अभी वह मुझे अपने क्वार्टर पर ले गया था। उसकी पत्नी भी सुसभ्य है। बच्चे सलोने है। उसका परिवार सन्तुलित और सुखी है।"

अजना ने कहा, "डाक्टर के बच्चे मेरे पास ही अधिक खेलते है। तुम्हारे बच्चे गये तो मुझे सूना-सूना लगा। पर इस डाक्टर के बच्चो ने आकर मेरा वह अभाव दूर कर दिया है।"

जयन्त ने कहा, "यही अवस्था है मनुष्य के मन की।" वह बोला, "मेरा आज सन्ध्या समय का खाना तुम्हारे डाक्टर के यहाँ ही है।"

अजना बोली, "अब क्या खाओगे ?"

जयन्त ने कहा, "अब मैं सोना चाहता हूँ। रात रेल मे सो नही सका था। मुसाफिरो की भीड ने सोने ही नही दिया। हाँ थोडा दाल-चावल ले लूँगा। इस समय हल्का खाना ठीक रहेगा।"

अजना ने कहा, "यहाँ तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक हो गया था, गाँव जाकर फिर बिगड गया। मैं नही समझती कि तुम्हारे मन मे क्या आगया।"

जयन्त इस विषय मे मौन रहना चाहता था, परन्तु जब अजना ने सीधा प्रश्न किया तो वह बोला, "स्वास्थ्य का सम्बन्ध मन से है, जब मन स्वस्थ नही, तो आदमी का शरीर भी स्वस्थ नही रहता। कदाचित् मेरे लिए भी यही बात लागू है।"

अजना बोली, "तुम भावुक अधिक हो। अपने आप ही मन पर चोट खाते हो।"

जयन्त कुर्सी छोडकर खडा हो गया। उस समय कमरे मे प्रोफेसर को छोड अन्य कोई व्यक्ति नही था। इसलिए जब जयन्त कुर्सी से उठकर कमरे की खिडकी पर जा खडा हुआ तो वही से वह अजना की ओर देखकर बोला, "देवीजी, यदि मै भावुक न होता, तो निश्चय ही, राज्य के कानून का अपराधी बनता। मै खूनी हूँ।"

अजना भी कुर्सी से खडी हो गई और जयन्त के पास जाकर बोली, "आह ! राम-राम ! कैसी बुद्धिहीनता की बात करते हो तुम ।"

उसी समय नर्स आ गई । अजना ने उससे कहा, "तुम यहाँ बैठो । हम जाना चाहते है ।" और वह जयन्त से बोली, 'आओ, हम कमरे मे चले । तुम आराम करो । अपने मन को स्वस्थ और शान्त बनने दो ।"

जयन्त सूखे भाव से मुस्करा दिया और सामने खडे ऊँचे पर्वत को देखता हुआ उस कमरे से बाहर हो गया ।

इकतीस

शुभदा के पिता पण्डित द्वारिकानाथ मे सम्पन्नता के साथ रसिकता भी थी, इसका सभी को ज्ञान था । समाज के उच्चवर्ग से इनका सम्बन्ध था । अपने वर्ग के पुराने और दकियानूसी विचारो से उनके विचार मेल नही खाते थे । कदाचित् यही कारण था कि उनका अपनी पत्नी नारायणी से भी अनेक बातो मे मतभेद रहता । नारायणी नारी थी, इसलिए उसका अपना दृष्टिकोण था । अनेक बातो मे नारी की दृष्टि से भी उसे जीवन और समाज को देखना उचित लगता था । शुभदा अपने पिता की लाडली बेटी थी । इसलिए पिता-पुत्री मे साम्य था । जब शुभदा अपने पत्रो मे पति की शिकायत करती, तो नारायणी को यह पसन्द नही था, किन्तु द्वारिकानाथजी को यह सब पसन्द था । उन्हे जयन्त पर गुस्सा आता था । प्राय. वह इस बात पर क्षोभ प्रगट करते कि उन्होने पुत्री को अयोग्य व्यक्ति के हाथो मे सौप दिया । इसलिए वह अपने पत्रो मे शुभदा को लिखते कि वह मायके लौट आये, लेकिन नारायणी को यह पसन्द नही था, वह कहती थी अब लडकी के लिए पिता का घर महत्व नही रखता. पति का घर ही शोभा देता है । वह कहती, पिता राजा हो तो भी रक बने हुए पति के समक्ष उसका कोई महत्व नही होता । किन्तु पण्डित द्वारिकानाथ कहते, हमारी एक लडकी है, वही

लडका है, उसका दु खी रहना मै पसन्द नही कर सकता ।

सुनकर नारायणी कहती, तुमसे किसी का भाग्य नही बदला जाएगा। जैसा लडकी के भाग्य मे था वह मिल गया । यदि पति अच्छा नही मिला तो बुरा भी नही मिला ।

इतनी बात पर प्राय पण्डितजी क्षुब्ध बन जाते । वह तुरन्त तडपकर कहते, नारायणी, यह दकियानूसी बात मत करो । विवाह एक प्रथा या चलन नही है, अवलम्ब है। शुभदा को यदि जयन्त पसन्द नही, तो वह छोडा भी जा सकता है पति तो दूसरा भी "

एक बार जब शुभदा का पत्र पाकर यही बात चली तो नारायणी की आँखे फट गई थी। वह विस्मय के साथ बोली, "तो तुम अपनी लडकी का दूसरा विवाह करोगे ? दूसरी बार उसके हाथ पीले करोगे ? एक पति को छोडकर दूसरा रखाओगे, हे राम !"

पण्डित द्वारिकानाथ ने कहा, "हाँ-हाँ, क्यो नही। पति बदलना बुरा नही, व्यभिचारिणी बनना बुरा है।"

नारायणी ने कहा, "यह भी व्यभिचार की एक सज्ञा है। एक सेअधिक पति की परम्परा को स्वीकार करना ठीक ऐसा है जैसे बाजार के पत्ते चाटना, दस घर की रोटी माँगकर खाना ।"

पण्डितजी को पत्नी की बात सुनकर क्षोभ तो हुआ, परन्तु उन्होने कडुवे भाव से मुस्कराकर बात को टालने का प्रयत्न किया ।

किन्तु नारायणी बोली, "जिस औरत की एक पति से नही पटती तो क्या यह आवश्यक है कि दूसरे से पटे ! वह फिर तीसरा घर तलाश करेगी ।"

पण्डितजी बोले, "तो इसमे पाप क्या है ? एक जगह घुटकर मरने से यह अच्छा है । पुरुष नारी पर सदा अत्याचार करता आया है ।"

बात सुनी तो नारायणी तीखे भाव से मुस्करा दी । और बोली, "यह तुम कहते हो ! शीशे मे मुँह देखो, सौ चूहे खाय बिलैया चली हज्ज को ।"

सुनते ही पण्डितजी ठहाका मारकर हँस दिये ।

नारायणी ने कहा, "शुभदा को लिख दो, वह अपने पति ही के घर

रहे। लडकी अब भी नादान है। और वह समझती नही कि अब दो बच्चो की माँ है।"

द्वारिकानाथ ने कहा, "मैने उसे यहाँ बुलाया है। वह बैरिस्टर किशोर भी विलायत से आकर कई बार लिख चुका है कि उसने काफी दिनो से शुभदा को नही देखा।"

नारायणी ने आतुर बनकर कहा, "हाँ,-हाँ, कभी अवसर आएगा तो वह भी देख लेगा। अपना विवाह करे तो बुला लेगा।" वह बोली, "मै कहे देती हूँ, वह किशोर भी अच्छा नही है। सुना नही तुमने, वह विलायत क्या गया पूरा नशेबाज और कबाबी बन आया है। वह ब्राह्मण घर मे क्या पैदा हुआ मा-बाप का नाम भी उछालता है। इसी से तो वह विवाह नही करता। खुला बछेरा बना है। मेरी निगाह मे वह अच्छा नही है।"

पण्डित द्वारिकानाथ ने कहा, "तुम्हारी निगाह पुरानी है। कोई आदमी औरत से हँसता या बोलता है तो वह तुम्हे खराब लगता है।"

चिढकर नारायणी बोली, "तुम वास्तविकता नही समझोगे सच, इस जन्म मे नही। पर मैं यह कहे देती हूँ, किशोर यहाँ आया तो मे शुभदा को देर तक यहाँ नही टिकने दूँगी। मै उससे साफ कह दूँगी कि वह अपने घर जाए।"

व्यग्र भाव मे पण्डितजी बोले, "नही, नही, शुभदा को कष्ट होगा। वह समझेगी, जब मेरी माँ ऐसा कहती है, तो फिर इस दुनिया मे कौन उसे अपनी समझेगा।"

नारायणी बोली, "समझा करे! मैं न्याय का पक्ष लूँगी। लडकी को तुमने यह भी नही समझने दिया कि उसका कर्तव्य क्या है। पति के घर उसे किस तरह रहना है।"

पण्डितजी बोले, "अब पहला जमाना नही रहा। तुम देखना कि अब पति-पत्नी का यह सम्बन्ध नाम-मात्र को रह जाएगा। यदि यही स्थिति रही, तो विवाह की प्रथा का अन्त हो जाएगा। आज भी कहने को आदमी सामाजिक है, धार्मिक है, पर कौन इसे मानता है। सभी एकाकी हैं, दूर-दूर! मुझे तो लगता है कि मनुष्य शरीर की भूख मिटाने के लिए,

एक लडकी थी जो बाल-बच्चेदार थी। मिसरानी को देख नारायणी ने एकाएक प्रश्न किया, "अरी गगा, बता तो, तेरी लडकी और दामाद मे झगडा होता है या नही ?"

वह अप्रत्याशित बात सुनी तो गगा और निकट आ गई। बोली, "मालकिन, यह भी कोई कहने की बात है! जहाँ दो बर्तन होगे वहाँ खडकेगे ही। मियाँ-बीवी के झगडे भी भला कोई झगडे है! जहाँ एक ने दूसरे से दो मीठी बात की, तो बस, मिट गया झगडा।" कहते हुए वह गगा मुस्करा दी।

नारायणी ने कहा, "तेरी बात तो ठीक है। पर मेरी शुभदा तो बस, जब देखो तब, अपने आदमी की बुराई लिखती है।"

गगा बोली, "तुम्हारी शुभदा भाग्यवान है। वह समझती है न कि माँ-बाप को भी उसकी आवश्यकता है। ससुराल का घर तो उसकी ओर देखता ही है, मायका भी उसे निहारता है।"

नारायणी ने एक दीर्घ निश्वास लिया। उसने पानदान का डिब्बा सामने खीच लिया और पान पर चूना लगाने लगी। उसी पान पर सुपारी और तम्बाकू रखकर मुँह मे देती हुई बोली, "गगा, मेरी यही चिन्ता है कि इस शुभदा की जिन्दगी कैसे कटेगी। वह मिजाज की कड़ुवी और अक्ल की नादान है।"

गगा बोली, "न, मालकिन! शुभदा बिटिया बडी भली है। और अपनो पर गुस्सा कौन नही करता! गलत बात पर सभी को कहना आता है। पर शुभदा बिटिया का भाग्य तो सभी तरह से अच्छा है। जयन्तबाबू सरीखा पति मिलना क्या आसान है?"

नारायणी ने कहा, "अरी गगा, आदमी तो भला है, नेक है। पर अन्तर यही है कि उसने ऊँचाई की ओर नही देखा, उसका बचपन तो गरीबी मे बीता। माँ-बाप न्यौता खाने वाले ब्राह्मण रहे। और यह शुभदा बचपन से ही हुकूमत करती रही है। राजे-महाराजो की सन्तानो की तरह पाली-पोसी गई है।"

गगा ने कहा, "यह बात तो ठीक है, माँजी। वडा अन्तर है। कहाँ राजा भोज, कहाँ कँगला तेली।"

नारायणी बोली, "ब्याह करते समय इस लडके को देखकर सोचा था कि पढा-लिखा है, शक्ल-सूरत का ठीक है। हम लडकी के साथ पैसा देगे तो उसे भी सुख मिलेगा। पर जयन्त तो ऐसा निकला कि बस लडकी को घर की मजदूरनी से अधिक नही समझना। वैसे घर के बाहर उदार और दयावन्त बन गया। कैसा भाग्य हमारा!"

गगा ने कहा, "हाँ, माँजी। भाग्य की बात है। अपनी समझ से लडका अच्छा चुना, पर वह भी गलत निकला। भगवान की माया यही तो है।"

नारायणी बोली, "अब उस जयन्त के पास पैसा क्या आया, मगरूर बन गया है। शुभदा का पत्र आया था तो लिखा था,ऐसे विवाह से तो वह क्वारी रहती तो ठीक था।"

गगा ने कहा, "राम-राम।"

पीकदान मे पान का पीक थूककर नारायणी ने क्षुब्ध भाव मे कहा, "मैं जब लडकी की ऐसी बाते सुनती हूँ तो छाती पर घूँसा-सा खाती हूँ। मेरी एक ही औलाद, और वह भी दु खी, तो भला मैं शान्ति पा सकती हूँ?"

गगा ने कहा, "यह कैसे हो सकता है, माँजी।"

माँजी ने कहा, "शुभदा शीघ्र ही आ रही है। अच्छा है, अब आम की फसल भी आ गई है। बच्चे आम तो खाएँगे। शुभदा को आम की सिरके मे पडी चटनी भी पसन्द है। कुछ कच्चे आम मँगाना और डाल देना।"

गगा ने कहा, "अच्छा माँजी।" कहते हुए वह लौट गई। उस समय गगा अपना काम समाप्त कर चुकी थी। मालिक और मालकिन भोजन कर चुके थे। जब वह उस कमरे से निकलकर बडे दरवाजे की ओर बढी तो तभी घर के तीन-चार नौकरो को आपस मे बात करते और चिलम पीते देख, एक को लक्ष्य करती हुई वह बोली, "अरे भोला! अब सावधान हो जा, शुभदा बिटिया अपने बच्चो के साथ आ रही है।"

भोला कुछ बूढा था, बागबानी करता था। गगा की बात सुनी तो बोला, "मुझे क्या सावधान होना, काम तो तेरा बढेगा, गगा। खाना अधिक बनाना पडेगा।"

तभी रामदीन नाम का व्यक्ति बोला, "ऊँह, काम बढेगा तो क्या हुआ। इस गगा का रोज मोहनभोग का भोजन भी तो होगा। बच्चे नित नयी चीजे खाएँगे। रसोई महकने लगेगी।"

हँसकर गगा ने कहा, "क्यो, तेरी जीभ भी पानी छोडने लगी है क्या ?"

रामदीन ने साँस भरकर कहा, "अरी हमे कौन पूछता है।"

उसी समय अपने मन मे आई बात को लेकर भोला बोला, "क्यो मिसरानी, बिटिया का ससुरात मे मन नही लगता? क्या बात है ? लडका तो भला है।"

गगा ओर पास आकर बोली, "अरे भोला, सब माया के चोचले है, और कुछ नही। आदमी तो उसे भला मिला है।"

भोला बोला, "मैने सुना है कि किशोर जो अब बैरिस्टर बन गया है वह भी आने वाला है।"

गगा ने कहा, "हाँ-हाँ, क्यो न आयेगा। मालिक की बिटिया को सिनेमा, थियेटर आदि के लिए कोई साथी तो चाहिए ही। हा रे, इस माया को पाकर जो न सूझे वही थोडा हे।"

रामदीन ने कहा, "जयन्तबाबू सरीखा आदमी मिलना आसान नही।"

गगा ने कहा, "भैया, इन बडे घरो मे तो ऐसा ही होता है। एक मेरी लडकी है जिसने कभी नही कहा कि मुझे ससुराल मे तकलीफ हे। ऐसा कभी कुछ कहा जाता है ?"

रामदीन ने कहा, "ससुराल का घर तो अपना घर है, लडकी की अपनी दुनिया है। मा-बाप के घर पर भला किसकी उम्र बीतती है।"

गगा बोली, "इस बार एक लडका होता तो शुभदारानी के सब मिजाज ठिकाने लग जाते। पर अब क्या कमी हे, जो कुछ है उसी का है। तभी तो उसके मिजाज नापे जाते है। पैर भी धरती पर नही पडते है।"

भोला मौन था। उसने हाथ की चिलम रामदीन के पास बैठे मुखिया के हाथ मे दे दी। वह खाँसता हुआ चिलम पीते हुए बोला, "गगा, मै बताये देता हूँ, यह मेरी बात लिख लो कि शुभदा एक दिन अपना सिर पकडकर रोयेगी। उसे तब समझना पडेगा कि बाप के घर की माया और है और

पति के घर की शोभा और है।"

गगा ने उत्तर दिया, "यह तो होगा ही। भगवान न्याय करता है, वह सब कुछ देखता है।" यह कहते हुए वह आगे बढ गई।

बत्तीस

बैरिस्टर किशोर महत्वाकाक्षी और कुटिल स्वभाव का व्यक्ति था। उसके यौवनकाल का अधिक समय योरोप के अनेक देशो मे बीता था। किन्तु जब वह अपने देश लौटा, तो उसे लगा, वह स्वर्ग से मृत्युलोक मे आ गया है। इस का एक कारण तो यह था कि वह जिन सुन्दर कल्पनाओ का पुलन्दा अपने दिमाग मे लिए था, देश मे उसके विपरीत पाया। घर लौटने पर पहली घटना तो यह घटी कि उसके पिता का देहावसान हो गया। कारोबार बिगड गया। मृत पिता ने अपने पुत्र की इच्छापूर्ति के हेतु कुछ भी न उठा रखा था। एक ही तो सन्तान थी, उसकी सभी माँगो को पूरा किया गया। फलस्वरूप, किशोर खर्चीला और विलासी बन गया। उसे यह भी भरोसा था कि वह देश मे लौटकर अपनी वकालत से प्रचुर धन प्राप्त करेगा। किन्तु जब उस क्षेत्र मे उतरा तो मुवक्किल उसके पास नही आए। जो एक बार आया भी तो वह फिर नही लौटा। इसका कारण यह था कि भले ही किशोर के पास कानून की ऊँची डिगरी थी, परन्तु उसे व्यावहारिक ज्ञान नही था। वह जो मुकद्दमा लेता, उसे हार जाता। उसके समक्ष साधारण वकील जीत जाता।

शुभदा उसकी बचपन की सगिनी थी। दोनो साथ-साथ खेले थे। एक बार, बचपन मे, किशोर कई मास शुभदा के घर आकर रहा था। उसी समय शुभदा की माँ से वचन लिया था कि दोनो का साथ ही विवाह होगा। किन्तु समय आने पर ऐसा नही हुआ। किशोर योरोप चला गया। शुभदा का विवाह अन्यत्र हो गया। लेकिन दोनो का पत्र-व्यवहार चलता रहा। किन्तु

जब किशोर अपने देश लौटा, वह शुभदा और जयन्त के परस्पर व्यवहार की कटुता का भी कुछ परिचय पाने मे समर्थ बना । उसने अपने पत्रो से शुभदा के मन मे आई हुई पति के प्रति विद्रोही भावना को और अधिक प्रोत्साहन दिया । वह अपने पत्रो मे योरोप के नारी-समाज का उल्लेख करता और बताता कि वहाँ की नारी मे जीवन है, जागृति है। वहाँ का मनुष्यसमाज भी नारी के प्रति न्याय करता है, उसकी स्वतन्त्रता मे बाधक बनने का प्रयत्न नही करता।"

वह चतुर किशोर इस बात को भी भली प्रकार जानता था कि शुभदा के मन की आकाक्षाएँ अभी मरी नही, जीवित है। वह अपने पिता के सस्कारो के साए मे पाली-पोसी गई है । पिता धनवान है। उसकी उत्तराधिकारिणी शुभदा है । जब शुभदा ने पिता के घर पहुँचने की तिथि लिखी तो किशोर को भी वहाँ आने का निमन्त्रण दिया गया। किशोर तुरन्त ही वहाँ आने के लिए प्रस्तुत हो गया । घर पर काम था नही, मन नही लगता था। अतएव किशोर अपने उस विचार को कार्य रूप देने के लिए तैयार हुआ, जो कभी भी जहरीले धुँए के समान, उसके मन के चारो ओर फैलता। जिसका प्रभाव उसके मस्तिष्क पर भी पडता। निश्चय ही किशोर चाहता था कि शुभदा को वह अपने पास आने का निमन्त्रण दे। उससे स्पष्ट कह दे कि यह जीवन है, जिसको भोगना प्रत्येक प्राणी का स्वभाव है । जो व्यक्ति इस जीवन के प्रति निरकुश है, कठोर है और इसे बरबस ही ससार की भौतिक स्थली से उठाकर त्याग और योग की ओर लगा देना पसन्द करता है, वह मूर्ख है, जीवन की वास्तविकता से दूर है। ऐसा व्यक्ति असमय ही जीवन का गला घोटता है, उसकी शाश्वत माँग को कुचलता है।"

अतएव, जब किशोर अपने घर से चला तो उसे यह देखकर सन्तोष हुआ कि शुभदा एक सप्ताह पूर्व ही अपने पिता के घर आ चुकी है। वह यह देखकर भी चकित हुआ कि शुभदा अभी भी युवती है, दो बच्चो की माँ बनकर भी वह किसी भी कुमारी के सदृश लगती है। शुभदा अप्सरा-सदृश है।

जब वे दोनो मिले तो हँसकर किशोर बोला, "अजीब जीवन है, यह!

जैसे तेज सैलाव । हाँ, देखो न, कितने समय बाद हम दोनो मिले है। तुम किसी कली के समान आज भी मुस्कराती दिखाई दी, इसके लिए भगवान का धन्यवाद है। मुझे प्रसन्नता है।"

शुभदा ने कहा, "जीवन है तो इसे मारा नही जाता। पेड के समान इसकी जडो मे भी पानी दिया जाता है।"

मानो किशोर ने मनचाही बात पाई हो। वह तुरन्त बोला, "निस्सन्देह! आज योरोप के प्रत्येक नागरिक का यही अभिमत है। वह जीवन को सजाना और उजागर बनाना पसन्द करता है। और एक हमारा देश है, पग-पग पर धर्म और वैराग्य की बात करता है। यहाँ का नागरिक जिस आदर्श की दुहाई देता है, मुझे तो लगता है कि वह झूठा है, थोथा है। मुझे यहाँ कोई धार्मिक भी नही दिखाई देता। सभी ओट मे शिकार खेलते है। समाज को मूर्ख बनाते है।"

उलाहना देते हुए शुभदा ने कहा, "कितने पत्र डाले कि एक बार आओ, पर तुम नही आए।"

किशोर बोला, "आ नही सका। बैरिस्टरी का काम अधिक बढ गया था। मनुष्य का जीवन क्या है, वह मशीन बन गया है। इसका एक ही काम है, पैसे का उपार्जन! और मै कहता हूँ कि वह पैसा क्या जो जीवन का चैन छीन ले। मानसिक और आत्मिक शाति को पास न आने दे।" उसने कहा, "सचमुच, मैं आना चाहता था, परन्तु यह भी सोचा मैंने कि जयन्तबाबू पता नही क्या समझले। हाँ, शुभदा, यह योरोप नही है। वहाँ का आदमी तो नारी के प्रति उदार है। नारी को विश्वसनीय मानता है। उसका आदर करता है।"

चिढकर शुभदा बोली, "यहाँ का आदमी पाषाण है। नारी को घर की दासी समझता है, पैर की जूती समझता है।"

तुरन्त ही किशोर बोला, "उससे भी कठोर! मैं तो यहाँ के समाज मे देखता हूँ तो लज्जा आने लगती है। कभी तो चाहता हूँ कि मैं इस देश मे न पैदा होता तो ठीक था।"

हँसकर शुभदा ने कहा, "तुम योरोप घूम आये हो तो पूरे साहब बन गए हो। अब वही का चिन्तन करते हो।"

उसी समय शुभदा के पास नौकरानी आई और बोली, "तुम्हे मालकिन बुलाती है !"

शुभदा ने कहा, "अच्छा !" वह खडी हो गई और बोली, "कपडे बदलो । स्नान करो । आज मौसम अच्छा है । आसमान मे बादल है । हवा ठण्डी है क्योकि रात वर्षा हुई है । दो दिन पूर्व तो बडी गर्मी थी । शाम को बाग मे चलेगे ।"

किशोर खडा हो गया । वह दीवार पर लगे चित्रो को देखने लगा । उन्ही मे एक फोटो शुभदा का था । वह उसी पर आख गडाकर बोला, "खूब ! वह फोटोग्राफर भी भाग्यवान था कि जिसने तुम्हारा यह सुन्दर पोज लिया ।"

सुनकर शुभदा हँस पडी, "वाह-वाह ! आप तो कविता करने लग पडे है !"

किशोर ने कहा, "नही, भगवान कसम ! इस फोटो की दूसरी कॉपी हो तो मुझे देना । फोटो स्वाभाविक है, वाह ! कितनी सुन्दर है यह होठो की मुस्कान । हॉ-जरा देखो तो ऑखो मे कितनी अनुपमता आ गई है । ये तनिक टेढी और तनिक मिची ऑखे कितनी आकर्षक है !"

अपने स्वर पर जोर देकर शुभदा ने कहा, "बस-बस, तारीफ के पुल न बॉधो । देखती हूँ कि तुम वही बचपन के गप्पी और बढा-चढाकर बात करने वाले व्यक्ति हो । बैरिस्टर हो न, अब बाल की खाल निकालने लगे !" शुभदा उस कमरे से लौट चली । जब वह माँ के पास गई तो माँ ने उसे कहा, "तेरे पिताजी के पास जयन्त का पत्र आया है । उनसे पूछ तो क्या लिखा है ?"

शुभदा ने मुँह बनाकर कहा, "मेरी बुराई लिखी होगी और क्या होगा !"

किन्तु माँ को बेटी का मत पसन्द नही आया । उसने तुरन्त कहा, "नही री, जयन्त कभी बुराई नही लिखेगा । तेरी यह बात असगत अवश्य हुई, जब घर पर जयन्त नही था तो तुझे अभी यहाँ नही आना था । उसका इन्तजार करना था ।"

शुभदा इतनी बात सुनकर चिढ गई । वह बोली, "अब मेरा उस

कैदखाने मे प्राण निकलना शेष था । क्या तुम्हे भी मेरा मरना पसन्द था ?"

शुभदा की माँ नारायणी ने इतनी बात सुनी तो जैसे उसका सिर घूम गया । उसे यह अच्छा नही लगा कि शुभदा ससुराल के घर को कैदखाना समझे । वहाँ का रहना मौत समझे । लेकिन उसने पुत्री से अपने मन का विचार व्यक्त नही किया । अपितु उसने कहा, "नही री, मेरी पगली बिटिया! तू क्यो मरेगी, मरे तेरे दुश्मन ! बेटी, वह तेरी ससुराल है, तेरा तीर्थ है, उसे कैदखाना समझना क्या अच्छा है ? अब जाने तेरे मन मे क्या आ गया है कि जयन्त को ऐसा कठोर मानती है । तूने ही तो अपने पत्रो मे कहा था कि जयन्त देवता है । इन्सानो मे सच्चा इन्सान है ।"

शुभदा ने कहा, "तब मैने यही समझा था । पर अब मेरा ख्याल बदल गया है ।"

नारायणी ने पूछा, "वह चमार की लडकी "

शुभदा ने कहा, "अब वह चमार की लडकी नही है, पढी-लिखी है, सम्पन्न है । अब तो उसने और भी बहुरूपिया वेश धारण किया है । भिक्षुणी का रूप धारण कर लिया है ।"

नारायणी बोली, "पर वह तो अस्पताल चलाती है । समाज की सेवक बनी है । फिर भी ऐसी बनी है !"

शुभदा ने कहा, "माँ, सुनी बात भले ही सत्य न हो पर जो बात मैंने कानो से सुनी वह क्या भुलाई जा सकती है ।"

उसी समय शुभदा के पिता वहाँ आ गए । वह शुभदा को देखकर बोले, "बेटी, किशोरबाबू से भी बात की है ? उनका भोजन "

शुभदा ने कहा, "हाँ अभी उनके पास गई थी ।"

पिता बोले, "उन्हे कोई कष्ट न हो ।"

नारायणी ने कहा, "किशोर अभी भी नटखट है । बच्चा है । आया तो मेरे पैर छूकर फर्श पर ही बैठ गया ।"

पण्डित द्वारिकनाथ ने कहा, 'किशोर हमे उसी तरह मानता है । आज हमारे घर बहुत दिन मे आया है । सुयोग की बात है कि वह आया तो शुभदा भी यहाँ है । किशोर के पास अब बडा अनुभव है, ससार के बडे-बडे देश घूम आया है ।"

नारायणी बोली, "मैने उससे पूछा था कि विवाह नही करेगा, तो वह कहने लगा, विवाह करना जरूरी नही है। व्यर्थ का बोझ सिर पर पडता है।"

शुभदा के पिता ने बात सुनी तो हँस दिये। बोले, "आजकल के लडके हवा मे उडते है। आकाश के तारे तोडने की कल्पना करते है। और नारायणी—उन्होने पत्नी को देखकर कहा, "अब जमाना बदल रहा है। देखती हो न, पुरानी परम्पराएं मिटती जा रही है। समय ऐसे ही बदलता रहा, तो देखना सचमुच ही पति-पत्नी का सम्बन्ध एक दिन समाप्त हो जाएगा। समाज मे चारो ओर भ्रष्टाचार फैल जाएगा। जब पुरानी मान्यताएँ नही रहेगी, धर्म की भावना मिट जाएगी, तो तब पुरुष के समान नारी भी अपने इस भौतिक शरीर को सुख पाने के लिए किसी भी भाव पर बेच देगी। पुरुष निर्लज्ज बना है, तो नारी भी बनेगी।"

नारायणी बोली, "नारी तो निर्लज्ज बन गई है। अब कमी क्या रह गई है!"

द्वारिकानाथ ने कहा, "देखता हूँ पुरानी बाते जिस धर्म की चादर मे लपेटकर समाज के सामने आई, वे देर तक ढँकी नही रही। वास्तविकता जल्दी ही सामने आ गई। कर्म चला, समाज की रीति नीतियाँ चली, तो मनुष्य की नग्न-भावनाएँ भी अतृप्त बनकर सदा अपनी जीभ लपलपाती रही। प्रतिक्रियात्मक प्रवृत्तियाँ सदा उग्र रही। मुझे लगता है, व्यवहार मे इन्सान ने कभी भी ऋचाएँ स्वीकार नही की।"

नारायणी बोली, "मैं कहे देती हूँ, इन्सान ऐसा बना तो समाज नष्ट हो जाएगा। एक दिन धू-धू कर जल जाएगा, तब न बहिन-भाई का नाता रहेगा, न पिता-पुत्री का। पति-पत्नी का नाता तो आज भी कमजोर पड गया है, वह किसे नही दीखता?"

उसी समय नौकरानी ने सूचना दी कि भोजन तैयार है।

द्वारिकानाथ ने कहा, "अच्छा!" वह शुभदा से बोले, "तुम किशोरबाबू को देखो।" उन्होने पूछा, "बच्चे कहाँ है?"

शुभदा ने कहा, "वे सो रहे है।" कहते हुए वह किशोर के कमरे की ओर चली। जब वह उस कमरे से बाहर निकली, तो तभी, नारायणी ने

पति को सुनाया, "यह किशोर यहाँ किसलिए आया है, इसे तुम समझते हो ! मै यह पसन्द नही करती कि शुभदा पति से लडकर आये और यो इस किशोर के साथ ।"

पडित द्वारिकानाथ ने बात पूरी सुनने से पूर्व कहा, "सुनो, नारायणी ! तुम्हारा यह दकियानूसी विचार अब नही चलेगा। शुभदा नये युग की प्रतीक है। और वह किशोर, जानती तो हो, कि पूरा साहब बहादुर है। वह आया है तो यह कैसे होगा कि शुभदा उससे बात न करे, उसके पास उठे-बैठे नही !" वह बोले, "नारायणी, अब यह विचार अपने युग के साथ समाप्त हो गया कि नारी छुईमुई बनी रहे, पर-पुरुष से मिलना-बोलना भी पाप समझे। यह पुरुष के कर्म और स्वभाव की प्रतिक्रिया ही तो है कि आज नारी स्वेच्छा से, कानून सम्मत बनकर, जीवन मे कई विवाह कर सकती है। अब यह पाप नही माना जाता।"

नारायणी चिढ गई और बोली, "तो क्या तुम्हारी शुभदा भी ।"

पडित द्वारिकानाथ ने सहज भाव से कहा, "मेरा मतलब यह नही है।" किन्तु तुरन्त ही, वह अपना स्वर बदल कर बोले, "यदि ऐसा भी हो, शुभदा को पसन्द हो, तो क्या रोका जा सकता है ? तुम भले ही रोको पर मै ऐसा नही करूँगा। मैं लडकी की इच्छा को प्राथमिकता दूँगा।"

क्षुब्ध होकर नारायणी बोली, "तो तुम इतना भी सोचते हो, इतना राम-राम !"

द्वारिकानाथ ने कहा, "मै नही कहता, समय की पुकार है।" तुम पुत्री के रास्ते मे बाधक बनोगी तो निश्चय ही, वह प्रतिशोध का रूप भी धारण करेगी। बोलो, तब तुम क्या करोगी ? अच्छा यही है कि तुम अपना सम्मान स्वय अपने-आप सुरक्षित रखो। वस्तुस्थिति को पहचानो।"

नौकरानी फिर आई और बोली, "मालकिन, खाने के थाल लग गये।"

नारायणी उठने लगी। वह बोली, "मै तुमसे एक ही बात कहती हूँ कि लडकी नादान है, अभी समझदार नही है। पुत्री के मोह मे तुम भी कोई ऐसी बात न कर बैठना कि जिससे पीछे पछताना पडे। जब सुबह किशोर आया तो पहाड पर जाने की बात करता था। मैं कहे देती हूँ, शुभदा

को जाने की अनुमति न दे बैठना। मै अब अपने जीवन मे एक ही बात देखना चाहती हू कि मेरी लडकी कोई ऐसा काम न करे जो मेरी आत्मा को रुचिकर न हो।"

पडित द्वारिकानाथ स्वय भोजन करने के लिए खडे हो गये और हंसकर बोले, "एक बात सुन लो। तुम सदा मुझे दोष देती आई हो कि शुभदा पर मेरे विचारो का प्रभाव पडा है, पर मै कहता हूं, शुभदा स्त्री जाति का प्रतिनिधित्व करती है तो जरूर उस पर तुम्हारे जीवन का प्रभाव सर्वोपरि रहेगा, तुम उसकी मा हो न।

नारायणी बात सुनकर चुप हो गई। स्थूल काय होने से वह रसोईघर की ओर धीरे-धीरे जाने लगी।

तैंतीस

जब शुभदा ससुराल से अपने माता-पिता के घर पहुँची तो तभी से वहाँ के नारी-समाज मे विविध प्रकार की शकाएँ परिचालित हो गई। फलस्वरूप, जब जयन्त प्रोफेसर के पास से लौटा तो गाँव की स्त्रियो ने उससे शुभदा के विषय मे जानना चाहा कि वह पिता के घर क्यो गई है? क्या शुभदादेवी अनुमति से गई है या स्वेच्छा से? पुरुषो ने भी इसी प्रकार की शका का समाधान चाहा कि क्या सचमुच पति और पत्नी के मध्य कोई अशुभ बात तो नही चल पडी है? किसी ने कहा, यह तो असगति है। उसके सद्गृहस्थ के लिए अपशकुन है। पति-पत्नी की एकात्मीयता तो प्रत्येक अवस्था मे जरूरी है।

जयन्त उन कथित बातो को सुनता और सहज भाव से मुस्कराकर रह जाता। लेकिन जब एकदिन दोपहर के समय मलखान आया तो उस समय जयन्त मकान की ऊपरी मजिल मे पलग पर पडा आसमान मे उठते हुए बादलो को देख रहा था। वही पर मलखान पहुँच गया। उसने आते ही

कहा, "इस सन्नाटे मे क्या सोच रहे हो, भैया !"

चौककर जयन्त ने उसको देखकर कहा, "कुछ नही। आओ-बैठो।"

मलखान बैठ गया। वह बोला, "तुम्हारे बच्चे क्या गये, घर सूना हो गया। बताओ तो, क्या शुभदा भाभी से कुछ कह दिया था ?"

जयन्त ने कहा, "क्या तुम ऐसा समझते हो ?"

मलखान ने कहा, "यही तो भैया ! आज चौपाल पर यह बात चली तो मैने कहा कि जयन्तबाबू उदार है। वे क्या अपनी पत्नी से कुछ कहना उचित समझते है !"

जयन्त बोला, "लगता है, यह विषय सभी की चर्चा का बन गया है। इससे स्पष्ट है कि लोग दूसरो की बात मे रस लेते है। लोगो के दिमागो की यह कषैली वासना है !"

मलखान बोला, "यह स्वाभाविक भी है। हम सभी तो समाज से बँधे है।"

क्षुब्ध भाव मे जयन्त ने कहा, "परन्तु लोगो की यह बुरी आदत है।" वह बोला, "शुभदा गई है तो आ जाएगी, आखिर माँ-बाप के पास जाना क्या अनुचित कहा जाएगा ? जाने से पहले उसने बताया था कि माँ बीमार है। उसे जाना ही था।"

मलखान ने कहा, "परन्तु भाभी को तुम्हारे लौटने पर जाना चाहिए था। पर क्या नौकर पर छोडना था ? लोगो को यही शिकायत है। आखिर जब कोई अजीब बात करे, लोक-चर्चा का विषय बने, तो कहा ही जाएगा"

जयन्त ने कहा, "शुभदा का पहले से ही निश्चय था। मुझे तो अकस्मात् जाना पड गया।"

मलखान बोला, "भला नौकर क्या ठीक से भोजन बनाता होगा ? घर आकर बच्चे भी याद आते होगे।"

साँस भरकर जयन्त ने कहा, "बच्चे तो समाज मे बहुत है। सभी अपने है।" और वह तब आसमान की ओर देखता हुआ बोला, "मलखानसिंह, जानते तो हो, मेरे और शुभदा के विचारो मे अन्तर है। मै चाहता तो हूँ कि वह सन्तुष्ट रहे, परन्तु विवशता मेरी भी है कि उस शुभदा को सदा प्रसन्न नही रख पाता। तुम चिन्ता न करो, शुभदा आजाएगी। वह ज्यादा दिन तक

अपने पिता के घर नही रहेगी । उस शुभ्दा के मन मे अपने पिता की सम्पत्ति के लिए जो महत्वाकाक्षा और अभिमान हे, मेरा ख्याल है कि वह भी एकदिन उसके हृदय से उतर जाएगा । वह यदि धनिक माँ-बाप की पुत्री न होती तो उसके लिए शुभ होता ।"

मलखान ने कहा, "तो भैया, यह पैसा इतना निकृष्ट हे ? तुम्हारी दृष्टि मे तुच्छ है ?"

आतुर बनकर जयन्त ने कहा, "पैसा एक नशा है । इसान को मदहोश बनाता है । यह समाज की बडी शक्ति हे । यह भी देखना पडता है कि वह पैसा किस रास्ते मे आता है । शुभदा के पिता पण्डित द्वारिकानाथ ने अपने किसानो का शोषण किया हे । जो जमीदारी उनके पास है वह भी मुफ्त मे मिली हे । उनके पिता ने गदर के समय एक ऐसे अग्रेज अधिकारी को शरण दी थी, जिसने सैकडो देशवासियो का वध कराया था । न्याय तो यह कहना है कि आज उन्हे फाँसी पर चढा दिया जाए । मुफ्त मे पाया गया धन इन्सान को ऊपर नही उठने देता । पण्डित द्वारिकानाथ कैसे चरित्र के व्यक्ति है, यह सर्वविदित है ।"

मलखान बोला, "भैया, तुम्हारे हृदय मे रोष हे । बात सगत होते हुए भी आज उसका उल्लेख करना क्या ठीक है ! वैसे मेरा ख्याल है कि पैसा इसी प्रकार आता है । मेहनत से तो आदमी केवल गुजर कर पाता है ।"

जयन्त ने बात सुनी तो मौन रह गया । वह मलखान की बात के अन्तराल मे डूब गया ।

कुछ रुककर उसने कहा, "शुभदा मेरी पत्नी है और वह दो बच्चो की माँ है । इन दोनो अवस्थाओ को मै कभी नही भुला सकता । वहा मेरे प्रति कोई दुर्भाव की बात न हो, इसलिए मैने पत्र लिख दिया हे ।"

मलखान उठकर चलने को उद्यत हुआ । जयन्त ने कहा, "क्यो, अभी और बैठो न !"

मलखान बोला, "भैया, अब खेत पर जाऊँगा । शाम को आऊँगा ।" यह कहकर मलखान चल दिया । जब वह चला गया तो उसके बाद ही, जयन्त उठकर बैठ गया और अलमारी से एक किताब निकालकर पढने लगा । किन्तु मलखान के आने से जयन्त की मानसिक अवस्था स्वस्थ नही

रही। अत उसने किताब रख दी और अपने दोनो हाथो को पीछे से बाँध कमरे मे घूमने लगा। उस अवस्था मे घूमते हुए ही उसकी दृष्टि मेज पर रखे एक फोटो पर गई। उस फोटो मे वह स्वय था, शुभदा थी और उसके दोनो बच्चे थे। उसका वह कितना सुन्दर ससार था! वे दोनो सलोने और सुन्दर बच्चे! क्षणभर उस ओर देखते हुए ही जयन्त ने झटका-सा खाकर अपना मुँह फेर लिया और मन मे कहा, ये बच्चे मेरे नही है, शुभदा के है। इन पर उसी का अधिकार है। किन्तु उसी क्षण उसने देखा कि उन बच्चो के कुछ कपडे खूँटी पर टँगे है, मैले है। तभी जब नौकर वहाँ आया तो जयन्त उसे लक्ष्य करके बोला, "अरे, हरखू! देख तो बच्चो के ये कपडे मैले पडे है। इन्हे धोबी को दे देना।"

नौकर ने वे कपडे खूँटी से उतार लिये और वहाँ से ले चला। जाते हुए हरखू को जयन्त ने कहा, "देख हरखू, बहूजी के मैले कपडे उनके कमरे मे पडे हो तो उन्हे भी ले आना। उन्हे धोबी को दे देना।"

इतनी बात सुनकर हरखू रुक गया और बोला, "पर बाबू, आप अपने कपडे क्यो नही धोबी को देते। अपने कपडे तो स्वय हाथ से धोते हो। कितनी बार कहा मैंने कि मैं धो दिया करूँ तो मुझे भी आप नही धोने देते।"

जयन्त ने कहा, "रे हरखू! जानता तो है तू, मैं गरीब माँ-बाप का लडका हूँ। अब पैसा आ गया तो क्या, मन तो वही रखता हूँ।"

हरखू ने कहा, "नही बाबू, मैं सब जानता हूँ। राजा का भी कभी ऐसा दिल नही होगा जैसा कि आपका है।"

जयन्त केवल हँस दिया।

किन्तु हरखू तो अपने मुँह पर आई बात कहने पर तुला था। वह बोला, "इस गाँव मे ही किसको आप क्या देते हो, मैं जानता हूँ। बाबू, ऐसा डाक्टर क्या कभी मैंने देखा कि आपके समान दवाई भी मुफ्त दे और पैसा भी साथ दे!"

जयन्त ने आतुर बनकर कहा, "अरे, जिसका है, वह लेता है। हरखू, मेरा अपना क्या है, इस धरती पर जैसे अनायास आया हूँ उसी प्रकार एकदिन चला जाने वाला हूँ।"

साँस भरकर हरखू बोला, "बाबू, यह तो सभी के लिए है। आप सुनते है या नही पर गाँव का बच्चा-बच्चा आप को देवता मानता है। तभी तो आज कहते है लोग ..."

एकाएक जयन्त ने पूछा, "क्या ?"

"यही कि बहूजी को ऐसे नही जाना चाहिए था।"

जयन्त ने कहा, "न हरखू, तेरी बहूजी का जाना था। माँ ने बुलाया था।"

हरखू के मन मे कुछ और था। वह कहना चाहता था। पर मालिक नाराज न हो इससे वह डरता था। वह जयन्त की ओर देखने लगा।

यह देख जयन्त ने कहा, "और क्या ..."

हरखू बोला, "बुरा न मानो तो एक बात कहूँ। कल ही वहा का मेरा एक सम्बन्धी आया है। उसका बडा भाई जमीदारबाबू के यहाँ नौकर है। वह कहता था कि मालिक की लडकी दूसरे शहर से आये एक बैरिस्टर के साथ ..."

आतुर बनकर जयन्त ने कहा, "अरे हाँ, मुझे पता है। वह बैरिस्टर शुभदा का सम्बन्धी है।"

लेकिन हरखू तो अपनी समस्त बात कह देना चाहता था। बोला, "बाबू, वह बैरिस्टर अच्छा आदमी नही है। मेरा सम्बन्धी कहता था कि वह जमीदारबाबू की सम्पत्ति पर निगाह रखता है। और हमारी बहूजी सीधी और भोली है, इसे तुम भी जानते हो।"

बात सुनी तो जयन्त मौन रह गया। वह बाहर की ओर देखता हुआ बोला, "जाओ, एक प्याला चाय बना लाओ।"

हरखू चला गया। जब वह मकान के नीचे के हिस्से मे पहुँचा तो उसने अपने-आप पर खेद प्रगट किया कि उसे इतना सब बाबू से नही कहना चाहिए था। उन्हे जरूर दु ख मिला होगा। उसने स्टोव जलाया और चाय का पानी रख दिया। उस अवस्था मे ही उसने अपने आप फिर कहा, "भाग्य की बात है कि आदमी इतना अच्छा और बहू ऐसी ! हाँ, अब बाबू का स्वास्थ्य भी गिर गया है। खाना भी कम खाते है। मै जो कुछ बनाकर रख दूँ, उसी को चुपचाप खा लेते है। यह भी नही कहते कि यह चीज

अच्छी है, यह अच्छी नही।"

हरखू ने चाय का प्याला तैयार किया और ऊपर ले गया। उस समय जयन्त मेज के पास बैठा हुआ किताब पढ रहा था। जब हरखू चाय रखकर लौट चला, तो जयन्त ने उसे रोककर कहा, "हरखू, सुनो एक बात।" जयन्त उसकी ओर देखकर बोला, "देखो, बहूजी के विषय मे कभी किसी से बात न करना। तुम यह भी न सोचना कि बहूजी इस घर को छोड किसी और की चिन्ता करती है। कोई और कहे तो उसे भी समझाने का प्रयत्न करना।"

हरखू बोला, "बाबू, मै कसूरवार हूँ। क्षमा माँगता हूँ।"

जयन्त ने कहा, "नही-नही, तुम जो कुछ कहते हो उसमे शुभेच्छा अधिक है, परन्तु मन मे ऐसी शका लाना भी मैं इस घर के लिए अशुभ मानता हूँ।"

विनीत बनकर हरखू बोला, "अच्छा बाबू!" और एक अपराधी के समान वहाँ से चला गया।

किन्तु उसके पीछे अपने कमरे मे चाय पीते हुए जयन्त अपने-आप बोला, 'शुभदा की अपनी इच्छा है, उसकी आकाक्षा का भी मोल है। मै बाधक क्यो बनूँ। वह यहाँ आए तो धन उसका है। मैं उसे लेने नही जाऊँगा। मैं उसकी सुविधा के लिए अपने इस जीवन को क्लिष्ट नही बनाऊँगा।"

जयन्त ने चाय पी ली और वह खडा हो गया। सध्या आ गई थी, अतएव, वह मकान से उतर दवाखाने की तरफ चल दिया। निश्चय ही, उसका मन उस समय किसी काम को करने मे नही था। अतएव, कम्पाउण्डर से कह दिया, "पुराने मरीजो को दवा दे देना। मै अब नए मरीजो को न देख सकूँगा।" वह वहाँ से जगल की ओर चल दिया। उस समय उसके मन मे बात थी कि सच, वह गाँव के समक्ष अपराधी है, अभियुक्त है। क्योकि उसकी पत्नी जिस प्रकार अपने पिता के घर गई वह अवाछनीय ढग था। किसी को भी पसन्द नही था। गाँव की परम्परा के अनुकूल नही था।

उस अवस्था मे ही, एक खेत के डौले पर खडे होकर, जयन्त ने नितान्त दीन और कातर बने स्वर मे कहा, "तो मैं क्या करूँ! शुभदा की अपनी

इच्छा है ! जब मैं उसके अनुरूप नही बन सकता, तो तब, मुझे क्या अधिकार है कि शुभदा ही मेरी इच्छा के अनुसार आचरण करे।''

दूर जगल मे उसने देखा कि गाव की श्मशान भूमि मे किसी की चिता जल रही है। देखते ही जयन्त ने समझ लिया कि गडरिये रामनाथ की बहू की है। वह प्रात उसकी हालत देख आया था। वह रामनाथ से कह आया था कि उसकी अवस्था शोचनीय है। किन्तु जब इतनी बात उसने रामनाथ से कही थी तो वज्र का हृदय रखने वाला भी उस गडरिये की अवस्था को देख पिघल जाता। सचमुच, वह रामनाथ अतिशय दीन और याचक बना था। वह कह रहा था, "बाबूजी, मेरा घर बरबाद हो जाएगा मेरे छोटे-छोटे बच्चे "

और तभी जयन्त के मन मे विचार आया, हाय, अब उसके बच्चे अनाथ हो गए होगे। अपनी मा के लिए बिलख रहे होगे।

इतना देख-समझकर जयन्त का मन और अधिक खिन्न होगया, कुण्ठित हो गया। उसे लगा कि सच इस धरती का इन्सान अत्यन्त दुर्बल है, असहाय है। वह स्वय भी कमजोर है। घर पर एक शुभदा नही है तो उसका घर भी जैसे श्मशान बना है ममत्वहीन

जयन्त ने अपने सिर के बालो मे उँगलियाँ दे ली। उस दिन सिर मे तेल भी नही डाला था। प्रात के समय स्नान से पूर्व, नियमानुसार वह हजामत बनाता था पर उस दिन नही बना सका। सुबह ही रामनाथ गडरिया आया तो उसके साथ चल दिया था। इसलिए दाढी भी बढी थी। उस समय डाक्टर जयन्त का विचित्र वेश बना था जिसे देखकर कोई भी समझता कि उस जयन्त के मन मे कुछ है, अशान्ति है, अपने प्रति कलह है, पीडा है।

उसने सिर के बालो से हाथ हटा लिया और हाथो की मुट्ठी बाँधकर बोला, "मूर्ख ! उस शुभदा का चिन्तन करता है तू ! वह देख न, रामनाथ गडरिये की औरत बीमार पडी और मर गई। अब जलकर बन जाएगी राख का मुट्ठी भर ढेर ! आखिर, इस जीवन की डगर पर जो मिलते है, वे सभी तो याद नही किए जाते, सभी तो हृदय मे नही उतारे जाते। सबके अपने-अपने रास्ते है। पत्नी का भी, पुत्र का भी "

जयन्त जिस डोले पर खडा था उससे आगे बढ गया, अँधेरा बढ चला

था। तभी वह चलते हुए रुक गया, सहम गया। उसने देखा कि सामने कोई जानवर है जो जगली है, खूँखार है। उसकी मशाल की तरह जलती हुई आँखे उसको घूर रही है। ऐसे समझ रही है, यह इन्सान उसके पेट का भोजन

किन्तु वह जानवर स्वय ही डर गया। खेत मे घुस गया। तब जयन्त पैर बढाकर तेजी के साथ आगे वढा। वह गाँव की ओर लौट पडा। जब वह एक खेत को पार कर रहा था तो तभी, सामने से आते एक किसान ने उसे रोककर कहा, "बाबू, इस ओर से नही, उस ओर से! अभी मै देख आया हूँ कि काला साँप बैठा है, क्या जाने कि वह "

जयन्त मुस्कराया और बोला, "यही न, मुझे काट खाएगा? वह बनाए मेरा भोजन!" वह आगे बढता गया। सचमुच, उसके मन मे यह बात थी कि ऐसा जीवन क्या जिसमे अशान्ति हो, विषमता हो। कम्बख्त शुभदा ने मेरा जीवन बरबाद करना पसन्द किया है।"

वह खेत भी निकल गया। साँप नही मिला। जब जयन्त घर पहुँचा तो हरखू ने उसके हाथ पर एक लिफाफा रखा दिया। वह शुभदा की माँ का पत्र था। वह उसे लेकर मकान मे चला गया।

चौंतीस

उन दिनो शुभदा के मन की अवस्था सचमुच ही, एक ऐसी दिशा की ओर मुड चली कि जिसकी कल्पना सम्भवत पहले नही की जा सकती थी। किशोर लम्बे प्रवास का विचार करके पण्डित द्वारिकानाथ के घर नही आया था, परन्तु जब वहाँ आया तो उस मायानगरी मे ऐसे खो गया कि मानो उसका अपना कोई अस्तित्व ही नही हो। जमीदारबाबू की नई मोटर उसके लिए सुरक्षित थी। वह कभी शुभदा के साथ नगर मे सिनेमा देखने जाता, कभी कही और चला जाता। कभी-कभी पण्डित द्वारिकानाथ

भी उन दोनो के साथ घूम आते ।

धनिया नाम का एक नौकर उस भवन मे दरवान के काम पर नियत था। उस धनिया को पहलवानी का शौक था। जब किसी उत्सव पर जमीदारबाबू कुश्ती कराते तो धनिया अपने मालिक से इनाम पाता। इस प्रकार वह मालिक और मालकिन दोनो का विश्वासपात्र और कृपापात्र बनने मे सफल हुआ था। एक दिन जब किशोर और शुभदा मोटर मे बैठ कर नगर गये, तो तभी नारायणी ने धनिया को अपने पास बुलाया। जब वह सामने आ खडा हुआ तो नारायणी ने पूछा, "अरे, मोटर कहा गई है ? कौन-कौन गये है ?

उस अप्रत्याशित बात को सुन धनिया कुछ चकित बन गया। लेकिन वह तुरन्त ही बोला, "मालकिन, ड्राइवर कहता था कि बीबीजी शहर जाएँगी वे किशोर बाबू भी साथ मे "

नारायणी के मन मे भी यही बात थी। सुनकर वह मौन रह गई, तदन्तर ही बोली, "धनिया, देख तू इस घर का पुराना आदमी है। कौन जाता है, इसका ध्यान रखना तेरा काम है। पर देखती हूँ कि तू भग का गोला चढाकर नशे मे झूमना जानता है। जब देखो तब पान चबाता फिरता है।"

धनिया कुछ सकपका गया। वह सहज स्वर से बोला, "मालकिन, तुम्हारा हुक्म क्या भूल पाता हूँ ? सिर माथे लगाता हूं।"

किन्तु नारायणी के मन मे तो क्रोध था अपनी बेटी पर, उस किशोर पर। और वे तो उस समय वहा थे नही, इसलिए उस क्षुब्ध भाव का कुछ वेग धनिया पर निकलना स्वाभाविक था। फिर भी नारायणी उस धनिया से भी कुछ अधिक नही कह सकती थी। वह नौकर था। नारायणी के मुह से बात निकलने का अर्थ यह था कि वह बात सभी नौकरो मे फैल जाती। फिर उन्ही के द्वारा समाज मे। और इतना सब नारायणी को कदापि पसन्द नही था। शुभदा उसकी पुत्री थी, उस घर की प्रतिष्ठा। यदि लडकी अपनी प्रतिष्ठा का ज्ञान नही रखती तो माँ को तो रखना चाहिए। इसलिए उस धनिया को पास बुलाकर भी नारायणी अपने मन की बात नही कह सकी। किन्तु वह चतुर धनिया मालकिन के मन का भाव

समझ गया। वह इतना बुद्धू तो था नही कि स्वय आगे बढे और अपने मन मे रखी बात को सहज मे मालकिन के समक्ष खोलकर रख दे। वह जानता था, बडे आदमी का क्या भरोसा, पल मे सिर पर उठा ले, पल मे धरती पर पटक दे।

उसी समय नारायणी बोली, "रे धनिया! देख तुझे इस घर का नमक खाते वर्षो बीत गये। उस नमक का भुगतान तुझे करना चाहिए। हाँ, बता तो ऐसे ही भंसे सरीखी काया लिये फिरता रहेगा। कुछ धर्म-कर्म की बात भी सोचेगा इस जिन्दगी मे!"

धनिया ने अपने सिर की पगडी उतार ली और नारायणी के पैरो मे रखकर बोला, "मालकिन, मेरी माँ ने तो मुझे केवल पैदा किया था पर आदमी तो मै तुम्हारी छत्रछाया मे रहकर बना हूँ। भगवान की कसम, तुम्हारे आदेश पर मै अपना सिर उतारकर न रख दूँ तो मेरे मुँह पर कालिख पोत देना।"

आतुर बनकर नारायणी बोली, "अरे, नही-नही! इतनी कठोर कसम क्यो खाता है। मुझे तुझ पर भरोसा है। तभी तो बुलाया है। इतने वडे भवन मे कोई नही जानता कि मै कितनी दुःखी हूँ। और तुझे पता है, नारी के रूप मे मै भी सब औरतो के बराबर हूँ। मेरी भी वैसी ही इच्छा है, वैसे ही विचार है।"

धनिया कुछ खुलने को उद्यत हुआ और बोला, "अम्माजी, मै खूब समझता हूँ। तुम और कुछ पीछे हो, पहले माँ हो। और प्रत्येक माँ का स्वभाव है, अपनी सन्तान की भलाई सोचना। सो, आज वही तो है तुम्हारे मन मे। वह शुभदा बिटिया रानी "

नारायणी एकाएक बोल पडी, "अरे, यह शुभदा मेरे प्राण ले लेगी। मुझे लगता है, मेरी मौत का कारण हो जाएगी।"

धनिया ने कहा, "नही माँजी! बिटियारानी अभी नासमझ है, भोली है। और बैरिस्टर किशोर वह नारी के रूप और धन का लोभी " वह बोला, "चौका-बरतन करनेवाली भानुमती कहती थी कि जमीदार बाबू का नया मेहमान औरत का भूखा है। किसी जवान औरत को भेडिये की तरह घूरता है। हाँ माँजी, भानुमती उसके कमरे से चाय के बर्तन

उठाने गई तो हजरत उसे ऐसे घूरते थे कि जैसे चूहे को बिल्ली घूरती है। भानुमती कहती थी, "नौकरी छूटने का डर न होता तो वह हाथ मे लिया जूठा बर्तन उस बाबू के मुँह पर दे मारती !"

साँस रोककर नारायणी ने बात सुनी तो बोली, "भानुमती को मुझसे कहना था, बताना था।"

धनिया बोला, "माँजी, आपसे सभी डरते है। हम सब गरीब है।"

नारायणी बोली, "अरे, मै क्या किसी का बुरा चाहती हूँ ? जिस तरह मै अपनी शुभदा की खेर मनाती हूं, उसी तरह समाज की प्रत्येक लडकी को अपनी मानती हूँ। भानुमती इस घर का काम करती है तो क्या उसने अपनी आबरू बेच दी है ? इस अर्थ मे शुभदा और वह दोनो बराबर है।"

धनिया ने कहा, "माजी, तुम पुण्या हो। सब नौकर-नौकरानियाँ तुम्हारी बडाई करते है।" वह बोला, "मालकिन, मुझसे जो कुछ कहोगी, वह मै करूँगा। पर यह बताये देता हूँ माजी, यह किशोरबाबू इस घर के पैसे पर और जागीर पर निगाह रखता है। वह शुभदा जीजी को भी पथ-भ्रष्ट करना चाहता है। रानीबिटिया को ढाल बनाकर ही वह तलवार चलानी चाहता है।"

नारायणी ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा, "वह कमीना है, चोर है। उसका मनसूबा क्या इस जिन्दगी मे पूरा हो सकता है, कभी नही !"

धनिया बोला, "मै किशोरबाबू के पास आता-जाता हूँ। एकदिन बातो-बातो मे उनके मुँह से निकल ही पडा, "अरे धनिया, जाल तो डाला है, शिकार फँस गया तो देखना, मै इस घर का सब रग बदल दूँगा।"

सुनकर नारायणी ने कहा, "हूँ।"

धनिया बोला, "किशोरबाबू सिगरेट और शराब मुझसे मँगाते है। प्रसन्न होते है तो कुछ मुझको भी इनाम दे देते है।"

नारायणी बोली, "मै जानती हूँ, तू पूरा शैतान है।"

धनिया ने जल्दी से कहा, "माँजी, ऐसे आदमी से मै जितना घुलू-मिलूँ, उतना ही अच्छा है।"

नारायणी ने कहा, "यह ठीक है, अब जा। कोई और बात मालूम दे तो मुझे बताना।"

धनिया लौट गया। उसी समय पण्डित द्वारिकानाथ वहाँ आये और बोले, "क्यो नारायणी, शुभदा पहाड पर जाने की बात कहती है, भेज दूँ?"

बरबस नारायणी ने पूछा, "किसके साथ?"

पण्डितजी बोले, "किशोर के साथ।"

बात सुनी तो नारायणी जैसे पहाड से नीचे गिर पडी। वह अतिशय मर्माहत बनकर बोली, "मै कहती हूँ, तुम्हारी अक्ल तो नही चली गई? सुनूँ तो, क्या है तुम्हारे मन मे! क्या लडकी का जीवन बरबाद करने पर तुले हो?"

इस बात पर पण्डित द्वारिकानाथ ने जोर का ठहाका मारा, नारायणी को भी चौका दिया।

नारायणी बोली, "तुम्हारे पास पैसा न होता, तो ठीक था।"

वह बोले, "तब तुम पर इतना गोश्त न चढता। यह गले मे पडा सोने का हार भी नही दिखाई देता।"

चिढकर नारायणी बोली, "मुझे यह भी स्वीकार था। उस अवस्था मे शान्त और सुन्दर जीवन तो प्राप्त होता।" उसने कहा, "एक बात कहती हूँ। कान खोलकर सुन लो, शुभदा जयन्त की है, उसी की रहेगी। उसके बगैर इस शुभदा की जिन्दगी नरक रहेगी। वह भले घर की वस्तु है, बाजार की नही बनेगी।"

पण्डित द्वारिकानाथ ने गम्भीर बनकर कहा, "शुभदा अब उस घर नही जाएगी। वह कहती है, मेरा गला घोट दो, पर वहाँ मत भेजो। किशोर इस बात के लिए सहमत है कि वह इस जमीदारी का मैनेजर बनकर सभी काम सम्हाल लेगा।"

विस्फारित बनकर नारायणी बोली, "तो मुझे लगता है, बाप-बेटी ने सभी मार्ग पहले ही से बना लिए है। शुभदा अपनी ससुराल नही जाएगी और किशोर इस जमीदारी का मैनेजर बन जाएगा। वाह-वाह, क्या सिद्ध-साधक की जोडी बना दी है, तुमने! बात तो तुमने पक्की कर ली, तो फिर मुझसे क्या पूछने आये हो।"

पण्डितजी ने कहा, "नही, नही, बात कोई पक्की नही हुई। निर्णय

तुम्हारा होगा। वही मान्य होगा।"

कठोर और सयत स्वर मे नारायणी बोली, "तुम्हारे मन मे जो कुछ है वह अभी इस देश मे नही चलेगा, कम-से-कम मेरे घर मे ना ऐसा नही चलेगा। अच्छा यही है कि किशोर स्वय चला जाए। वह साप है। इस घर की प्रतिष्ठा और सम्पदा को डसना चाहता है। और तुम समझते हो कि वह दो बच्चो की माँ बनी शुभदा के समक्ष अपने को समर्पित करना चाहता है? न, न, वह बात बनाता है। उसे पता है कि इस घर की उत्तराधिकारिणी शुभदा है। तुमने नही सुना तो क्या, मैंने सभी कुछ सुन लिया है। वह तो तालाब मे बसी डालकर मछली फसाने आया है।"

उदास और गम्भीर स्वर मे पण्डित द्वारिकानाथ ने कहा, "मै इतना सब नही जानता। मैंने तो सोचा, हमारी शुभदा दो बच्चो की मा है। अब वह स्वतन्त्र रहना चाहती है तो रहे। किशोर जमीदारी का काम सम्भाल ले तो वह भी यहा रहे। दोनो का मन लग जाएगा। फिर किशोर का विवाह कही करा दिया जाएगा।"

मुँह बनाकर नारायणी बोली, "उसे कौन लडकी देगा? कोई भला घर तो देगा नही। किशोर आवारा है, पूरा गुण्डा है। तुम बुरा मानो तो मानो, मुझे तो उसका यहा रहना अब एक-एक दिन खलता है।"

वहाँ से लौटते हुए पण्डितजी बोले, "जब तुम्हारे मन मे यह बात है तो यही होगा। किशोर चला जाएगा।" यह कहकर वहाँ से चल पडे।

किन्तु नारायणी ने पति की पीठ पर फिर कहा, "मै कहती हूँ कि इस बुढापे मे तो समझ लो कि इस जिन्दगी की असलियत क्या है। औरत की वास्तविकता क्या है। तुमने बेटी पर जितना लाड-प्यार किया, उसी का तो आज यह सब परिणाम निकला दीखता है।

पण्डित द्वारिकानाथ फिर मुड आए और धीर भाव से बोले, "तुम्हारे तो वही पुराने विचार है। तुम्हारे मन मे भय है कि तुम्हारी लडकी "

नारायणी ने तुरन्त आर्त बनकर कहा, "भय नही है, सत्य है। देवता सरीखा पति ठुकराकर तुम्हारी बेटी यहाँ आई है। मैं कहे देती हूँ यदि तुम्हारी शुभदा ने जयन्त से बिगाड कर लिया तो मेरे लिए यह सुख-सम्पदा राख के ढेर से अधिक नही लगेगी। जिस दिन से किशोर इस घर

मे आया हे, नौकर-नौकरानियाँ भी आगे-पीछे बात करने लगे है।"

पण्डितजी ने क्षुब्ध बनकर कहा, "मै नौकरो की बात पर नही जाता। वे छोटे आदमी है, उनके छोटे विचार है।"

नारायणी ने अपने स्वर पर जोर दिया और कहा, "यह तुम्हारा ख्याल है। जो समाज की परम्परा है वह सभी के लिए है। धर्म सभी के लिए है। धनिक आदमी धर्म और विवेक को छोड दे, यह कौनसी पुस्तक मे लिखा है? प्यार से पाली गई बेटी यदि चरित्रभ्रष्ट बनी तो क्या तुम्हारे लिए सन्तोष का विषय हो सकता है, कदापि नही!"

पण्डितजी ने हँसकर कहा, "अच्छा, अच्छा, तुम्हारा आदेश सर्वोपरि रहेगा, मेरा नही!"

नारायणी ने आँखे तरेरी और कहा, "यह मुझसे मत कहो। आदेश तुम्हारा है, मेरा नही। तुम मेरे देवता हो।"

अपने सैडिलो से खटखट करती हुई उसी समय शुभदा वहाँ आ गई। बच्चे भी साथ थे। बच्चे नारायणी से चिपट गए। किन्तु शुभदा उदास और उन्मन बनी माँ के पास बैठ गई।

नारायणी ने बच्चो से कहा, "अरे, ठहरो तो, यह बताओ कहाँ गए थे।" वह शुभदा की ओर देखकर बोली, "और तू उदास है, तेरा मुँह कैसे चढा है?" किन्तु शुभदा मौन रही। बोल नही सकी।

सुधा ने कहा, "नानी, बडी अच्छी तस्वीर देखी थी हमने। गाने भी सुने थे।"

ललित ने कहा, "नानाजी, आज खूब गाने सुने।" उसने बताया, "माताजी तो कुछ बोली नही। आज हँसी भी नही।"

नारायणी ने कहा, "क्यो री, शुभदा! क्या बात आई है तेरे मन मे! कोई नई बात!"

किन्तु शुभदा ने बात टाल दी। वह कमरे की छत की ओर देखने लगी। निश्चय ही उसके मन मे कोई गहरी बात थी, जो उमड-घुमड रही थी।

पण्डित द्वारिकानाथ का ध्यान उस ओर नही गया। उन्होने पत्नी से कहा, "तुम तो कभी सिनेमा देखती नही। देखो तो समझो कि आज के

युग में कितनी उन्नति हुई है, इन पर्दे की तस्वीरों में। तुमने कभी नाटक, नौटंकी देखे होंगे, सिनेमा नहीं।"

विद्रूप भाव में नारायणी ने कहा, "जब बाप-बेटी देखते हैं, तो मुझे क्या देखना। मुझे तो यह दुनिया ही सिनेमा लगती है। मेरे लिए यही अच्छा है। और इस दुनिया का आदमी ही तो उस पर्दे पर नाचता-गाता है।"

बात सुनी तो पण्डितजी ने हँस दिया। तभी उन्होंने सामने बैठी शुभदा की ओर अपना मुँह उठा दिया। उससे कहा, "शुभदा, सिनेमा में आज क्या देखा?"

कठिनाई से शुभदा ने कहा, "आज मेरा मन नहीं लगा। कुछ देख नहीं पाई।"

पिता बोले, "वाह, गई, पैसे खर्च किए और कुछ नहीं देखा।" वह नारायणी से बोले, "इस दुनिया का इन्सान कितना आगे बढ़ गया है, इस प्रकार घर में बैठकर नहीं समझा जा सकता। तुम भी कभी नगर में आया-जाया करो।"

नारायणी ने कहा, "तुम तो पढ़े-लिखे हो, सब-कुछ समझ सकते हो, पर मैं गँवार की बेटी हूँ। मेरे लिए काला अक्षर भैंस बराबर है। पर यह कहे देती हूँ, दुनिया का और ज़िन्दगी का ज्ञान पुस्तकों से नहीं मिलता, ज़िन्दगी की डगर पर चलकर मिलता है। किताब का पढ़नेवाला तो ऊपर-ही-ऊपर तैरता है, गहराई में नहीं उतरता।"

पण्डित द्वारिकानाथ ने कहा, "तुम्हारी बात पते की है।"

और इतनी बात होने पर भी शुभदा फिर भी चुप रही।

नारायणी उसकी ओर देखकर फिर बोली, "अरी, कुछ मुँह से तो कह, शुभदा।"

शुभदा ने एकाएक रोकर कहा, "माँ, मैं कल लौट जाऊँगी!" नारायणी ने एकाएक ममत्व से भर कहा, "पगली कहीं की! तो इसमें रोने की क्या बात!"

उसी समय नौकरानी पत्र लाई और पण्डितजी के सामने रख गई।

नारायणी ने पूछा, "किसका पत्र है?"

शुभदा से पण्डितजी बोले, "जयन्त का लगता है। अक्षर उसीके है।" पत्र पढा। फिर पत्र की अन्तिम पंक्ति सुनाई, जयन्त ने लिखा था—

"मै आपका सेवक हूँ। शुभदा मन बहलाने उस ओर गई है, तो रहे, मेरा काम चलता है। वैसे, इस शका का मै कोई कारण नही देखता कि शुभदा मे और मुझमे कोई मतभेद हो, विचार-विभिन्नता हो। आज के समान सदा ही मुझे इसका आदर करना पडेगा।"

पण्डितजी ने शुभदा की ओर देखा और खिन्न भाव से, विचलन भरे मन से उससे कहा, "शुभदा, इस पत्र को पढ लेना। मैने आजतक तेरी माँ की अधिकाश बातो की उपेक्षा की, परन्तु आज लगता है कि सच, मै अँधेरे मे रहा, तेरी माँ प्रकाश मे रही।"

पैंतीस

शुभदा माँ के कमरे से निकलकर अपने कमरे मे जाकर जयन्त का पत्र पढने लगी। पत्र पढते ही वह कटी डाल की तरह पलग पर गिर पडी। सयोग की बात थी कि तदन्तर ही किशोर वहाँ आया। शुभदा के दोनो बच्चे भी उसके साथ थे। वे बच्चे अब उससे अधिक हिल-मिल गए थे। वहाँ आते ही किशोर ने देखा कि शुभदा आँखो पर बाँह रखे उदास पडी है। इतना देखते ही उसने चाहा कि लौट जाए, परन्तु उसे कुछ कहना था। अत आना ही था उसके पास। वह निकट होकर बोला, "शुभदाजी!"

शुभदा ने आँखो से हाथ हटा लिया। किशोर की ओर उन उदास और पीडा से भरी आँखो को कर दिया। उसी अवस्था मे उसने तडपकर कहा, "आप जाइए, चले जाइए मेरे पास से!"

किशोर गया नही, ढीठ था। वह सहज भाव से बोला, "जाना तो मुझे होगा परन्तु अभियुक्त के रूप मे, क्या अपना अभियोग समझ लेना मेरे लिए उचित न होगा? हँसती हुई आई, तो बार-बार कहती आई

कि मैं भी नायिका बनती। अपने नायक के साथ मैं भी कोई सुन्दर अभिनय करने में समर्थ बनती।"

"ओह! आप अब भी नहीं समझ रहे हैं कि मैं बात करने की स्थिति में नहीं हूँ। मैं आपसे क्षमा माँगती हूँ।" शुभदा ने कहा और फिर मुँह फेर लिया।

किन्तु किशोर सहज में छोड़ने वाला नहीं था। मानो उसने शुभदा की कमजोरी पकड़ ली हो। फिर भी वह कितनी रहस्यमय है, यह जानने की उसे उत्सुकता थी। वह कुर्सी पर बैठ गया और अपने-आप बोला, "अहा! आज भी आसमान में बादल छाए हैं। ठण्डी हवा चल रही है। शुभदा जी, आओ, कुछ देर के लिए बाग में चलें। मैंने कुछ असंगत कहा हो, तो क्षमा करें। लगता है, सिनेमा में कोई बात मुँह से निकली तो उसी पर ...हाँ, मैं अवरुद्ध और अनजान तो हूँ ही।" उसने कहा, "आज माँ का पत्र आया है। मुझे बुलाया है। बोलो, तुम्हें क्या कहना है?"

शुभदा ने मुँह उठाकर कहा, "अच्छा तो है, माँ ने यदि बुलाया है तो आपको यहाँ से जाना ही पड़ेगा?"

अवसर पाते ही किशोर बोला, "किन्तु मैं अब स्वर्ग से नर्क में नहीं जाना चाहता।"

तड़ित बनकर शुभदा ने कहा, "उस स्वर्ग का क्या मोल कि जो अस्थायी हो। जिसका न सिर हो, न पैर हो।"

लेकिन किशोर ने कहा, "स्वर्ग और नर्क की कल्पना तो अपने मन पर आश्रित है, शुभदाजी!"

शुभदा ने कहा, "जी, यह भुलावा है। कह सकती हूँ कि आपके मन की दुर्बलता है। दिखता है, निर्लज्ज आदमी पाप को भी पुण्य मानता है।"

इस समय, निश्चय ही, बाहर आसमान में काले-काले बादल उठ आए थे, ठण्डी हवा चल रही थी। उस हवा से कमरे की वस्तुएँ भी हिल रही थीं। किन्तु किशोर के मुँह पर पसीना था। वह कुरते की जेब से रूमाल निकालकर बार-बार अपने मुँह का पसीना पोंछ रहा था। उसी अवस्था में वह बोला, "तुमने प्रातः क्या कहा था, उसे याद करो, शुभदादेवी!"

शुभदा ने जैसे क्षुब्ध बनकर कहा, "महाशय, मैं क्या याद करूँ? आप

देखते है कि मै इस समय दु खी हूँ। अपने-आप मे कायर और हीन बनी हूँ। आप समझते है कि मेरे पास कुछ है ? 'क्या है मेरे पास ? अब तो मेरा अपनापन भी मेरे पास नही है !"

किशोर बोला, "शुभदा, मैने सुन लिया कि इसी डाक से जयन्तबाबू का पत्र आया है। जरूर, उसी मे कुछ लिखा है। मैने यह सत्य, जीवन के प्रथम चरण मे ही समझ लिया कि पुरुष हमेशा से इस नारी पर शासन करता आया है। यह क्रूर और मदान्ध इन्सान ।"

शुभदा ने कहा, "लेकिन इस नारी को ठौर कहाँ है, भला यह नारी किस अवस्था मे स्वतन्त्र है ? आगे क्या व्यवस्था हो, मै नही जानती, परन्तु अभी तो यही अवस्था है कि नारी को इस नर की इच्छा के अनुरूप चलना है।"

किशोर ने जमीन पर पैर पटका और कहा, "नही-नही, आज का युग पुकार कर रहा है, चेतना और जागरण का मन्त्र दे रहा है कि नारी उठे और अपना स्वत्व पहचाने ! " वह बोला, "शुभदादेवी, वास्तव मे, तुमने अपना महत्व नही समझा। तनिक घर के बाहर निकलकर देखो। दूसरे देशो मे जाओ कि कितना प्रकाश है, नारी कितनी चेतना से भरी और मननशील है ! जीवन का ऐसा कोनसा क्षेत्र है कि जिसमे नारी अग्रणी नही, कार्यरत नही ! और तुम हो कि आज उसी पुराने स्वर मे कराहती हो और कहती हो कि मै भाग्यहीना हूँ।"

खिन्न भाव से शुभदा ने अपने सूखे होठो पर जीभ फेरी और कहा, "किशोरबाबू, आप मेरे मन की आग को न कुरेदे। मैं यह भुलाना नही चाहती कि आप इस घर के पुराने सम्बन्धी है। मुझे ऐसी सीख न दे कि मै अपने साथ तो भूल कर ही बैठूँ, परन्तु अपने बच्चो का अधिकार भी छिना दूँ। मैं इस ससार मे कुछ पाने की यदि इच्छा करती हूँ, तो केवल एक बात, बच्चो का अधिकार इन बच्चो का बाप "

किशोर ने फिर अपने मुँह का पसीना पोछा और कहा, "हॉ-हॉ, यह अधिकार तो तुम्हारा सुरक्षित है। तुम्हे पाना है। इस देश की नारी की यह पुरानी आस्था है।"

शुभदा बोली, "पर यह भाव मै खो चुकी हूँ। प्रात' सिनेमा-हॉल मे

बैठे हुए आपने जिस तरह मेरा हाथ दबाया और अपने मन का उच्छ्वास प्रगट किया, उसे क्या मै भूल सकती हूँ ? पर दोष मेरा है। मै स्वय अपने पथ से विचलित बनी हूँ। मै यदि आपका पत्र पाकर पति के घर से न आती तो क्या आप से इतना सुनने का अवसर पा सकती थी ? सोचा होगा न आपने, यह शुभदा आकांक्षिणी है, भूखी है, अपना सहारा खोकर अन्य सहारे की तलाश मे जाएगी।"

"ओह, शुभदादेवी ! तुमने बहुत कुछ सोचा ! बहुत कह दिया !"

शुभदा ने कहा, "किशोरबाबू, कहा न मैने, यह मेरी विवशता की बात है कि मे आपको अपना अतिथि पाती हूँ। आपने अब तक अपने भ्रमण की जितनी कथाएँ सुनाई, मै अब सोचती हूँ कि उनका अर्थ ही केवल यह था कि नारी अपने जीवन को खेल मानती है। वह जीवन मे खेलना पसन्द करती है। इस देश की परम्परा जीर्ण है, जिसे मानकर यहाँ की नारी स्वत ही अन्धेरे मे पडी सिसक रही है, यही न ! यह है, आपकी शिक्षा !"

किशोर मौन रहा। वह शुभदा के मुँह पर आया क्षोभ देखता रहा।

तभी शुभदा ने कहा, "ऐसी अवस्था मे दुराचार क्या है ? नारी की नग्नता क्या है ? पुरुष उच्छृखल और नग्न है, यह कथा तो मै हमेशा से सुनती आई हूँ। आज आपका जो रूप मैने देखा, मन की जहरीली भावना को पाया, तो मै उसे भी मनुष्य की उद्दण्डता और विवेकहीनता का रूप समझ पाती हूँ। मेरे पति ने एक बार नही, अनेक बार मुझे सुनाया कि आचरणहीन मनुष्य देर तक जीवित नही रह सकता। वह समाज मे जी नही सकता। आपके अनुरूप, योरोप का इन्सान प्रगति अवश्य कर रहा है, परन्तु वह धर्महीन बनकर और नैतिक पतन करके, कब तक जीवित रहेगा, मै नही सोच पाती।"

उसी समय किशोर कुर्सी पर पीछे को पीठ लगाकर बोला, "तो तुम्हारा भी यह ख्याल है। इस देश मे बहुत से आदमियो का है। परन्तु देवीजी, इस देश का नागरिक धर्म-कर्म की बातें तो सदियो से करता आया है। बताओ, इसे मिला क्या है ! क्या पाया है, हमारे देश ने ! केवल भुखमरी, पराधीनता और अयाचित भावना ! कहाँ सन्तुलन है, कहा समता है, हमारे और उन देशो के बीच मे ! मानो आकाश-पाताल का

अन्तर है। एक देश का समाज सजग है, निर्भय है और प्रगति के पथ पर अग्रसर है और एक है यह देश, अन्धकार मे पडा हुआ सिसकता हुआ · जीवन की कठोर साँसे लेता हुआ " वह कुर्सी के हत्थे पर हाथ मार कर बोला, "मुझे खेद है कि मेरा कहा तुम्हे रुचिकर नही लगा। और मेरा इतना कहने का केवल एक ही कारण था, वही आधार भी था। तुमने अपने पत्रो मे सदा ही कहा कि तुम दु खी हो। तुम जीवन के अन्धकार मे डाल दी गई हो। और चाहे मैने यह समझने मे भूल की हो, लेकिन मैने सदा ही तुम्हे अपने समीप पाया। हो सकता है कि यह केवल मेरी भावना हो, जो प्राय धोखा देती है, बेकार सिद्ध होती हे। सचमुच, वही आज मैं पा सका हूँ।"

अतिशय क्षुब्ध भाव मे शुभदा ने कहा, "किशोरजी, निस्सन्देह, भूल मेरी थी। आपने मेरे पत्र सुरक्षित रखे हैं, यह जानकर सुखी हूँ। पर भला क्यो ? किसलिए ? क्या मेरा प्रदर्शन करने के लिए ? मैने स्वय अपना तमाशा बनाया है। आपने आज के चित्र मे नायिका का नख-शिख देखा, अभिनय देखा, परन्तु मैने देखा वह दृश्य कि जिसमे आपकी मनपसद नायिका स्वय अपनी भूल से, इच्छा से, मानस मे भरे दम्भ से, समाज की दृष्टि मे तमाशा बनी थी। वह अपने सुन्दर और भले पति को छोड अपने चहेते के साथ · "

एकाएक किशोर चीख उठा, "शुभदा "

उस अवस्था मे ही शुभदा की आँखे भर आई। वे उसके गालो पर तैर गई। किन्तु उसने उन्हे नही पोछा। अपितु उसने कहा, "किशोरबाबू, आपकी आभारी हूँ कि मुझे एक अच्छा चित्र दिखाया। चाहे आपका उद्देश्य कुछ और रहा हो, जिसे मैने समझ लिया। मैं एक सप्ताह से इस बात को लिये थी कि आपका मन स्वत ही बुद्धि का साथ छोड बैठा है। निश्चय ही कल रात आप मेरे कमरे की तरफ आए थे। रामसुक्खा न बोलता, तो आप हे राम ! भला बताइये तो, वह चौकीदारी करता रामसुक्खा आपको देख पाता, अँधेरे मे आपके सिर पर लाठी मार देता, तो क्या होता। अपराध तो उसका होता नही, पर आपका अन्त हो जाता। उस दिन बाग मे आप जिस तीखी दृष्टि से मुझे देख रहे थे, मेरे बाल, आँखे और होठो की प्रशसा कर रहे थे तो बताइये, आप सरीखे सम्भ्रान्त के लिए क्या

शोभनीय था ? और यह सब किस कारण ? किस अर्थ के लिए ? मेरे इस शरीर को पाने ही के लिए न ! जिसमे अब उल्लास नही, सरस भावना नही, प्रेम नाम के बोल पर समर्पित होने की शक्ति नही, तो भला आप इसमे क्या पाएंगे ! आप सोचते होगे कि शुभदा की छाती के नीचे यौवन है, मोहजाल या मायाजाल है। पर मै साफ कहती हूँ, अपनी छाती खोलकर दिखा सकती हूँ कि उसमे बच्चो के लिए दूध हो सकता है और कुछ नही। यह मेरा पार्थिव शरीर जो क्षणिक है, स्वय निर्मम है, इस पर मेरे बच्चो के पिता का तो अधिकार हो सकता है, किसी और का नही।"

देर की रुकी हुई साँस छोडकर किशोर बोला, "मै समझ गया कि तुम्हारा मन भ्रामक है, हवा के झूले पर झूल रहा है। उसमे कोई स्थिरता नही है।"

विषादभरे ढग से शुभदा मुस्कराई और बोली, "सचमुच ! मेरा मन भ्रमा गया है। मैने जागते मे एक ऐसे स्वप्न की कल्पना की जिसका कोई अर्थ नही था। आपके मन की महत्वाकाक्षा तो समझ मे आती है, पर मैने जो कुछ सोचा, उसकी रूपरेखा आज तक नही दिखाई दी। मै तो निरी जड और पत्थर बन गई। निस्सन्देह, मै भूल गई कि आप जीवन मे दो वस्तुएँ चाहते है—धन और नारी।"

किशोर ने कुर्सी का हत्था जोर से पकड लिया और कहा, "शुभदा, तुम्हे आज क्या हो गया है ! क्या सचमुच "

शुभदा ने तुरन्त ही कहा, "किशोरबाबू, मेरा सिर फिर गया है। मै पागल हो जाना चाहती हूँ। चाहे तो आप भी मेरे मुह पर जोर का तमाचा मारदे। आप अपने लिए क्या धारणा निश्चित करते है, यह आप जाने, पर जिस धन को और नारी को आप इतना महत्व देते है, मेरे बच्चो का पिता उसे नगण्य मानता है। यही उसकी सार्थकता है। आप तो उसके समक्ष कुछ नही है। लीजिये, यह पत्र पढिये। फिर अपने को समझिये।"

किशोर ने पत्र ले लिया और पढा। उसका एक पैराग्राफ था, "आपकी पुत्री मेरी पत्नी है, दो बच्चो की मां है। इसलिए भले ही म उसका आदर न करूँ, परन्तु वह नारी है, सुसस्कृतिक है तो मुझे उसका सम्मान करना ही होगा। नारी को ठगकर, उसे हीन समझकर मै जीवित नही रह सकता।

खिन्न भाव मे द्वारिकानाथ ने कहा, "नही-नही, मैने इस कुल्टा को पैदा किया है, मै ही इसका अन्त कर दूँगा। मै पिस्तौल की एक गोली से मार दूँगा।"

नारायणी ने एकाएक अपना सिर पकडकर कहा, "ओह, मेरे परमात्मा!" उसने कहा, "अब तुमको इसका भी अधिकार नही। तुम यहाँ से चलो। घर सुन रहा है। ये नौकर अपनी कमज़ोरी का बखान करना क्या अच्छा है!"

द्वारिकानाथ ने फिर कुछ नही कहा। वह लौट पडे और जूते की खट-खट करते हुए बडे बैठकखाने मे पहुँच गये। उनके जाते ही नारायणी ने शुभदा के सिर पर हाथ रखा और कहा, "उठ, बेटी! आज यह भी होना था। जिस बाप ने आज तक तुझे कुछ नही कहा, उसने भी आज कह दिया। और यह नही सोचा, जो बात आज चली है, जिसकी जड फैली है, उस विष-बेल को लगाना इन्ही का काम था। बाप ने ही बेटी को इतना सिर पर चढा लिया है।"

छत्तीस

अगले दिन कि प्रात बैरिस्टर किशोर उस घर से प्रस्थान कर गया। किन्तु उस विशाल भवन का वातावरण जब एक दिन पूर्व विषाक्त बना, तो वह दूसरे दिन और अधिक चिन्तनीय हो गया। पिछली रात मे ही शुभदा को बुखार आया, तो वह प्रात. तक इतना तीव्र बना कि वह प्रलाप करने लगी। माता-पिता के सिर पर नई चिन्ता आगई। उसी दिन जयन्त के पास आदमी भेज दिया गया।

किन्तु जयन्त उस समय घर पर नही था। वह जैसे कुछ समय के लिए अज्ञात और अनभिज्ञ रहना चाहता था। उसने स्वत. ही अपना गाँव छोड दिया था। उसके पडौसियो ने समझा था कि वह गाँव से अजना के पास

जाएगा, परन्तु वह वहा भी नही गया। कही दूर गया। उन दिनो अपने सभी परिचितो से अनभिज्ञ रहना उसे रुचिकर था। क्योंकि शुभदा के जाने पर, अनायास, जिस प्रकार की बाते उसे सुनाई गई, वे भले ही, सहानुभूति की सूचक थी, परन्तु उन्ही से जयन्त पीडित बनता, विषम बन जाता। स्थिति यह थी कि वह शुभदा के प्रति जो कुछ सुनता, उससे भी भय खाता, अपने तई अशुभ मानता। शुभदा उसकी पत्नी थी, अतएव, उसी के लिए अशोभनीय बाते सुनना, उसे सुखकर नही लगता था। फिर भी, यह उसने एकान्तरूप मे स्वीकार किया कि शुभदा ने सामाजिक अपराध किया है। वह मन की दुर्बल है। अविवाहित अवस्था मे उसने जिस युवक को पागल बनने और मर जाने के लिए बाध्य किया, वह भले ही, उसका अनजाने मे किया गया कर्म हो, परन्तु विवाहित बनकर, दो बच्चो की माँ होकर भी, वह दूसरे पुरुष का चिन्तन करे, यह नैतिक दृष्टि से न्याय नही कहा जा सकता था। इस प्रसग मे, जयन्त ने अपने-आपको भी दोषी पाया। उसके मन का चोर बार-बार सिर उठाता और उसको सम्बोधित करता, पाप तुम्हारा भी था। तुमने भी अजना का चिन्तन किया। शुभदा के प्रति जो उपेक्षा एक बार तुम्हारे मन मे आकर बैठी, तो वह सदा ही फलती-फूलती रही। तुमने पत्नी के प्रति उदार पक्ष नही अपनाया। दुर्बल नारी को तुमने जिस प्रकार का दण्ड दिया, वह क्या नैतिक दृष्टि से ग्राह्य था! अतएव, उस अवस्था मे जयन्त, बरबस ही, कोलाहल से भर गया। उसका मानसिक सन्तुलन क्षुब्ध हो चुका था। घर से चलते समय उसने दवाखाने का काम कम्पाउण्डर को सौंप दिया और घर का भार हरखू नौकर पर छोड दिया। वह कब लौटेगा, यह भी उसने किसी को निश्चित रूप से नही बताया।

यो घर से चल कर, पर्यटन मे, जयन्त दूर-दूर तक गया। उसके मन मे बार-बार आया कि वह सन्यासी बन जाए, परन्तु इस विचार पर भी वह स्थिर नही था। वह सोचता, सन्यासी बनना आज के युग मे बुद्धि की बात नहीं है। समाज कुछ काम चाहता है। संन्यास लेकर योग का पाठ पढना तो अपना स्वार्थ है, आत्मा का स्वार्थ! लेकिन यह मनुष्य तो सामाजिक प्राणी है, समाज की वस्तु है, तब क्यो न इसे समाज के चरणों

मे अर्पित किया जाए। फलस्वरूप, जयन्त उस मार्ग से विमुख था। उसे यह भी अच्छा नही लगता था कि अजना भिक्षुणी बनी रहे, जीवन की शाश्वत माँग का अनादर करती रहे। उसे जीवन के सभी अगो का अध्ययन करना चाहिए। मानसिकरूप से वह नीरस बन गई है, उदास हो गई है। ऐसे कब तक वह अजना जीवित रहेगी। देर तक नही। जयन्त कहता, अजना जिस आदर्श पर टिकी है, वह दुर्बल है, शकित है। वह कहाँ ठोकर खाये, कहाँ फिसले, जीवन की किस धारा मे उसका प्राण तिरोहित हो जाए, इसका उसे क्या सहज मे पता चल सकता है—कदापि नही!

फलस्वरूप, अपने मन मे उठती हुई भावना को लिए ही जयन्त जब घर से चला, तो अजना के पास नही गया। वह एक अन्य पहाड पर गया। वह स्थान समुद्र तल मे कई हजार फुट ऊँचा था। जयन्त अभी एक सप्ताह ही उस स्थान पर रह सका था कि तभी वहाँ पर भुखमरी और बीमारी का प्रकोप फैला। नि सन्देह जयन्त वहाँ मन की करने पहुँचा था। उसके पुराने मित्र और कालेज के साथी ने उसका आवाहन किया था। वह व्यक्ति उस क्षेत्र का प्रसिद्ध व्यवसायी था। वहाँ पहुँचते ही, जयन्त का यथोचित सत्कार किया गया था।

किन्तु जब जयन्त ने उस क्षेत्र की अवस्था देखी, तो उसका हृदय कोलाहल से पूरित बन गया। उसे लगा कि इस सजे हुए और मागलिक कल्पनाओ से पूरित ससार मे इतनी विषमता क्यो मानव का यह हाहाकार क्यो? फलस्वरूप, वह अपने मन और मस्तिष्क की अवस्था को भूल, समाज के उस वैषम्य पर टिक गया और वह सब ओर से आँखे मूँद उस पीडित मानव-समाज के चरणो मे समर्पित हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि जयन्त न शुभदा की बात पर टिका, न अपने बच्चो की याद कर सका क्योंकि प्रात से रात तक वह कार्यरत रहता। जब बिस्तर पर पडता, तो थका हुआ तुरन्त सो जाता। उस क्षेत्र मे जयन्त ने मुर्दे उठाए, भूखो को भोजन बाँटा और रोगियो को औषध दी। वह डाक्टर तो था ही, परन्तु उस समाज का अन्नदाता भी बन गया। उस समाज का सेवक भगवान

विवाह से पूर्व जयन्त ने अनेक बार कल्पना की थी कि वह मुक्त-भाव

से जनता-जनार्दन का भक्त बनेगा। परन्तु परिस्थितियो के ढाचे मे वह ऐसा ढला कि दूसरी ओर मुड गया। लेकिन जब से वह कैप्टेन रमाकान्त के अस्पताल से लौटा, डाक्टर के रूप मे वहा कुछ समय बिता आया, तो उसके मन प्रदेश मे फिर कोलाहल हुआ, जैसे उसे अपरोक्ष भाव से उद्बोधन प्राप्त हुआ कि वह अपने सकल्प को पूरा करे। फलस्वरूप, अवसर पाकर, उस पर्वतीय स्थान मे आते ही, प्रकृति के उस विराट रूप को देखकर, जयन्त के मन मे फिर भूचाल उठा, मानो किसी दैवी शक्ति ने उसे सकेत दिया हो, हाँ, जयन्त! तुमने सासारिक जीवन का भी उपभोग किया, नारी का सामीप्य पाया, अपने बच्चो को प्यार किया। परन्तु पीडित समाज के ये बच्चे, ये नारियाँ, ये पुरुष भी किसी का आभार पाना चाहते है। उन्हे सहयोग मिले तो यह समाज भी जीवन पाना चाहता हे। सृष्टि का मूर्त्त-रूप

अवसर की बात थी, एक सध्या मे जब जयन्तकुमार इस प्रकार की भावना से अभिप्रेत था, मानसिक उद्वेलन मे फँसा था, तभी उसका मित्र समीप आया और बोला, "जयन्तबाबू, यहा का समाज आपका ऋणी है। आपने बहुत सहयोग दिया, आपने इतना श्रम किया। आपने अपना पैसा भी खर्च किया।"

उस अप्रत्याशित बात को सुन, जयन्त ने कहा, "पैसा नगण्य है, सुधीरबाबू! यह मानव-समाज ममता चाहता हे, प्यार चाहता हे।"

सुधीरबाबू ने कहा, "नि सन्देह, यह अमर सत्य है। यहाँ का समाज इस बात की चर्चा करता है कि आपने पीडितो को जो सहयोग दिया, उसमे पैसे का स्थानीय योग होना चाहिए था। सचमुच, आपने सबको आभारी किया।"

जयन्त ने हँसकर कहा, "मै डाक्टर हूँ तो किसी धनिक का उपचार करके वह धन प्राप्त कर सकता हूँ।"

सुधीरबाबू ने भी हँस दिया और कहा, "धनिक अपने ऊपर अधिक पैसा खर्च करता है।"

जयन्त ने नाराज होकर कहा, "वही पैसे का उपयोग करता है। वह भूल जाता है कि पैसा उसका नही, समाज का है। परन्तु इतना सोचना तो दूर,

वह पैसा जिन श्रमिको के श्रम से उपार्जित किया जाता है, धनिक को भूखा और नगा देखकर किलकिलाता है, अट्टहास करता है।"

"ओह, आपके मन मे तो आग है। जहरीला धुआँ घुट रहा है।"

जयन्त ने कहा, "यह तो होगा ही। मैने समाज की पीडा को, व्यथा को, आँखो से देखा है। भुखमरी की कराह को सुना है।'

सुधीरबाबू ने कहा, ' आपका मिशन पवित्र है, जीवन का लक्ष्य ऊँचा है। नि सन्देह, ऐसा व्यक्ति पुण्यतीर्थ है। आपने कई मास का समय दिया। यहाँ आकर अपने बच्चो को भी स्मरण नही किया। देखिए तो, आपका रूप भी कैसा बन गया है! यह दाढी, सिर के बढे हुए बाल "

सहजभाव से जयन्त मुस्करा दिया, "समय नही मिला। यहाँ आया, तो भगवान ने अधिक काम दे दिया।"

सुधीरबाबू ने कहा, "आपने अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान नही रखा। यहाँ का समाज आपका सार्वजनिक रूप से अभिनन्दन करने की योजना बना रहा है।"

जयन्त ने कहा, "इसकी आवश्यकता नही है। मेरा जो काम था, उसका सम्पादन मैने किया। मै नेता या विशिष्ट व्यक्ति नही हूँ।"

सुधीरबाबू ने सुना और सहज भाव से मुस्करा दिया।

उसीदिन की सन्ध्या मे जयन्त को प्रोफेसर अतुल का पत्र मिला कि शुभदा बीमार है। वह अपने पिता के घर है। उसका रोग असाध्य है। जीवन के कुछ दिन शेष रह गए है। उसी पत्र मे लिखा था कि अजना स्वत शुभदा की सेवा मे लगी है।

कई मास बाद उस अप्रत्याशित समाचार को पाकर जयन्त का माथा ठनक गया। उसने अपने मस्तिष्क मे जितनी योजनाएँ बनाई थी, उन सब पर तुषार पड गया।। जैसे आँधी का तीव्र झोका आया और उसे पलभर में कही-से-कही उडाकर ले गया। अन्यथा, जयन्त के मन मे बात थी कि अब वह एक मिशनरी बनेगा, पूर्णरूप से अपने को समाज के चरणो मे समर्पित कर देगा। वह भले ही सन्यासी बनने की दीक्षा न ले, परन्तु पारिवारिक बन्धनो से मुक्त हो जाएगा। वह अब अपने मानस को प्रणय-भोग की सडी हुई दलदल मे डालकर मारने का प्रयत्न नही करेगा। किन्तु

प्रोफेसर का पत्र क्या आया, जैसे उसकी कल्पनाओ के किले मे ठोकर मार देने मे सफल हो गया। वह किला गिर कर धराशायी हो गया। विमूढ बन-कर जयन्त सोच नही सका कि वह क्या करे। किस कर्तव्य का सम्पादन करे! बलात् उसका अन्तर्मन चीख उठा—हाय! शुभदा बीमार है! वह मौत के मुँह मे है। उसका प्राण छटपटा गया। बच्चे के समान तडप गया।

जयन्त को पता था कि शुभदा मरना नही चाहेगी। वह जीवन चाहती है। उसके पास उमग है, भावना है, जीवन को रखने की चाह है। वह अपने उस नारी-जीवन को सजाना और सुवासित बनाना चाहती है।

अपने पत्र मे प्रोफेसर ने लिखा, "तुम्हारे जीवन का कोई पुण्य हो, तो हो, परन्तु तुमने यह पाप जरूर किया कि शुभदा की सुन्दर काया को मिट्टी का ढेर बना दिया। तुम बाहर न जाते, यो उससे दूर न होते, तो निश्चय ही, उसके मन पर ऐसे पश्चात्ताप का पहाड न टूटता। आज तुमने उसका दिल तोड दिया है। तुमने अपनी सडी हुई दुर्भावना को शुभदा के समक्ष व्यक्त कर दिया कि तुम उससे घृणा करते हो। आखिर क्यो? बोलो, तुमने नई बात क्या की? पुरानी और जर्जरित पुरुष की अह भावना ही इस नारी के समक्ष प्रस्तुत कर दी। मै समझ गया, तुम्हारी शिक्षा-दीक्षा और नवयुग की प्रेरणा पुराने सस्कारो पर विजय नही पा सकी। तुम नही समझ सके, नारी के शरीर की भूख और है, मन की भूख और। निश्चय ही, तुमने समझा होगा कि यह दो बच्चो की मा बनी हुई शुभदा अब भी शरीर की भूखी है, मन की भावनाओ की सृजक नही है। हाय! आदिपुरुष का यह कैसा रोमाचक नाटकीय प्रदर्शन कर दिया, तुमने।"

प्रात हुआ और जयन्त उस पर्वतीय स्थान से अपने सभी सम्बन्ध तोड कर लौट पडा। सुधीरबाबू तथा अन्य सहयोगियो ने उसे दो दिन के लिए और रोकना चाहा, परन्तु वह नही रुका, किसी अवस्था मे भी सहमत नही हुआ। तीसरे दिन वह पण्डित द्वारिकानाथ के घर पहुँच गया। जयन्त को देखते ही, उस बड़े महल मे शोर मच गया कि जयन्तबाबू आ गये है। वह सीधा ही शुभदा के कमरे मे पहुँच गया। वहाँ देखा कि सभी अभिभावक उपस्थित थे। अजना और प्रोफेसर अतुल बैठे थे। जयन्त पलग के पास जाकर शुभदा की ओर झुक गया। वह बोल नही सका। उसका अमल